महामंत्री मा. दत्तोपंत ठेंगडी जी का

उदघाटन - भाषण

आज हमारे लिए यह आनन्द की बात है कि अभ्यासवर्ग की योजना हुयी। पूरा पूरा आयोजन भी हम लोग कर चुके हैं। अखिल भारतीय स्तर पर शिक्षावर्ग आयोजन का यह प्रथम अवसर है। स्थान निर्णय में ऐसा स्थान हो, जहां ध्यान केंद्रित रहे। सब के लिए पूर्णतया सुविधाजनक रहे, इन सब बातों को देखते हुए इसका निर्णय भुसावल के लिए लिया गया। इस निर्णय में भुसावल के लोगों का परिचय, लगन एवं उदारता तथा सद्भावना भी बहुत बडी सहयोगी है। नगर पालिका के सहयोग के अभाव में यह शिक्षावर्ग लगाना भी कठिन था, जिस में यहां की नगर पालिका अध्यक्षा श्रीमती गुलाबबाई शर्मा का भी पूरा सहयोग मिला। स्वागत समिती का काम भी सराहनीय है। हम किन शब्दों में आभार प्रदर्शित करें, यह कठिन है। यहां पारिवारिक भावना से सभी संस्थाएं काम कर रही हैं। 'हिन्दी सेवा मन्डल' इसका ज्वलन्त उदाहरण है। यहां का पारिवारिक वायुमंडल हमारे सामने एक आदर्श रूप में है, जो हम सब का मार्गदर्शन करेगा।

उद्घाटन के निमित्त मुझे यहां खडा किया गया है। हमने भारतीय मजदूर संघ का कार्य शून्य से प्रारंभ किया था। क्षेत्र खाली नहीं था। हम जहां कहीं गए वहां पहले से यूनियनें और नामप्राप्त नेता थे और गुडविल भी थी। हमारे पास न नेता, न प्रसिद्धि और न पैसा। ऐसी विषम परिस्थितियों में बुद्धि व्यवहार कुशलता के कारण काम बढा।

यह काम आवश्यक था इसलिए प्रारम्भ किया। बाजार का यह सिद्धान्त है कि यदि मांग नहीं है तो माल नहीं बिकेगा। यदि माल बिकता है तो मांग थी यह बात स्पष्ट हो जाती है। वह भी एक ऐतिहासिक मांग थी। इसकी पूर्ति के लिए हम इमानदारी से आगे आए। दिल्ली में एक बडे प्रतिष्ठान के उद्योगपति हमेशा कम्युनिस्टों को बढावा देते थे और भारतीय मजदूर संघ के खिलाफ रहते थे। उनसे जब इसका कारण पूछा गया तो

उन्होने कहा कि हमें किसी के सिद्धान्त से प्रयोजन नहीं। हां एक बात जरुर है कम्युनिस्ट व्यवहारकुशल हैं और भारतीय मजदूर संघ बुध्दू। बात सही थी। उद्योगपति को कम्युनिस्टों से व्यवहार करना आसान था। हमारे से खरीददारी करना कठिन।

हम आदर्शवाद को लेकर बढे। काम की आवश्यकता थी। हमारे पास आदर्शवादी लोग थे। पुराने अनुभवशील कार्यकर्ता के अभाव में भी हमने अपने आदर्श के माध्यम से आज तीन लाख से ऊपर की सदस्य संख्या कर लिया है।

हम नेतागिरी बनाने के कारण या 'निगेटिव्ह अॅप्रोच' लेकर नहीं आये हैं। हम दूसरों को खतम करने के लिए भी यहां नहीं आए है। हम 'पॉझिटिव्ह अॅप्रोच' अपनाकर मजदूरहित, उद्योगहित, राष्ट्रहित तीनों एक ही दिशा में जाते हैं—यह अच्छी तरह समझकर आगे आये है, देश रहेगा तो मजदूर का हित होगा, देश डूबेगा तो मजदूर भी डूबेगा यह भावना लेकर तथा मजदूर क्षेत्र में आवश्यकताओं और परंपरा का विचार कर के हम आये। आज की परिस्थिति में भारतियत्व का प्रवेश मजदूरों में कैसे लाया जाय इसका भी प्रयास हमने किया है। सही न्यायपूर्ति करा देने के लिए हम आगे आये। जहां परम्परा और कानून के चौकट में काम करना है वह भी भारतीय मजदूर संघ ने किया। इतने दिनों से चलनेवाले ट्रेड यूनियन आन्दोलन में लोग 'आंतराष्ट्रीय श्रम दिवस' मई दिवस मनाते रहे। हमारा 'राष्ट्रीय श्रम दिवस' कोई होना चाहिये किसी ने विचार ही नहीं किया। जब हमने देखा कि हजारों वर्षों से हमारा मजदूर 'विश्वकर्मा जयन्ती' मनाता चला आ रहा है तो हमने इसे ही 'राष्ट्रीय श्रम दिवस' के रूप में अपनाया और मनाया।

कॉस्ट ऑफ लिव्हिंग इन्डेक्स था। अन्य लोगों ने उसे ठीक कहा। किन्तु सर्वप्रथम हमने कहा यह गलत है। विस्तृत विवरण पेश किया। आज उसी का फल है कि रिकम्पाइलेशन ऑफ इन्डेक्स नम्बर हो रहा है।

वेजेज क्या हो इसका शास्त्रीय आधार या विचार किसी ने नही रखा। भारतीय मजदूर संघ ने कहा सर्वप्रथम न्यूनतम वेतन निश्चित हो फिर विभिन्न कामों का जॉब इव्हॅल्युएशन होना चाहिए और सम्पूर्ण वेतन को महंगाई भत्ते से जोडकर इसका सम्बन्ध वैज्ञानिक आधार पर निकाले गये जीवन निर्देशांक से कर देना चाहिए।

मास्को की आखों से देखने के कारण कम्युनिस्ट मजदूर विरोधी नीति लेकर चल रहे है। भारतीय मजदूर संघ का कोई 'इझम' नहीं है। अब तो सभी इझम आऊट ऑफ डेट हो चुके है। राष्ट्रहित के चौकट पर कोई इझम नहीं है। व्यक्तिगत नेतागिरी, वाद

विशेषसे परे, राजनीति एवं राजनीतिक दलों से स्वतंत्र मजदूरों द्वारा मजदूरों के लिए, मजदूरों के हित में काम करनेवाला संगठन भारतीय मजदूर संघ हैं। कम्युनिस्ट ट्रेड युनियनिज्ज चाहते भी नहीं और न ही वे समाधान चाहते हैं। रक्तिम क्रान्ति की बात मार्क्स ने कहा, जिसे लेनिन ने दुहराया। बाकी ने भी कोई शास्त्रीय आधार नहीं दिया था। वैचारिक नेतृत्व की क्षमता भारतीय मजदूर संघ में है, जो हमारे विचार स्वातंत्र के कारण है।

हमें संकीर्ण कहा गया। इन्टर नेशनल बनना बड़ा आसान है। उत्तरदायित्वहीनता ही इन्टरनेशनिल्जिम है। हम दुनियाके मजजूरों के एक होने की बात कहते हैं। किन्तु पडोस के बिमार बालक का बुखार देखने को थरमामीटर नहीं देते हैं–तो इन्टर नेशनल बात कहां हुयी। जहां कहीं भी नेशनलटी है वहां इंटरनेशनल की बात कहकर आज कम्युनिस्ट दरार डाल रहे है। कम्युनिष्टमें दक्षिणपंथी और वामपन्थी कम्युनिष्ट दो ग्रुप हो गये हैं। एक रामलीला के अवसर पर तो यहां तक देखनेमे आया है कि रामलिला समिती दोनों गुटों में बट गयी और उसी अनुसार भगवान राम का भी बटवारा हुआ। जब कि भगवान राम तो एक है एक दूसेरके राम को झूठ बतलानेवाले कम्युनिष्ट कैसे एकता की बात करते है ? इसीलिए भारतीय मजदूर संघ का स्वागत हुआ। यह महासमिति सारे दिन राष्ट्रीय समस्याओंपर विचार करेगी। राष्ट्रीय आयनीति, राष्ट्रीय उत्पादननीति, राष्ट्रीय वेतन नीति एवं राष्ट्रीय मूल्य नीति तय होनी चाहिए जिसके लिए सभी आर्थिक हित पक्षोंकी एक गोलमेज कान्फ्रेंस बुलाकर चौथीपंचवर्षीय योजना के समय सभी पक्षोंकी बात समझनेकीं आवश्यकता है। इससे एक सर्वस्पर्शी उत्पादन नीति, आयनीति मूल्य नीति एवं वेतन नीति निर्धारित हो सकेगी।

आज देशकी सम्पूर्ण सम्पत्ति ७५ औद्योगिक परिवारों के पास है जिससे सारी अर्थ व्यवस्था असन्तुलित है। असन्तुलित अर्थव्यवस्था को संकुचित किया जाना है। यह मार्ग दर्शन आप दे सकते है, यह हमें विश्वास है। एक परिवार के सदस्य के रूप में हम ५ दिन यहां रह कर नये अस्त्र शस्त्र धारण कर यहांसे जाकर सब काम करेंगे यह हमें विश्वास है।

• • •

कार्यकर्ता शिक्षण वर्ग के प्रथम दिन २७ अक्टुबर १९६८ को भारतीय मजदूर संघ के अखिल भारतीय अध्यक्ष

मा. दादासाहब काम्बले का अभिभाषण

भाइयों ! मैं जानता हूं कि हिन्दी कहनेमें त्राटियां होंगीं किन्तु अन्य किसी भाषा में समझने की कठिनाई का अनुंभव करकेही मैं हिन्दी में बोल रहा हूं, जिसे अधिक लोग समझेंगे। यहां आप विभिन्न प्रान्तसे आए हैं. बंगाल, बिहार, आसाम, आन्ध्र आदि प्रान्त के आप क्यों न हों हम सब एक हैं क्योंकि हमारे यहां प्रान्तियता, जातिवाद एवं भाषावाद नहीं हैं। हम सब जो वैशिष्ठय प्राप्त करना चाहते हैं यह उसका दृष्य है। भारतीय संस्कृति के आधारपर हम एकत्र होना चाहते है। आसेतु हिमाचल एक ही विचारधारा भारतीय मजदूर संघ प्रस्थापित करना चाहता है। दूसरे महासंघ जैसे आई. टी. यू. सी, एच एम एस. आदि है और थीं। पर अपना एक विशेष स्थान है। हमें जो है वह उनमें नही कम्युनिस्ट विचारधारासे मजदूर क्षेत्र खराब हो गया है। आज लाकआउट और हडताल आदि के नारे अलावा और कोई आवाज नहीं आती है। क्या मजदूर को यही मार्ग अपनाना है ? इसपर हमें विचार करना होगा। देश हित सर्वोपरि है। जबतक देशहितकी बात न सोची जाय तबतक देश वैभवशाली न होगा। देशहितका ख्याल करनेवाली संस्था मजदूर क्षेत्रमें नहीं-थीं हम आए है। देशपर आक्रमण होनेपर देशकी समस्या अपनी समस्या समझी जाय। हम इसी भावसे प्रेरित होकर देश प्रथम, फिर मजदूरका विचार करते है।

भारतीय मजदूर संघ की विचारधारा अन्य श्रमिक संघठनोंसे बिल्कुलहि भिन्न है। ऋषियोंका बताया मार्ग जीवनका साफल्य पेट भरनेमें नहीं है। हमें इहलोक तथा परलोक श्रेयस तथा निःश्रेयस दोनोका ख्याल करना होगा तभी जीवन सफल होगा। पेट भरनेके साथ ही देशकाभी ख्याल हम करेंगे केवल मेटिरियलिज्मका नहीं।

विभिन्न राष्ट्र जो उत्पादन करते है विश्व के विनाशकी दृष्टिसे करते हैं अर्थात अणुबम बनानेके लिए २० लाख रुपए लगाते है। इसमे अगडित शक्ति लग रही है। हर देशका वित्त अस्त्र निर्माण में व्यय हो रहा है। अध्यात्मिक दृष्टिकोण आज यदि विश्वके १२४ देश

तथा भौतिक दृष्टीकोण में यदि बदल कर लें तो विश्वका नकशा अर्थ प्रधान भावनासे विश्व का नक्शा नहीं बदलेगा। हम इसी दृष्टीकोणसे कार्य करना चाहते है। भारतीय मजदूर संघका यह 'श्रम-जिज्ञासा-वैशिष्ट्य' है। संपूर्ण जगत को हम 'श्रम-जिज्ञासा' का पाठ पढावेंगें। हम मजदूर जगत को एक 'श्रमवेद' देना चाहते है।

विभिन्न स्मृतियोमें जिसपर विचार किया गया है वही हम श्रम जगत को बताना चाहते है। पुनर्निर्माण का भी यही आधार है। विज्ञानका ख्याल करते समयभि इसी विचारधारा की जरुरत है। भारतीय मजदूर संघ ने यह बोझ अपने कन्धेपर लिया है। इससे राष्ट्र का पुनर्निर्माण होगा तथा देशमें सामाजिक सुस्थिरता प्राप्त होगी।

हमारे कार्यकर्ता लगन से काम करते है ऐसा हमारा विश्वास है। १२ वर्षों में हमारी सदस्य संख्या ३ लाखसे उपर हो गयी जो इस लगन से काम करने का ज्वलन्त उदाहरण है। अब तो हमारी ताकत को ए. आइ. टी. यू. सी. और एच. एम. एस. भी मानते है। कम्युनिस्ट अब हमसे घबराने लगे है। कम्युनिस्टहि मजदूरोंका ख्याल करते है यह विचारधारा जो अबतक सब मजदूरोंके मनमें घर कर गयी थी, अब समाप्त हो रही है। वह यह समझने लगा है कि उसका हितैशी भारतीय मजदूर संघ भी हैं।

मजदूर क्षेत्र में समस्त उपांगोका ध्यान करके जब हम काम करनेमें लग जायेंगे तब हमारा प्रभाव इतना होगा की, अन्य लोग यह मानने को मजबूर होंगे कि भारतीय मजदूर संघ या भारतीयत्व से ही देशका नक्शा बदलेगा।

भारतीय के नाते हम सब एक है। एक सुत्र में बंधकर चलनेवाले है। अध्यक्षसे लेकर छोटा कार्यकर्ता तक सभी एक ही भावनासे चलते हैं। हमारे यहां सब बराबर है। बडप्पन का विचार नहीं. व्यवस्था की दृष्टीसे केवल पद हैं। मजदूर क्षेत्र ठीक चले यह हम सब की भावना है। देशद्रोही भावना समाप्त हो फैक्ट्री अच्छी प्रकारसे चले तथा मजदूरोंको उनका अंश अच्छी प्रकारसे मिले इसी का हम सब एक जुट होकर प्रयास करते है। हम ऐसा वातावरण निर्माण करे कि समूचा देश यह सोंचे कि भारतीय मजदुर संघ समुचय में भारतीयताका पोषक है।

भारतीय मजदूर संघने संघटन के सिद्धांत रुप में $a^2 + b^2$ को न स्वीकार करके $(a + b)^2 = a^2 + b^2 + 2ab$ के सिद्धांत को स्वीकार किया है जिससे उसे 2ab संघ शक्ति के आधारपर चैतन्य शक्ति के रूप में प्राप्त है, जो व्यक्तिगत रूप में नहीं है। इसी चैतन्य शक्ति से समाजका कल्याण होना है। इसी हेतु भारतीय मजदुर संघ सामने आया है।

* * *

स्वागताध्यक्ष श्री. फकीरचन्द जैन का

स्वागतपर भाषण

यह बडे हर्ष का विषय है कि सभी कार्यकर्ता बन्धु दीपावली का त्योहार मनाकर देशके कोने कोने से आज यहां पधारे हैं। हम अपनी ओरसे तथा भुसावलके नागरीकों की ओरसे आपका हार्दिक स्वागत करते है। हम आपका स्वागत तापी का पवित्र स्व. निर्मल जल पिलाकर करेंगे। हमारा नगर भुसावल विविध भाषा भाषी नगर है। यहां केन्द्रीय सरकारकी डीफेन्स फैक्ट्री चलती है तथा भुसावल की आबादी ७५,००० है। यहां पर स्व. श्री लालबहादुर शास्त्री, श्रीमती इंदिरा गांधी, संत तुकडोजी, परमपूज्य श्री गुरुजी आदि महापुरुषोने पधारकर हमें कृतार्थ किया है। हमारे इस. डी. एल. हिन्दी हाइस्कूल का उद्घाटन स्वर्गीय श्री लालबहादुर शास्त्री के कर कमलो द्वारा किया गया है। हमारे दिल में जों जागरिता तथा देश के लिए वफादारी चाहिए जब वह नही रहती है तो हम गलत नेतृत्व में उथल पुथल करते हैं। कारखानेमे आग लगाना, तालाबन्दी और तोडफोड करना इसीके दुष्पपरिणाम है जिससे हमे दूर रहना चाहिए। इतने दिनों की स्वतंत्रता के बावजूद आज भी हम देशभक्ति को नहीं अपना पाए है। इस कार्य में माननीय दत्तोपंत जी ठेंगडी आपका मार्गदर्शन करनेवाले है। सरकार की ओरसे जो उतेजना मजदुरों को मिल रही हैं श्रमिक नेता उसको तोड मरोड़कर श्रमिक आंदोलन की प्रतिष्ठा गिरा रहे है। उत्पादन इससे बढने वाला नहीं है। गत हडताल के कारण लोकशाही डगमगा रही है। प्रान्तवाद जातिवाद जब तक समाप्त नही होगा तब तक रचनात्मक काम नहीं होगा। हमें इसे समाप्त करना होगा। मजदुरों कों राजनीति के दल से दूर रहना चाहिए। कामगार तथा नियोंजकों में सद्भावना के अभाव में उद्योग नष्ट होते जा रहे हैं। आज कर्मचारियोंका नहीं बल्कि नेताओं का स्वागत होता है। हमें कामगारोंका वफादार नेता चाहिए।

भारतीय मजदूर संघ की स्थापना १९५५ मे हुयी। उससे लोगोंको बडी बडी आशाएं है। आज जनमानस हडतालोंसे जो परेशान है वह भारतीय मजदूर संघकी और आशाभरी दृष्टीसे देख रहा है। मालिकों तथा कामगारों के बीच भेद की दीवार खडी है। मेरा विश्वास है कि जनभावनाओंका आदर करके भारतीय मजदूर संघ भेद की दीवार को समाप्त करने सफल होगा।

निर्माण के अभाव में क्वालिटी गिरती जा रही है। मशीनें कामगार के हाथ में होतीं है नियोजकों के हाथमें नहीं। विघटनाकारी तत्वों के प्रभाव में बहा हुआ मजदूर सही रास्तेपर आए इसका हमे प्रयास करना होगा। आपको विस्तृत अनुभव है। मजदूर भाइयों को इसका लाभ हो यही मेरी कामना है। अन्तम मै आप सभी को बधाई देता हूं। हमने एक नियोजक नाते यह स्पष्ट विचार रखा है। मेरी त्रुटियों की ओर आप एक पारिवारिक सदस्य के नाते ध्यान न दें यही मेरा आग्रह है। अन्त मे मै आप सभी कार्यकर्ताओं को पुनः धन्यवाद देता हूँ।

☆ ☆

मा. दत्तोपंत ठेंगडी जी का भाषण

यह महासमितीकी बैठक है।

ऐसा लगा शायद कुछ लोगोंको, यह महासमितीकी बैठक और शिक्षावर्ग दोनोंका अंतर शायद ख्यालमें न आया हो। जो वर्ग है जो आज अभी शुरू होनेवाला है। कल-दिनभर जो कार्य चला महासमितीका था। कल वैसे तो कुछ प्रस्ताव भी पारित हुए जो आजकी परिस्थितीके लिये आवश्यक थे। और प्रदेशशः महासंघशः अपने कार्यका विवरण भी हुआ। यह बात सबके ख्यालमें आयी हुअी है कि हमारा कार्य निश्चित रुपसे बढ रहा है। अपने प्रयासके कारण, हो, परिस्थितीकी अनुकूलताके कारण हो। अन्य संस्थाओंकी कमजोरायोंके कारण हो। या भगवानके आशीर्वादके कारण हो, या सभी कारणोंका फल इस नातेसे हो। किन्तु कार्य बढ रहा है। इस परिस्थितीमें मैं समझता हूँ कि यहाँ बैठे हुवे हम लोगोंने कार्यकी रचनाके विषयमें कुछ गहराईमें जाकर सोचनेकी आवश्यकता है। वैसे, यह भी बात ठीक है कि सबसे नये संघटनके नाते हम सब क्षेत्रमें आये हैं और यह भी बात ठीक है कि सबसे नये संघटनके नाते आते हुए भी हमारा काम बढा है। कुछ कठिनाइयाँ हैं, कुछ विजय भी है–कुछ पराजय भी है। सब तरह की परिस्थितियोंमेंसे हम लोग जा रहे है। तो हम एक बात ठीक तरहसे समझले कि यूनियनके कामोंमें घटना और बढना यह चलता रहता है। और इस दृष्टीसे यदि किसी लढाईमें हमारी विजय हुई हो तो उससे बहुत आनंदित होनेकी आवश्यकता नही। और किसी लढाईमें हमारी पराजय हुई हो तो उसके कारण बहुत दुःखीं होने की भी आवश्यकता नहीं। War and battle लडाई यह एक चीज है युद्ध यह दूसरी बात है। हमें जो जीतना है वह युद्ध जीतना है। और युद्ध जीतना है इसलिये एकेक लडाअी भी हम जीतें यह भी आवश्यक हो जाता है। जरूर हो जाता है। लेकिन लडाइयोंमें हो सकता है कई बार विजय प्राप्त होगी कई बार पराजय प्राप्त होगी। इन सबका जो सर्व साधारण अपना सदस्य है उसके मनपर तो असर होता ही है। एकादबार अपनी विजय हो जायेगी तो वह बडा आनंदित हो जायेगा, आप कभी हार गये तो वह एकदम दुःखी हो जायेगा। कभी उसका आत्मविश्वास बहुत बढ जायेगा, कभी एकदम वह सोचेगा कि हम सब खतम हो गये। खासकर कुछ ऐसी मनोवृत्ती भी हमने

देखी है की इस कोई थोडीसी एकाद मॅाग पूरी हो गयी तो फिर इतना आत्मविश्वास बढ जाना की अब तो कुछनही मास्को पर झंडा लगायेंगे अब बीचमे रुकनेकी कोई आवश्यकता नहीं। समझता है हमारी क्या ताकद है। और–मान लीजिये कि थोडासा 'सेटबॅक' मिल गया, की वह एकदम अपने नेताओंको गाली देते हुये दिखाई देता है, कहता है, आपनेही हमको पिटाया- मरवाया खतम कर दिया, अच्छा होता हम आपके साथ न आते। तो ये दोनों एक्स्ट्रीमस्, जहाँतक सर्व साधारण सदस्य है, उनके अन्दर पाये जाते है। मजदूर क्षेत्रमें तो कभी फूलोंकी माला कभी जूतोंकी माला पडती है। और इस दृष्टीसे सर्वसाधारण सदस्यकी मनस्थिती क्या है, यह एक अलग बात है। किन्तु यहाँ आये हुए हमलोग प्रमुख कार्यकर्ता है। हम लोगोने समझना चाहिये कि युद्ध जीतना यह एक बात है, लडाई जीतना और हारना यह दूसरी बात है। लडाई यदि हम जीतते या परिस्थिति अनुकूल आती, Apportunity आती, तो उसके कारण बहुत हर्ष न रखते हुए हम केवल कॅलक्युलेशन करें, विचार करें, कि इस अवसरका अपना काम बढानेकी दृष्टीसे किस तरह अधिकसे अधिक उपयोग हो सकता है। उसमें हर्षविषादकी कोई बात नहीं। एक लडाई जीत ली या कोई अच्छा अवसर प्राप्त हुआ Apportunity आयी तो इसमें अधिक शान्त चित्तसे विचार करें कि, आजके परिस्थितीके कारण हमारे सर्वसाधारण सदस्य, बाहरकी यूनियनके सदस्य, सर्वसाधारण जनता इनकी जो मनस्थिती है इसमें ज्यादासे ज्यादा काम बढानेके लिये हम क्या कर सकते हैं ! मान लीजिये कि वह लडाई हम हार गये, फिर अपने लोगोंकी भी एक मनस्थिती है, बाहरके लोगों की भी एक दूसरी मनस्थिती है। दोनोंका विचार करते हुए इसमेंसेभी काम बढानेके दृष्टीसे कैसे रास्ता निकाला जा सकता है। याने Difficulty रहें Apportunity रहे। एकके कारण हर्ष नहीं, दूसरेके कारण दुख नहीं। लेकिन दोनोंका उपयोग काम की दृष्टीसे कैसे कीया जा सकता है यही, विचार यहाँ बैठे हुअे हम लोगोंने करना है। याने Apportunity को ही केवल अेक्स्प्लॉइट करना है अैसा नहीं difficulty को भी अेक्स्प्लॉइट कीया जा सकता है। दोनोंको अेक्स्प्लॉइट करते हुए हमें आगे बढना है। दोनों मान लीजिये की हमारे कार्यके माध्यम है। Apportunity भी माध्यम है difficulty भी माध्यम है। और इसके कारण यह भी बात हम समझ लें कि यह जो आनंद और दुःखकी लहर अपने अनुयायियोंमें समय समयपर आती है उसका परिणाम हमारे मनपर न हो। मानो नेताओंके मनपरभी और कार्यकर्ताओंके मनपर भी उसीका असर हुआ, तो फिर वो नेतृत्व नहीं कर सकेंगे। तो हमारा मन स्थिर रहें शान्त चित्तसे हम विचार करें। और हम परिस्थितीमें यह सोचें कि युद्ध जीतना है और लडाइयाँ जीतना इसलिये आवश्यक हैं कि युद्ध जीतनेमें सहाय्यता हो। लेकिन यह भी समझले कि We may loose battles but we have to win the

war. यह भी बात हम ख्यालमें रखें, और इसके कारण कही कुछ सेट बॅक आता है तो उससमय बहूत निराश होनेकी आवश्यकता नहीं। और इस दृष्टीसें हम कार्य करते रहें इसकी आवश्यकता है।

मुझे तो ऐसा लगाता है कि पराजयकी परिस्थितीमें शायद इतनी सावधानीकी आवश्यकता नहीं है जितनी विजयकी स्थितीमें है। क्यों की पराजयकी स्थितीमें आपको जबरदस्तीसे परिथतीयाँ सावधान रखती हैं। हम जानतेही हैं कि पराजय हो रही है हम सावधान न रहेंगे मार खाऐंगें। गफलत हो जाती है, गडबड हो जाती हैं वह विजयकी परिस्थितीमें होतीं है। और इस दृष्टीसे दोनों परिस्थितियोंमें हम लोग समान सावधानी रखें यह आवश्यक हो जाता है। अब हमारा काम बढे, हमारी प्रगती हो यह तो हम सब चाहते ही है।

किन्तु सवाल यह आता है कि भाई प्रगतीका मापदण्ड क्या है? कैसे उसको तोलना? कोई कह सकता है, कि हमने industrial डिसप्यूटस कितने हल किये इसपर उसको नापा जाय! इंडस्ट्रियल डिसप्यूटसमें हम जीत भी सकते हैं हार भी सकते है। दोनों हो सकता है। भगवानने किसीको यह नही लिख दिया कि बेटा हरेकका डिसप्यूट का जीतही करोगे। ऐसा नही। जीत भी सकते हैं हारभी सकते हैं। फिर हम लोगोंने विवरण सुना है हमेशा, उसका विचार करना है। सरकार, जनता, प्रेस सबकी दृष्टीसे उसका महत्व है। वह है मेंबरशिप! इस मेंबरशिपकी दृष्टीसे हम प्रयत्नशील है ही।

किन्तु हम यह भीं बात समझ लें कि जहाँ इंन्डिव्हिजुअल्युनियनका का सम्बन्ध है वहाँ मेम्बरशिप बढ भी सकती है घट भी सकती है। आपने तो यह अनुभव लिया हीं होगा, कि एखादबार आपके कारण बोनस मिलता है तो आपकी मेंबराशिप बढ जायेगी। एखादबार दूसरेके कारण बोनस मिलता है तो अपनी मेंबराशिप घट जाएगी। तो क्या हम समझे कि हमारी प्रगती या हमारी परागती यह हमेशा इतनी एकदम बढनेवाली या एकदम घटनेवाली ऐसीही है। कुछ स्थाइ मापदण्ड, कुछ क्रायटेरिया, जो स्थिर हो, स्थाइ हो, ऐसा भी हमारे प्रगतीका है। या केवल हमेशा घटनेवाली या बढनेवाली मेम्बराशिप कोई हम केवल उसका मापदण्ड मानते है। तो भाई यह जो मापदण्ड है वह सरकारके लिए है। जनता के लिये है। अपना मापदण्ड जो होना चाहिये वह अलग ही इससे होगा। और वह क्या होगा? तो यह मेम्बरशिप बहुत बढे या घट जाय, इन्डास्ट्रियल डिसप्यूटस हम जीतें या हारें यह न होते हुवे, हमारी प्रगति हुई या नही इसका मापदण्ड एकही होगा कि हमारा जगह जगह का वर्किंग ग्रुप बढता है या घटता है। क्वॉंटिटीके हिसाबसे बढता है या घटता हैं। याने नंबर और क्वॉलिटीके नाते घटता है या

बढता है। यही एक स्थायी क्रायटेरिया है। बाकी सब अस्थाई बाते है। हम प्रयत्नशील जरूर रहे कि मेम्बरशिप बढती रहें। इंडस्ट्रिअल डिसप्यूटसमें हमारी जीत हो यह सब हम हमेशा करते रहेंगे लेकिन कोई स्थाई मापदण्ड होगा तो हमारा वर्किंग ग्रुप जो है वह संख्याकी दृष्टीसे कहाँ तक घटता है या बढता है यदी हमारा मापदण्ड है। यह जो वर्किंग ग्रुप है वह गुणात्मक दृष्टीसे कैसा है यह कैसे समझा जा सकता है। आजकल तो और गुणात्मक दृष्टीसे कहाँ तक घटता है या बढता है यह यह अंदाज लगाना भी बडा कठीण हो गया। बाहरके लोगोके लिये. प्रायः लेबर फील्डमें जैसे राजनीतीमें और दूसरे क्षेत्रोंमें अच्छा कार्यकर्ता वह एकही माना जा सकता है जो जोरदार भाषण दे सकता है। भाषण के पहले या भाषण के बाद क्या है यह देखनेका कोई ख्यालही नही। जो अच्छा भाषण देगा उसको अच्छा कार्यकर्ता माना जाएगा। वैसे कार्यकर्ताके गुण क्या रहे क्या नही इसके बारेमें तो बातचित बादमें होगी ही, लेकिन अच्छा कार्यकर्ता किसको समझे इसका सर्व प्रमुख क्रायटेरिया अगर कुछ होगा तो, अपने कार्यके साथ उसकी एकात्मता कितनी, मैं और भारतीय मजदूर संघ, और भारतीय मजदूर संघ और मैं, इस एकात्मताका विचार किसके मनमें है यही सर्वश्रेष्ठ क्रायटेरिया है। हलाँकी बाकी गुणसमुच्चय यह उसका विचार बादमें हो सकता है। लेकिन यहाँ सबसे श्रेष्ठ बात या यदि कुछ होगी तो यह कि भारतीय मजदूर संघके साथ पूर्ण एकात्मता। यह बगैरे आदर्शके नहीं आ सकती। इस तरहसे हमारा हरेक कार्यकर्ता जो वर्किंग ग्रपमें है, वह कितना आदर्शवादी है कितना आयडेंटिफाइड हैं अपने कार्य के साथ उसकी सबसे यह स्वयं हमारी प्रगति श्रेष्ठ कसौटी है। इस विषयमें प्रगति हों। हमारे साथ आनेवाले जो लोग है उनकी प्रगति हो यह हम चाहते है। आदर्शवाद और एकात्मता जहाँ रहती है वहाँ बहुत फरक पड जाता है। मानों उसके अन्दर जितने जितने गुण होंगे उनके फलस्वरूप जितना कार्य करना चाहिये, होना चाहिये उससेभी जादा कार्य वह करता है ऐसा आपको दिखेगा। जो एकात्म नहीं हुआ वह कार्यकर्ता और जो एकात्म हुआ है वह कार्यकर्ता दोनों में बहुत अन्तर दीखेगा। आदमी बडा श्रेष्ठ है बहुत बुद्धिमान है, चालाख है, खुषमनस्क है, सबकुछ है लेकिन कार्यके साथ एकात्म नहीं, उसको डिपेंडेबल कहना बडा कठिन है सबकुछ है लेकिन कार्यके साथ एकात्म नही है, कार्य के अलावा ही अपना व्यक्तित्व कुछ अलग रखता है तो उसको रिलाएबल डिपेंडेबल, विश्वसनीय समझना बडा कठीण है। जो कार्यके साथ पूर्ण एकात्म है, कार्यका सुख याने मेरा सुख, कार्यका दुख याने मेरा दुख, कार्यका सन्मान माने मेरा सम्मान, कार्यका अपमान था मेरा अपमान, इतना आयडेंटिफिकेशन जिसके मनमें है, फिर उसमें गुण कम रहे, उसमें कोई आपत्ती नही, वह कम बुद्धिमान रहे, वक्ता

रहे न रहे, इसकी फिकर नही किन्तु संस्थाकी दृष्टीसे कार्यके दृष्टीसे उसकी डिपेंडिबेलिटी, विश्वसनीयता, यह मौलीक चीज है कोई बहुत अच्छा वक्ता बुद्धिमान है, बहुत चतुर है फिल्ड वर्क भी अच्छा करता है लेकिन कार्यके साथ आइडेंटिफिकेशन नही तो उसकी डिपेंडिबिलिटी कम हो जाएगी। इसलिये हम स्वयं आयडेंटिफाइड हो, कार्यके साथ पूरी तरहस एकात्म हो, और अपने साथियोंको कार्यकर्ताओंको भी हम आयडेंटिफाइड करें। यह बात आवश्यक हो जाती है। जहाँ एकात्मता है वहाँ कार्य करनेका जो ढँग है वह बदल जाता है। हम देखें एक छोटासा उदाहरण, कि भाई यह एक जो संस्था है। उसका मैं कुछ काम कर रहा हूँ, चॅरिटेबल वर्कके नाते कर रहा हूँ यह सोचनेवालेमें और मै याने भारतीय मजदूर संघ हूँ यह सोचकर कार्य करनेवाला इन दोनोंमें बहुत अंतर है। जैसे हम जानते है बडे श्रीमान जो लोग होते है उनके यहाँ बच्चोंको सम्हालनेके लिये आया रखी जाती है। मानोंकुछ महिलाकों रखते है। वह अपने मालिक के बच्चोंको सम्हालती है। ज्यादा पैसा मिले इस इसलिये रखनेकी शायद ज्यादा कोशीस भी करेगी लेकिन जब वह बच्चोंको यहाँ कपडा पहनाती है उसका दिल दूसरी तरफ रहता है। सोचती है कि मेरा बच्चा मेरी झोंपडीमें जो सोया हुआ है उसका इस समय क्या होता होगा। तो यहाँ जो काम करेगा तो आठ घंटे का काम है है ज्यादा काम करूं तो मुझे ओव्हर टाईम चाहिये ये विचार उसके मनमें जरूर आयेंगे। लेकिन अपना बच्चा है तो ओव्हरटाइमका सवाल उसके सामने नही आएगा। बच्चा बीमार होगया रात जागना पडता है। इसलिये ओव्हर टाइम देना चाहिये, नाइट अलाउन्स देना चाहिये ये बात अपने बच्चेकी हिफाजत करतेसमय नही आयेगी। तो यह जो एकात्मता है, इस एकात्मता के साथ कार्य करनेवाला जो कार्यकर्ता और केवल उस आया के समान काम करनेवाला कार्यकर्ता दोनोंमें बडाही अन्तर है। गुणात्मक दृष्टीसे हम यह सोचें कि हम एकात्म होकर आयडेंटिफाइड होकर स्वयं भारतीय मजदूर संघका कार्य करे और लोगोंको इस ढंगसे आगे बढानेकी कोशीस करें। यह एक बात ख्यालमें रखें और दूसरी बात कि इस तरह जो एकात्म हुअे हैं, आदर्शवादी हैं, किसी यूनियनसे दो होंगे, चार होंगे, पाँच होंगे, दस होंगे, परिस्थितीके अनुसार नंबर बढता जाएगा। तो उनका लक्ष एक हो ध्येय एक हो आदर्श एक हो और उन सब लोगोंमे सुसंवादि निर्माण हो यह भी बात हमने ध्यान मे रखना चाहिये। मानों दोनों आदर्शवादी कार्यकर्ता हैं दोनों बहुत बुद्धिमान हैं, लेकिन सुसंवाद नहीं आपसमे पारवारिक भावना नहीं अलग अलग रीतीसे जाना चाहते हैं, तो कार्य नहीं होगा। हम यहाँ जो एक पारवारिक वर्किंग ग्रुप निर्माण करना चाहते हैं वह निर्माण नहीं होगा। तो हमसे अेकात्मता पारस्परिक सुसंवाद, होमिजनटी, हार्मनी रहे। तरहतरहके आदर्शवादी कार्यकर्ताभी तरह तरहके हो सकते हैं।

गुणवत्ता, बुद्धिमानी की बात छोड दीजिये लेकिन स्वभाव की हरेककी अलग अलग हो सकती है किन्तु सब लोगोंके स्वभावकी आपसमे Adjestment हो आदर्श एक होनेके कारण, लक्ष एक होनेके कारण और इतना सुसंवाद कि मानों सब मिलकर एक मन तैयार हुआ है। जब थिंकिंग प्रोसेस चलेगी तो सब कार्यकर्ता मिलकर एक मन है, ऐसी परिस्थिती जब आ जाय, तब हम कहेंगे कि यह वर्किंग ग्रुप अच्छा है। संख्या बढ सकती है किन्तु गुणात्मक दृष्टीसे–कि हरेक कार्यकर्ता आयडेंटिफाइड, आदर्शवादी, एकात्म–और सब कार्यकर्ता पारिवारिक सुसंवाद लेकर और आगे बढते हुए। इसीको कुछ लोगोंने एक नामकरण कीया है मास्टर माइंडग्रुप– ऐसा हो, तो हरेक यूनियनमें इस तरहका मास्टरमाइंडग्रुप निर्माण हो, वह गुणकी और संख्याकी दृष्टीसे बढे। तो यह जो ग्रुप है यही हमारे घटनेका या बढनेका क्रायटेरिया है, कसौटी है। मेंबरशिप कसौटी नहीं। तात्कालिक विजय और पराजय कसौटी नहीं। यह मास्टरमाइंड ग्रुप हमारे बढनेका एकमेव क्रायटेरिया है। और इस दृष्टीसे जहाँ एक तरफ हम बाकी सब बातें करते, कन्सीलिएशन होता होगा निगोशिएशन्स होते होंगे। आर्बिटरेशन है अॅडज्युडीकेशन है। भाषण है सब कुछ है। किन्तु हम ध्यानमें रखें कि ये सब ऊपर जा सकता है नीचे आ सकता है, किन्तु एक बात स्थिररुपसे बढाना है वह याने मास्टरमाइंड ग्रुप वह बढेगा तो आसमान टूट जाएगा तोभी उसको हम सम्हाल सकेंगे। और मास्टर माइंड ग्रुप नहीं बढेगा तो आपको अखिल भारतीय मान्यता मिल जायें या अखिल विश्वकी मान्यता मिल जाय इन अॅबसेन्स ऑफ मास्टर माइंड ग्रुप–आप जादा दिन चलनेवाले नही। यह कार्य चल नही सकता। मास्टर माइंड ग्रुपके आधारपर कार्य चलता है। और इस दृष्टीसे हम असोसिएट जगह जगह जहाँ है न जाने। आपके हरेक कार्यकर्ताके पीछे बहोत काम है इसका मुझे ज्ञान है। और मैं यह जानता हूँ कि चौवीस घंटाभी आपके लिये पर्याप्त नही। कल जैसे हमारे सन्माननीय दादासाहेबने कहा, उन्होनें दूसरे हेतूने कहा कि हमारे यहाँ सब समान है, प्रेसिडेंड और सामान्य सदस्य जब एक जैसे हैं, कार्य व्याप्तताकी दृष्टीसेभी सब एक जैसे हैं। मै जानता हूँ कि जितनी परेशानी मै उठा रहा हूँ दादासाहेब उठाते है उतनीही परेशानी छोटे यूनियनका सेक्रेटरीभी उठाते है और इस दृष्टीसे दोनोंमे कोई अन्तर नहीं। अमाउंट ऑफ वर्क दोनोंमे समान है। टाइप ऑफ वर्क डिफरन्ट है। अमाउंट ऑफ वर्क इक्वल टु ऑल। तो बहुत झंझटे है। हम जानते हैं, भाषणके लिये जाना पडता है, कई लोगोंके साथ बातचित करनी पडती है, जो रुठ गये उनको मनाना पडता है, जो जादा खुष हुए हैं उनको नीचे लानापडता हैं,।

कन्सिलिएशनके लिये जाना पडता है, अर्बिटरेटरके सामने जाना पडता, हजार झंझटे हमारे कार्यकर्ताको सामने है। लेकिन इन सब बातोंको सम्हालते हुए हम अपना ध्यान

इस बात पर केंद्रित करें कि हम कार्यकर्ताओंका ग्रुप किसतरह बना रहे हैं। मैं समझता हुँ यह यदि हुआ, तो फिर जो कुछ भी गडबड होगी। सरकारके दृष्टीसे हमें मान्यता है या नहीं इसकी फिक्र न करते हुवे हम इधर ध्यान केंद्रित करे। हर यूनियनका अपना अपना मास्टर माईंड ग्रुप हो, हर फेडरेशनका स्थानका हरप्रांतका अपना अपना मास्टर माइंड ग्रुप हो। जिसका मतलब यह होगा कि हरेक कार्यकर्ता आदर्शवादीं हो, एकात्म हो, आयडेंटिफाइड हो, और इस तरह के सभी कार्यकर्ताओंका आपसमें इतना सुसंवाद, सामंजस्य पारिवारिक भाव हो कि मानो सब मिलकर एक मन हो गया है। इस तरह का ग्रुप निर्माण करने की हम कोशिस करे। और उसकी संख्या बढानेकी गुणवत्ता बढानेकी कोशिस करें तो स्थायी रूपसे हमारा कार्य बढानेका रास्ता हमने लिया है ऐसा सोचा जाओेगा। बडे आनंद की बात है कि इसी बातको ख्यालमें रखते हुये इसमे सहायता हो इस नाते इस अध्ययन वर्गका आयोजन कीया है। इसी दृष्टीसे अपने बडे भाईने कहा कि एक तरहसे यह जो इस समयकी बातचित है, वह कलके अपने महासमितीके बैठकका समारोह और अध्ययन वर्गका एक तरहसे उद्घाटन इसी रूपमे हैं। इस दृष्टीसे अध्ययन वर्ग हम लोग चलायें। इसका बहुत कुछ लाभ हो सकता है। जानकारीकी दृष्टीसे बाकी सब दृष्टीसे लाभ हो सकता हैं। तो मैं इतनाही कहूँगा कि चार दिनोंमे हम अपना जो मकानका और वहाँ के अपने अपने स्थानका जो वायुमण्डल है वह भूल जायँ, मानों कि जैसे जेलमे आनेकेबाद आदमी सोचता है, कि भाई मकानकी बात सोचकर भी क्या लाभ है? रहना तो यहीं है। तो वैसेही मान लिजिये आपको चार दिन यहाँ रहना है और चार दिन आपको बाते भूलकर यहाँ जो बाते चलती है, चर्चाओ चलती है उतनी हम ख्यालमे रखे और यहाँसे थोडी कुछ जादा जानकारी लेकर हम जाय और यही बात ख्यालमे रखे कि जहाँसे जहाँ हम जानकारी लेकर जाओंगे वहाँ तो आपने यहाँ यह भी बताया है ज्ञानकी परिणति भक्ति नहीं होती है तो यदि हम उस दृष्टीसे जरा अपने हृदय को भीट टोलते रहें, तो इन चार दिनोंमें गुणवत्ताकी दृष्टीसे, सुसंवाद की दृष्टीसे, परिवारिक भावनाकी दृष्टीसे बहुतकुछ प्रगति हम कर सकेंगे ऐसा मेरा विश्वास है।

* *

भुसावल में आयोजित प्रथम कार्यकर्ता शिक्षण वर्ग के अवसर पर दिनांक २८ अक्टूबर ६८ को स्थायी आदेश पर

बाबू रमाशंकर सिंह, अध्यक्ष भारतीय मजदूर संघ, बिहार प्रदेश

व्दारा संक्षिप्त भाषण

Industrial Employment (Standingorders) Act1946 कुछ प्रदेशों को छोड़कर सारे भारत में लागू है। कठिनाइयां यदि ज्ञात हो जाय तो यह सुगम होता है। सन् १९४६ में यह ऐक्ट बना था। यह एक दुधारी तलवार है। Industrial Disputes की भरमार हो जायगी यदि, स्थायी आदेश गलत बने। स्थायी आदेश में कार्य की शर्तें होती हैं। अधिक श्रम शक्ति से अलग शर्तें तय नहीं होती है। १०० आदमी जहां कांम करते है वहां स्टैन्डिग आर्डर बनाना होता था। ६ माह के अन्दर नियोजक ड्राफ्ट स्टैन्डिग आर्डर दे देते हैं पर मामला २, या ३ वर्ष तक चलता है सर्टिफीकेशन की सीमा नहीं होती है। सर्टिफाईंग एस्थॉर्टी स्टेट जुरीडिक्शन में रीजनल लेबर कमिश्नर होता है। १९६१ की यह संशोधित अवस्था है। १९५६ में .सिन्दी में स्टेन्डिग आर्डर का प्रमाणितकर्ता अधिकारी कौन हो केन्द्र का या राज्य का ? इस सम्बन्ध में विवाद उठ खड़ा हुआ। मैनेजमेन्ट द्वारा मामला पटना हायकोर्ट में उठाया गया। यह रिपोर्टेड केस है। इसी समय लॉ मिनिस्ट्री की शिफारिश पर लेबर कमिश्नर के साथ 'रीजनल लेबर कमिश्नर' शब्द भी जोड़ा गया। १९६३ में पुनः संशोधन हुआ जिसके व्दारा टेम्परेरी ॲप्लीकेशन ऑफ मॉडेल स्टैन्डिग आर्डर का प्राविधान हुआ। अभी तक के संशोधनों में कुल तीन संशोधन प्रमुख हैं। पहला "as for as practical it should be inconfirmity with model standing orders" सन ५६ में सर्टीफाइंग ॲथॉर्टि को जस्ट्रीफाइबेल्टी देखने का अधिकार मिला। मॉडिफिकेशन १९५६ तक केवल मालिक ही कर सकते थे। सन १९५६ के संशोधन के व्दारा यह अधिकार हर मजदूर को दे दिया गया। तब मालिकों ने कहा कि मॉडिफिकेशन का अधिकार केवल वर्कमन को ही दिया जाय किन्तु श्रमिक नेताओं ने यूनियन को तथा यूनियन न हो तो

कर्मचारियों द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधि की बात कहा। मॉडेल में अधिक परिवर्तन का अधिकार मालिक को नहीं है। यदि हो तो उसे मॉडीफिकेशन माना जाय यही स्थिति है। सर्टिफाइड स्टैन्डिग ऑर्डर सर्टीफाइड कापी भेजने की तिथि से सातवें दिन लागू हो जायगा ऐसा था जो अत्यन्त ही दोषपूर्ण था। यदि पोस्टल हड़ताल रही तो सात दिन के अन्दर अपील करने का समय भी नहीं मिलता। अपील का समय बाद में २१ दिन और अब ३० दिन हो गया है। वायोलेशन पर पेनल प्रोविजन्स दिए गये हैं। सेक्शन १४ ए में अधिकार मिला है। भारतीय मजदूर संघ की यूनियनें मॉडीफिकेशन कराती हैं। बाकी नहीं के बराबर।

'स्टैन्डिग आर्डर की अधिकृत प्रति होना चाहिए। प्रदीप लैम्प भी इन्जिनियरिंग एसोशिएशन का सदस्य है। वहां पुराने लागू स्टैन्डिग आर्डर्स कभी सर्टीफाय नहीं हुये थे बल्कि वे इंजिनियरिंग एसोशिएशन द्वारा बनाए गये थे। आपत्ति करने पर यह स्थिति स्पष्ट हुई। उन्होने फिर १९४६ में स्टैन्डिग आर्डर प्रमाणित करवाया। सदस्य प्रमाणित नहीं कराते है। ठेकेदार भी १०० से अधिक मजदूर रखते है। रिक्विजिट नम्बर होने पर ड्राफट न देने पर प्राजीक्यूशन के लिए देना चाहिए।

महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश, और मध्यप्रदेश में ५० कर्मचारियों पर स्थायी आदेश होना चाहिए ऐसा प्रविधान है। स्थायी आदेश की भाषा क्षेत्रिय होना चाहिए। यदि ऐसा न हो तो इस में प्रासीक्यूशन किया जा सकता है। अधिक लोग जिस भाषा में बोलते हो उसी भाषा में पत्र लिखा जाय तथा उसी भाषा में स्थायी आदेश होना चाहिए।

अॅप्रन्टिसशिप ऐक्ट से कुछ संघर्ष आया है। अॅप्रन्टिसशिप के सम्बन्ध में जहां पुराने स्थायी आदेश है वहां हमें संशोधन भेजना चाहिए। वर्कमन की परिभाषा १९६१ में स्पष्ट हुयी है। सुपरवाइजर्स पर लागू है। एक बात और यह है कि डिपार्टमेन्टल इनक्वाइरी में इनक्वाइरी की कापी देने का प्रोविजन होना चाहिये।

☆ ☆ ☆

HALF A CENTURY OF LABOUR MOVEMENT IN INDIA.

By

B. K. MUKERJEE.

President:- Bhartiya Railway Mazdoor Sangh.

Trade union movement in India, is about to enter the second half of the first century of its existance. It wil not therefore, be out of place, at this juncture to judge its achievements during the period of half a century of its existance and to plug the holes if any. Whatever may be the causes, trade unions in India have not played their role effectively and efficiently in the economic and political life of the nation. Political slavery for many centuries crushed the economy of the country destryoed the moral and ethical concepts of our people. This gave birth to corruption and selfishness which is shaking the very foundation of our society. We have a plethora of political parties and only few of these political parties honestly want the entire people integrated into a strong nation. Some of the parties draw their inspiration from foreign powers. Though every political party in India declares its Sympathy with workers and though some of these parties even go a step further to declare their party as a working class party, from their activities in the past, the only conclusion that can be drawn is that they are not true to their declaration. As these political parties are more interested in their political gain, they prevent the unity of workers and thereby resist their attempts for collective bargaining [and establishment of workers leadership.

Collective bargaining is the main function of a trade union and negation of the same amounts to liquidation of the organisation whether the trade union caters for workers employed in the public sector such as railways or in the private sector.

Workers in railways, though in the public sector, are in no way happier than workers under any cruel and most primitive type of employer in the private sector. Formation and administration of free trade union for the railway industry is fraught with grave danger and enormous difficulties unknown to any democratic country in the world.

The Railwaymen's section of the International Transport Workers' Federation in its meetings at Rome in June 1966 formulated the following statement on methods of collective bargaining and settlement of disputes in rail transport for their representatives attending the 8th session of the I. L. O. Inland Transport Committee at Geneva in November 1966.

FREEDOM OF ASSOCIATION :-

Employees of railway undertakings, whether publicly or privately owned should, irrespective of their status, be entitled to form and join without previous authorisation and without restriction of occupation, sex, colour race, creed or nationality, trade union organisations of their own choosing.

Such organisations should be granted full autonomy in drawing up their constitution and administrative rules, in organising their administration and activity, and in framing their policies.

Where full and effective protection is not already afforded, appropriate legislation should be enacted to protect the individual worker:-

(a) From discriminatory or punitive measures directed against him at the time of engagement or during tenure of employment for the reason that he is a member, agent or officiat of a trade union;

(b) against coercion with respect to his right to join a trade union.

Where full and efficitive protection is not already afforded, appropriate legislation should be enacted to prohibit on the part of the employer or of the employers' organisation or their agents, all acts designed to :-

(a) promote the formation of trade unions controlled by the employer :

(b) interfere in the formation or administration of a trade union or support it by financial means or otherwise interfere in its control;

(c) refuse to give practical effect to the principals of trade union recognition and collective bargaining.

We may not like international contacts in trade unions but few can dispute and disapprove of the above quoted decision of the Railwaymen's Section of ITF. As collective bargaining is the chief function of a trade union, the principle introduced in the above statement will help them to negotiate collective agreements. Let us examine the role played by the trade unions in the pre-independence era. The contribution made by the trade union movement in the freedom struggle was very much significant. The further historians, while writing about the "Quit India Movement" will surely have to write in golden letters the part played by het workers, All-India Trade Union Congress in its Nagpur Session in 1944 rejected the resolution— Peoples War," introduced by a group of trade unions which would to help Britain, an ally of USSR, to win the war which in other words meant keeping India in perpetual bondage. As AITUC was the only trade union organisation in India at that time, passing of resolution, would have meant rendering the "Quit India" movement into a hollow slogan. Great Britain had a national Government with the Labour Party as a partner and as such it was fully aware of the impact of trade union stand in the struggle. Inspite of their

natural desire to strengthen the imperialist hold in this country, British employers and their Government here were sympathetic towards trade unions. Howevere, after independence we get a quite contrary picture. Hostile policy of the Government has compelled trade unions to accept a dependent status. Political parties in the country seem to favour a trade union movement of thought and action Under foreign rule, trade unions were more powerful and effective and enjoyed due prestige as political domination was almost absent. After independence the growth of trade unions has been enormous but as regards their strength they are absolutely impotent. This strange thing happened because political leaders surrendered all initiative to the government. These trade unions have, therefore, been deprived of the right of collective bargaining. Instead of demanding direct negotiation with employers for settlement of disputes, trade unions accept and even demand the appointment of commission or committee or board consisting of persons, not friendly to workers, for the purpose. Members of these bodies often fail to assess the needs of workers and are generally guided by employers.

Dearness Allowance was first granted in the years 1942, during the Second World War. Workers got it by direct negotiations. After independence however we have a larg number of commissions, boards and committees to resolve disputes over wages and allowances but none of their recommendations have yet satisfied either party to the dispute. Industrial relations in the country, therefore, continues to be most explosive.

Influence of political parties over our trade unions is so deep that even bitter experience of these bodies has failed to guide workers to persue the right course of direct negotiation for collective bargaining. During the past decade and a half, trade unions were persuaded by political parties to depend not on their collectiva bargaining strength but on the mercy of the government and the employers. This made these organisations mere puppets in the hands of political leaders and these organisations became ineffective and corrupt. Trade unions in the past were strong and effective which was, to a large extent, due to the liberal policy of the government.

Trade unions having thus lost their potency to negotiate for collective agreements have found a temporary consolation in the demand for the appointment of a body to resolve disputes. Though acceptance of this process may satisfy the leaders of political parties, it seriously retards progress of the country which a free Trade Union cannot afford to allow.

Even by a cursory reading of the terms of reference for these commissions and boards it will be evident that the scope of these bodies is very limited. The members of these committees, directed by the Government, religiously refuse to base the remuneration on the needs of the worker. Again, the Government often warns these bodies in advance, that payment of adequate wages and allowance to workers stimulates inflationery pressure on the economy and therefore the same must be checked. These bodies are also prevented from making any recommendations to avoid wasteful and unproductive expenditures to reduce such pressure. However, if any recommendation is made to benefit employees even in the private sector the government rejects the same. Unless trade unions are united, as before, and stand on their own strength, exploitation by political parties and the goverment will continue unabated to the detriment of the nation. Trade unions, in India, must therefore launch the required struggle to replace the delaying apparatus commission, boards and committees, by re-establishing their right for collective bargaining which alone will ensure industrial peace and rapid economic growth.

As for industrial development in India, as any other country, it has to seek and secure co-operation and help of other industrially advanced countries. Trade unions in this country, too, must try to reap benefit from experiences of free trade unions in democratic countries. It will, therefore, be unwise and injurious to keep trade unions in India isolated from international trends in labour movement. If our trade unions really want to regain the lost prestige and status they must study the achievements of trade unions in other democratic countries and try to emulate their good traditions. In no other country trade unions are so poor both financially

and physically and so scornfully treated by the Government as in this country. Trade Unions in India must, therefore, adopt and follow the method by which workers in other countries gained their present strengtn and status. "Shram Dan" or free service to trade unions introduced in this country by political leaders to serve their interest is the major factor for this deplorable condition of trade unions to-day. It is not too late yet, for our trade unions to emulate the traditions and conventions created by workers in other countries to establish workers leadership in the society. National interest demands quick economic development and unless free trade unions are fully equipped with the necessary strength, status and resources, our progress cannot be as rapid as desired. Trade Unions must, therefore, take immediate steps to remove the pernicious influence or political parties or of the government and stand on their own legs for negotiating collective agreements with employers as otherwise prosperity of the nation will be delayed.

* * *

CONTOURS OF WAGE POLICY

A. FOR PRICE FACTOR

1) Correct compilation and Maintenance of cost of living Index for different states and Regions.
2) Cause wise break up of Index.
3) Real wages on above basis - Principle real national scarcity te be shared by all.

B. NATIONAL POLICY ON MINIMUM WAGES.

1) Survey of living and working Conditions of labour including quantum and causes of Indebtedness.
2) Survey of economic capacity of industries to arrive at rural and urban minimum.
3) Industries can be suitably grouped and firms or units devided into small, medium and large on basis of working capital, Number of workmen etc.
4) Workers may be divided in to skilled, semi-skilied, unskilied etc.
5) On the above basis statutory minimum wage be prescribed categoriwise, unit wise, Industry wise, rural, urban sectoral, rural minimum, Urban minimum etc.
6) Implementation of statutory minimum must be strict.

7) The first principles of statutory minimum :-

   i) Number indebtedness in existing circumstances.

   ii) Phased policy to reach need-based minimum planning for agriculture, small scale sector etc. to serve this policy and resultant periodic up-gradation of statutory minimum real wage.

8) Minimum should not be bent to be maximum. Therefore, appointment of wage board no bar for collective bargaining or reason to withheld reference to adjudication etc.

9) initiative expected from Inspectorate like shop and establishment.

10) Minimum wage indices to guide monetary quantum of given wages.

11) only dedicated social workers to be exempted. They alone are non-workman with high status.

C. GROWTH IN REAL WAGES.

To be based on productivity. For this purpose productivity indices. Care to be taken that labour - productivity is not all-in-all. Capital productivity more important. Therefore capital deployment to be treated as industrial matter. This is one gate to bring about labourisation (B. M. S. Research unit's finding on sugar, an example of neglect of capitai productivity).

D. FRINGE BENEFITS - COMMUNITY SERVICE PROVIDED BY INDUSTRY.

Social Security – Security provided by the Nation Preferably through National Tripartite.

Allowances are costs incurred for minutes spent on job or remuneration for added skills, responsibility, working conditions etc. for different postings or works in same job cluster. These definitions give shape to break up of total emoluments.

E. TOWARDS NATIONAL WAGE-POLICY :

1. Standardisation of occupational dictionary defining duties and nomenclatures..

2. Centralised Statistical Service to inform on existing wages working conditions all over the country to avoid delay help uniformity,

3. National Policy on wage Differentials and status differantials based on qualities of body. Life mind and soul. The ratio of 1:10 should find its office in first two aspects of labour measurment. Qualities of mind deserve respect. Last is immeasurable.

F. SOCIO – ECONOMIC FACTORS IN WAGE – POLICY :

1. The Income distribution of the industry between Wage Bill Taxation, Development and Consumers.

2. Decision making process in above Income Distribution a Key Factor in formulation of wage-Policy. HAVE labour should have a place.

3. Division between Savings or investment and consumption is not a mere economic phenomena. It is social too wise consumption is investment in Human beings as Isral experience has now proved. i. e. Development without social costs. Secondly nature of investment gives sour to savings. e. g. Public or community investment for full employment can alone command saving. The motivation to give bread to hungry has million fold effects for capital formation than dividends on share–capital. But labour wants to ensure that savings are diverted for full employment. Therefore, special poignancy for demand to give labour place in plan formulation and implementation. Rate of savings a direct factor of investment policy. Not for un-employment by automation but to give work to one who needs.

4. After full employment from one technological equilibrium to higher technological equilibrium. The frictional unemploy-meant to be born by Industrial Family-Not by forced indolence on job but by phased planning. So the capital of Industry to be treated as one pool and capitalist and capital-formation to be treated as distinct things.

5. Capital and Industry to be increasingly owned by labour. Shri Dandekar's formula on distribution of gains by marking workers' shareholders endorsed.

6. Lift to full employment by turning natural resources into economic resources by providing co-operant factors through human agency. Existing Human skills to be the base. Plan models on basis of latest techniques of Econometries which make our idea feasible explained in a broad way. Theory of equi-marginal returns in terms of employments based on size and composition of industrial compled prepounded to take account of incomes policy Price-behaviour and consumer interest. Interest Rate of savings and growth of employment can be determined at terminal conditions of Economatic model

★ ★ ★

ROLE OF TRADE UNIONS IN DIFFERENT PARTS OF THE WORLD

A few High-lights

GENERAL

Modern Trade Union Movement started as a protest organisation to get demands and solve grievances. But as it began to realise that it cannot depend only on Employer or Government as a reserviour against which mere fight can be all-sufficient to get the dues it started entering the second phase of growth like participative or administrative or controlling organ of industry or public life. This created many questions about ownership, principles of income-distribution, decision-making process, socioeconomic set-up, relatiouship between Employees and Government etc. Different countries have tried and are still trying to solve these questions in different fashion. Here are the high-lights. Each contains a lesson or warning for us.

AFRICA.

They have begun disbelieving I. C. F. T. U. and W, F. T. U. for giving of correct guide-lines. It is widely asked - Are not aims of Trade Union and those of Welfare State identical - to up-lift the down-trodden ? Therefore, State and Workers should decide economic plan and employers work it out as an administrative organ. This has created anomalies for want of appreciation of technical knowledge. Real wages of African workers have increased but it is doubted whether it is at the cost of farmers.

THE MIDDLE EAST.

African theory endorsed – but Problems are different. Religious influence against industrialisation. Unions do not know how to get along for want of commitment of people to industrial iife. Hence Trade Union Movement is weak. The law is forcing Unionism e. g. fine for not voting for unionleadership is provided in laws of Egupt. Unions are being forced to participate in Management.

SOUTH—EAST ASIA.

Culture is treated as important. Role of Trade Union vis-a-vis social transfor ation. Good people should hold public office i. e. whose life has grown around Temble and Familism. Whole thinking is on the basis of people's characteristics. Many ethnic groups. with traditional skills. So Trade Union shows great interest in weaving life of workers in family-groups or gives incidental importance to economic matters as one of the instruments of human welfare, Therefore economic porgress is slow and little care is shown for slowness– as against Africa where nations are in a hurry for economic progress.

COMMUNIST BLOC.

China stands for dictatorship of proletariote by Mililary means. Therefore, trade Union abolished as fostering Economism. Workers to live on most minimum needs and prepare to conquer world for Communism. Russia wants prosperity for their own people – as an example of supremacy of Communist system. But are finding State controxled economy cannot bring goods. So increasing resort to incentives and other capitalist techniques. So unit is being shifted to Industry or Firm. But this is giving rise to managerial arrogance. So protest type of trade unionism using stikes is slowly coming up. The dictatorial State has yet to learn to live with these protests as well as system of incentives. No one knows what is meant by real socialistic order. So all types of interpretations, confusion – at best a search. The whole international Communist block is having all colours from Radical Right like Czechoslovakia to Radical Left like Mao. Homogenous thinking in any country – so place of freedom of thought and expression is also a matter for search.

LATIN AMERICA.

A debate between ignorant workers and employers has brought economic stagnation. Expert committees are feeling necessity of middle class organisation to carry on dislogue between economic interest, growth of understanding and bring changes in working life productive to economy. State is trying to promote – but lack of organising ability and experience in self – government is thwarting growth of institutional frame–work for national life. So much dis–organisation and little push to economic and social life.

WESTERN DEMOCRACIES.

U. S. A. accepts capitalism. Prerogatives of Capital or Management and Labour defined. Everything by collective bargaining. No demand for participation. Co-operation for productivity. Government inter vention minimum – in public interest when life is in danger by strike in Public utilities. Strong non–political unions. Strikes considered legitimate as wrestling. Through continuous prosperity workers becoming shareholders.

In France Participation is respected by Government and Employers. Communists are trying to discredit. So tussel between silent public opinion and vociferous and militans trade unionism is being forced to the forefront. Government is going ahead with schemes like profit–sharing etc. A sea–saw of French mind is going on of which recent upsurge was one index.

England is still experimenting with consultation and participation. On Labour Government coming to power accommodation with realities of economic situation is becoming a painful process. Therefore a joint statement of intent on productivity, prices and incomes came in to regulate wage increase. But then bargaining shifted to unit level and hold of Central Labour Organisation weakened. So the Donovian Commission has this year recommended a pattern of local agreements in place of national agreements. This is considered to be a step that may shake–up present Union frame–work. Realities faced at higher level may be forced downwards. Britain is in turmoil and search for socio-economic frame–work–Nationalisation of Industry-being no more considered as respectable.

Scandinavian Countries are ahead of the continent. Because Trade Union has a well-equipped technical wing. In Sweden workers education classes concentrate on teaching economic and technical problems of concerned industry. They insist on full information. Evaluate decisions and put forward workable propositions based on knowledge. Result is wide-spread enlightenment and prosperity. Sweden has achieved almost highest wages through this process of consultative Unionism-not accepting participation but extremely sophisticated approach. It is perhaps the only strike-free society in the world.

In west Germany hard work earned for trade unions a high high respectability. So people gave to workers right of co-determination and co-decision. Workers are taken as subjects of industrial enterprise and not objects. Everybody is workman-one can opt for Civil code and become non-workman. Therefore, competent labour side.

PECULIAR COUNTRIES—

MEXICO— The first country where workers brought revolution (1910). Organic social structure-one party based on Sectoral unit level composite constitution. Therefore, no necessity felt of second party. Decision making by informal multi-way communication. Constitutiodal right to strike-considered as normal friction. In emergency Government declares that State of strike does not exist. Emergency administration replaces normal management. Dispute solved in Government presence. Irresponsible attempt for national strike for unjustified demands curbed with full force. Country has prospered. Development of formal law by slow process. The nation feels that the system is ideal and only danger corruption.

JAPAN—Peopie against Trade Unionism. Management paternalistic. Plannig based on traditinal skill and smallscale Sector. Workers loyal, disciplined and hard-worked. Nation realised that unless good wages are given market cannot be built for produce. All nation prospers together is an economic reality. No national organisation. But Industry-wise cooperative trade unionism emerging as a family type association. Managements also foot marriage bills-mix up for

day–to–day entertainment. Worker once entering always ticks to industry and is never dismissed. A typical Asian Family.

YUGOSLAVIA : Workers manage all industries–including Railways Accounting by economic units. Income distribution of industry decided with regional Trade Union and regional peoples bodies for broad items like taxation, development, wage bill and consumer benefit. Much technical effort to achieve equal wage for equal work. But stress of this factur as well as development of finance is felt acutely. Even strikes on these issues. Upper House of bicameral legislation elected on functional basis-representation contribution of industry to National Income. Job Evaluation and productivity given great importance.

ISRAEL : Patriotism a key note. Trade–unionist is Prime Minister. Trade Unions fully involved in formulation and inmplementation of national plan through innumerable committees at all levels. Employers bureaucrats, technocrats regarded as executors. Wages and consumption considered as investment in human beings encouraging them to unfold their infinite potentialties. The growth pattern has forced economists to rethink their economic concepts. All interest groups taking each other as patriots. Do wide consultatiou for National prosperity on pragmatic lines and so a unique economy which had to pay no Social costs for developing Industry and Defence. Labour Productivity increasing by bounds due to character and organisation.

:————:

LABOUR LEGISLATION

Analysis of Legislation.

An analytical study of the legislation over the past hundred years reveals a positive shift in Legal & Social thinking on the law of employment.

We find that the earliest attempt to 'regulate' employment consisted of enactments, such as, the Workmen's Breach of Contract Act of 1859 and Employers and Workmen's (Disputes) Act of 1860 which rendered workmen liable to penal consequences under the Indian Penal Code 1860, for breach of contract. Trade Union was considered to be a criminal conspiracy. In a suit against Madras Textile Labour Union, the High Court of of Madras held that to form Trade Unions, amounted to being parties to an illegal conspiracy.

Juristic ideas of Workers' rights have undergone a revolutionary change and it is now universally accepted that labour is longer a commodity and that the legislation is essential to protect and promote the health, moral and welfare of the employees, suffering from unequal bargaining power and exploitation by unscrupulous and avaricious employers. The Tribunals have been empowered to redraw and modify the contracts of employment. The Industrial Law has increasingly tampered individual right by social duty.

Growth of Labour Legislation.

The recommendations of the Royal Commission on Labour popularly known as the Whitley Commission and the conventions of the International Labour Organisation have largely contributed towards growth of industrial law in India.

As the result of the recommendations of the Royal Commissions, which was set up in 1929 and which made its report in 1931, as many as 19 labour enactments were passed during the year 1932-37 by the Central and Provincial Legislatures to implement the Commission's suggestions.

– LABOUR ENACTMENTS. –

There are on the Statute Book about 108 enactments, both Central and State. These enactments can be divided into the ollowing heads :-

1)	Conditions of Service and Employment.	44
2)	Industrial Relations	14
3)	Social Security Legislation ..	21
4)	Wages	9
5)	Safety and Labour Welfare ..	12
6)	Holidays	7
7)	Statistics.	1

In spite of so many enactments, the Welfare of the Workers has not been adequately promoted or protected for the following *main reasons* :-

1) Inadequate, untrained and powerless enforcement machinery.
2) Lack of cheap, speedy and simple remedy.
3) Cumbersome procedure for prosecution.
4) Negligible fines and compensation.

PROPOSED AMEENDMENTS.

Some of the important amendments amongst various others are as follows :

(1) Industrial Disputes Act :

(a) Discretionary powers of Govt. to refer the dispute should be done away with.

(b) Section 2 (p) of the Act should exclude the setlement directly arrived at with the workers,

(c) Re-employment under Sec. 25-H should be in original post on original wages with same service conditions.

(d) Lay-off compensation must be paid by every employer, irrespective of number of employees he employs.

(e) In case of discharge or dismissal, the worker should have the remedy of direct approach to adjudication machinery, vested with full powers to admit fresh evidence, to decide reasonableness of quantum of punishment and to grant compensation in addition to reinstatement with full back wages.

(f) The retrenchment should be defined as termination of employment except by way of punishment or retirement.

(g) If the conditions in Section 25-F for retrenchment are not fulfilled, the workmen should be deemed to be in employment.

(h) The Govt. should be empowered to reduce the operation of settlement, as it is in the case of awards.

(i) Section 9-A should be deleted. The service conditions can be changed only by settlement or an award.

(2) Standing Orders Act :-

(a) It should be made applicable to all industries and establishment wherein 20 or more workmen are employed or were employed on any day in the preceding 12 months.

(b) The provision for discharge simpliciater should be deleted.

(3) Employees' State Insurance :-

a) Rate of various benefits should be raised to full wages

b) State must contribute towards the E. S. I. Scheme.

c) Corporation must invest reasonable Percentage of its reserve fund in housing schemes.

(4) Minimum Wages Act :-

Minimum Wages Act must provide for linking of wages to consumers price index number so as to provide 100 ·/. neutralisation.

(5) Payment of Bonus Act :-

a) It should be made applicable to all workers, irrespective of character of employer.

b) Development rebate and Super profits Tax should not be be allowed as a prior charge.

c) In the cases of partnership firm, only firm tax should be allowed

d) Establishment not covered by Bonus Act must pay bonus according to L. A. T. formula.

e) Time limit should be prescribed for declaration of bonus, along with detailed calculation .

f) The burden of proving correctness of profit and loss account and balance sheet must lie on the empolyer.

g) Every worker should be entitled to Bonus, even if he is dissmissed for any reason.

h) Every worker should be entitled to the Benefit of Provident Fund, Gratuity, Sick leave, Casual leave, Sunday-Holiday working allowance and Night duty Allowance.

(6) The gratuity should be made payable to the nominee of the deceased employee.

(7) Income Tax-

a) Entire amount of gratuiy and Provident Fund paid to the worker should be exempt from Tax.

b) Contribution to Provident Fund, E.S. I. Scheme or any other Statutory Scheme must be exempted.

(8) Criminal Laws : Section 506 of Indian Penal Code dealing with punishment for intimidation and Sec. 107 of Criminal Procidure Code dealing with Security for keeping the peace should not be applied to industrial field and Trade Union activities.

(9) COMPANIES ACT AND INSOLVENCY ACT: Sec. 530 of the Companies Act and Sec. 49 of presidency Town Insolvency Act should be amended so as to grant priority to entire amount of wages over the debts, other than Govt. dues.

CODIFICATION OF LABOUR LAWS

Codification of all Labour Laws with one executive machinery for its administration and one judicial machinery for adjudication is essential for speedy dispensation of justice and proper enforcement of Laws :-

The codification of labour laws should be brought about by porviding for different chapters on the following subjects :

1. Definitions.
2. Trade Unions and Recognition.
3. Law on payment of wages.
4. Various claims and benefits such as retrenchment compensation, lay off, gratuity, overtime etc.
5. Conditions of work.
6. Conditions of service.
7. Law on apprentices.
8. Law on Statistics.
9. Law on Industrial Disputes (including strikes).
10. Authorities under the code and procedure, powers and duties of Authorities.
11. Intergrated Social Security Scheme.
12. Penalty and offences.
13. Miscellaneous.

Certain Important Suggestions :

1. The important expressions like 'Industry' 'Employers' 'Employee', 'Wages' and 'Industrial Dispute' should be made comprehensive and uniformly defined.

2. Labour Prosecutors must be appointed to represent organised labour, if approached by individual amployee and organised labour, if recommended by labour officers. They should have powers to institute the proceedings for trial of any offence punishable under the code.

3. Labour Court shall deal with all individual cases and trial of the offenders on prosecution. Technical Tribunal shall deal with the technical matter and industrial Tribunals with all other matters.

4. Any employee can directly approach the Labour Officers, the Recovery Offices, Labour Prosecutors and the Labour court as the case may be. Referece to Industrial Tribunal or Technical Tribunal may be made jointly by the workmen and Employer directly or through Labour Officers, who shall be bound to transfer every dispute for adjudication to the said Tribunals in case of failure to settle the dispute, without any intervention of the Govt. Any employee, Trade Union or Labour prosecutor can institute the proceedings in the Labour Court for Trial of any offence punishable under the Code.

The reasonable time limit shoud be statutorily prescribed for disposal of any matter by verious authorities, taking into consideration the nature of industrial matters.

The Tribunal or Arbitrator shall grant retrospective effect to their awards, at least from the date of joint reference or from the date of transfer of the dispute for adjudication by the Labour Officers.

5. For recovery of wages, the following provisions should be made :-

(i) Recovery Officers should be appoited to recover the wages on the aplication made by a workman.

(ii) Compulsory payment of interest at the minimum rate of 1½% per month on the unpaid amount from the due date.

(iii) Penalty of amount equivalent to 2% of the unpaid wages for every month.

(iv) If wages are not paid within 15 days of notice, Recovery Officers should be empowered to release the unpaid wages along with interest, penalty, compensation and costs by one or more of the following modes :-

a) by attachment and misale of movable or immoveble property;

b) by arrest of the defaulting employer and his detention in prison;

c) by appointing a receiver for the management of defaulting employer's property,

d) by recovery from the debtor of the defaulting employer,

(v) The habitual breach of the Law should be listed as Cognisable offence and punishment of imprisonment should be provided.

(vi) No appeal or write petition against the order of the Recovery Officer or Payment of Wages court or Industrial Tribunal or Technical should be admitted unless and until the employer has deposited the entire amount, payable to the workmen by virtue of the impugned order or award, in the court and the original receipt of the same is attached with the petition or memorandum of appeal.

(vii) On admission of the appeal or writ petition agaisc the award, which directs the employer to enhance the wages, the employer shall be required to deposit in the court every month the entire amount of enhanced wages payable to the workmen under the award, till the final diposal of the appeal or petition.

(viii) Any strike for the purpose of recovery of wages shall be legal and justified and the defaulting employer shall pay the full wages for the entire period of such strike.

7. A separate Board comprising of known personalities in the field of religion be constituted in every State to deal with the cases of employees–priestly and otherwise–of all religious institutions within the State. Even separate Boards may be set up for Institutions of defferent religions.

8. So far as protection of trade union law is concerned, Associations or pensioners ex-servicemen should be brought at par with the unions or associations of which they were entitled to become members while in active service.

9. It is our considered view that In a country like India, the Labour Policy must take cognisance of the plight of the self–employed artisans and craftsmen as well as the Industrial workers. The Ministry of Labour & Employment should have a separate department under it to safeguard the interests and look after the welfare of these self–employed craftsmen and artisans who, according to BMS, constitute the **Vishwakarma Sector**. The department should conduct artwise and craftwise census of this sector. It should possess complete information regarding their credit facilities; sources and pyices of their raw material; their prerent process of manufacture and the results of the research work to be conducted by the Ministry for their benefit.

LABOUR PSYCHOLOGY

I) Need For Psychological Approch :—

a) We are dealing with men who have feelings, emotions' altitudes, behaviour etc.

b) to achive emotional integration.

c) to command loyalty.

d) to overcome successfully the unfavourable circumstancess psychological approach is a must.

2) Individual Versus Group Attitude :

a) Attitude of an individual will not be the when acting in group.

b) Factors determinig group psychology — historical, social traditional, tempermental etc.

Attitudes forms the opinion. Some facts with different attitudes will give rise to different opinions.

A) Attitudes are not always logical and are even contradictory yet we can not ignore them.

B) Well forming a trade union the study of group psychology is recessary. Workers should be made to feel (a) the necessity of building a gruop (b) security in the group (c) merge their individualstics.

C) Charter of Demands may raise the following problems.

(a) neglect of cetagory (b) Favoritism of a categery.

D) Settlements do not satisfy all. Tactfully prepare the workers pschologically to accept the terms of the settlement.

(3) ADJUDICATION: The problem of waiving intrest. The problems arising out of delay in proceedings are to be tackled in adjudication

(4) **STRIKE** –(a) keeping up morale and tempo during strikes, (b) safty against rumars and misunderstanding (c) Problem of withdrawing the strike.

5) TECHNICAL APPROACH.

a) democratic consultation.

b) clear and open working plans.

c) avoiding frustration.

d) Not to rely too much on artistical and unrealistic methods to rouse the emotions.

f) To prepare the workers during strike and strengthen for (i) a long drawn out struggle (ii) suffering (iii) chance of total failure.

The need to maintain faith, sincerities and open mindness and confidance to change the attitude is grate.

6) Honesty of purpose should be transperent – should not give room for suspension.

7) Creating group leader – personal contact and rttention.

8) Making worke B.M.S. minded keeping a high and noble idea before workers will come to our help in dealing with psychological a vagaries of the workers.

★ ☆

मा क्र्स वा द

❊ मा. दत्तोपंत ठेंगडी

हमारा एक भावात्मक दृष्टिकोन है और यह दृष्टिकोन है कि भारतीयताके आधारपर पुनर्रचना हो। जब हम भारतीयताके आधारपर पुनर्रचनाका विचार करते हैं तो स्वाभाविक रुपसे इसके प्रतिकूल जितनी भी बातें होंगी, सिद्धात होंगे, जो विचार होंगे, उनका विरोध हमारे द्वारा होता है। इसके कारण कभी कभी गलतफहमी भी होती है। यह भारतीय मझदूर संघ क्यों पैदा हुआ? तो केवल कम्युनिस्टोंका विरोध करनेके लिये पैदा हुआ ऐसा भी सोचनेवाले लोग हैं। अब यह बात तो सत्य नहीं। हम किसीका विरोध करनेके लिये निर्माण नहीं हुए। हम तो अपने समाजकी पुनर्रचना करनेकी दृष्टीसे, उसका एक महत्त्वपूर्ण अंग इस नाते मजदूर क्षेत्रकी रचना करनेके लिये आगे बढे हैं। फिर भी विरोध होता है। जैसे कि किसी कमरेमें अंधेरा हो और वहाँ यदि हमने अपना दिया जलाया, तो हम तो कोई नारा नहीं देते की अंधेरेने कमरेमेंसे हटना चाहिये किन्तु साधारण परिणामके रुपमें जैसेही हमारा दिया जल जाता है। अंधेरा हट जाता है। तो यह सोचा जा सकता है, की भाई ये अंधेरेका विरोध करनेवाले लोग हैं। इस अर्थमें यदि देखें तो हम विरोधक हैं। अपना भावात्मक पॉझिटिव्ह काम करते हुअे भी, क्यों कि उसके प्रतिकुल, विरोधी विचार रचनाअें आज काम कर रही है। हम अपनी पुनर्रचना करते करते स्वाभाविक रुपसे उनको पीछे हटानेका काम करना पडेगा। ऐसे जो विचार है उनमें प्रमुख विचार याने मार्क्सने दिया हुआ विचार है उनके विचारोंके विषयमें हमारी भावनाअें इस तरहकी प्रतिकूल क्यों? यह समझ लेना भी बडा आवश्यक है। क्या हम मार्क्सवादके प्रतिकुल केवल इसलिये हैं कि वह राष्ट्रद्रोहका प्रचार करता है? कम्युनिझमके कारण राष्ट्रद्रोह फैलाता है यह बात साफही है। उदाहरणके लिये ही केवल बताया जाय

तो दूसरे महायुद्धके समय जैसेही हिटलरकी फौज फ्रान्समें घुस गयी तो चूँकी हिटलर और स्टॅलिनका उस समय समझौता था फान्सके डिफेन्स इंडस्ट्रिओंमें काम करनेवाली कम्युनिस्टोंकी युनियनोंने अपने मातृभूमीके विरोधमें जाते हुअे आक्रमक हिटलरकी फौजोंका स्वागत किया। कुछ समय के बाद जैसेही अमरिका और रुस का समझौता हो गया, रुसके विषयमें अमरिकाके मनमें कोई संदेह न रहे इस दृष्टीसे स्वयं अपने नेता कहनेवाले कम्युनिस्ट पार्टीके अमरिकाके प्रमुख बावडर साहबने ऐसी घोषणा की कि 'कॅपिटल हॅब एव्हरी राइट टु मोनॉपोलाइज इटसेलफ' अब कोई मजदूर नेता यह कहे ऐसी कोई कल्पना की जा सकती है क्या? किन्तु यह कहा। क्यों कि अपनेही देशके मजदूरोंका विरोध करनेमें यदि उसके कारण कम्युनिझमका सेंटर प्रसन्न होता है तो कोई आपत्ती नही यह भावना थी। हमारे देशमें भी १९४२ के समय सारी जनता स्वातंत्र्य संग्राममें जुटी हुई थी और चूँकी रुस और ग्रेट ब्रिटनका समझौता हो गया था यहाँके कम्युनिस्टोंने ग्रेट ब्रिटनके युद्धको पीपल्स वॉर घोषित करते हुअे स्वातंत्र्य संग्रामके पीठमें छुरा घुसानेका काम कीया। यह हम जानते हैं चीनी आक्रमणके समय यह आक्रमण है या नही और अगर होगा तो उनका हमारे ऊपर है या हमारा उनके ऊपर है यह भी चर्चा जिन लोगोंने चलाई उनके राष्ट्रद्रोहिताके विषयमें और कुछ कॉमेंट्स् करनेकी आवश्यकता नहीं। किन्तु क्या वह राष्ट्रद्रोही है इसीलिये हम उनका विरोध करें?

दूसरा विचार आता है। हम सब लोग जानते हैं, कि कम्युनिझम ट्रेड युनियनके भी विरोधी है। वह मजदूरोंके भी विरोधमें है। यहाँ हमारे कुछ भोलेभाले लोग भलेहि समझते हो कि भाई मजदूरोंका कॉज याने कम्युनिझम! वास्तवमें यह बात नहीं यह सब लोग जानते हैं। परसों मैंने जैसे निर्देश कीया था-कार्लमार्क्सने स्पष्ट रूपसे यह लीखा है कि 'जेन्युइन' ट्रेड युनियनको नहीं चलने देना चाहिये। क्योंकि हमारा उद्देश है अन्तिम कम्युनिस्ट क्रांति। यह तभी हो सकता है जब मजदूर भूका रहेगा, प्यासा रहेगा, असन्तुष्ट रहेगा तभी तो वह क्रांतीके लिये मरनेकी तैयारी करेगा। जेन्युइन ट्रेड युनियनके द्वारा उसकी जो तात्कालिन भौतिक आवश्यकताअें हैं उनकी पूर्ती होती है, और जिनकी आवश्यकताओंकी पूर्ति होती हैं वे फिर हमारी क्रांतीके लिये मरनेको क्यों तैयार होंगे? इस दृष्टिसे जैसे हर संस्था में कम्युनिटोंने घुसना चाहिये चाहे ट्रेड यूनियन हो या भजन मंडल हो और उसको अपने पार्टी के माध्यम के नाते उपयोग में लाना चाहिये-वैसे ट्रेड यूनियन में जरुर घुस जाइये, इनफिल्ट्रेड कीजिये इसको डॉमिनेट करने का प्रयास कीजिये! किन्तु वह सही ट्रेड यूनियनिझमके आधारपर नहीं चलती यहभी देखीये। और उसके द्वारा असन्तुष्ट मजदूरोंको भडकानेका काम कीया जायेगा यह देखिये यह स्पष्ट बात

कार्ल मार्क्सने कहा है। इसीको आगे बढाते हुअे लेनिनने स्पष्ट रूपसे कहा कि भाई पार्टीके लिये स्कूल ऑफ कम्युनिझमके नाते हमें यूनियम में घुसना है। फिर जो कम्युनिस्ट नही है उनके खिलाफ झूटा प्रचार करो, गलत बातें कहो, लोगोंको मिसलीड करो इत्यादी सारी बातें लेफ्ट इन कम्युनिझम नामके किताबमें आपको पढनेको मिलेगी। उनकी अच्छाई,इतनीही है कि जो उनके मनमें था उन्होने ब्लॅक ॲन्ड व्हाईटमें लिख दिया। तो इस तरहसे ट्रेड युनियनके विषयमें कम्युनिस्टोंकी धारणा है! आब जो लोक समझते हैं कि ट्रेड यूनियन उनका सही हत्यार हैं वह गलत है! उलटा कहा जा सकता है कि जहाँ जहाँ ट्रेड युनिॲनिझम पहलेसे आया वहाँ कम्युनिझम नही आ सका। वैसे मार्क्सने कहा था कि जहाँ इंडस्ट्रीलायझेशन जादा हो इसके कारण इंडस्टीअल वर्कर्स की संख्या जादा हो, वहाँ कम्युनिस्ट क्रांती पहले होगी! तीन देश इस तरहके थे जर्मनी, ग्रेट ब्रीटन, अमेरिका! किन्तु तीनों देशोंमें अभितक क्रांती नहीं आयी! और क्रांती पिछडे हुअे देशोंमें आयी! कहा चायना कहीं रुस! मानों यह मार्क्सके भविष्यवाणीके प्रतिकूल बात हुअी। और इसका कारण अगर कुछ होगा तो ट्रेड युनियन और को-ऑपेरेटिव्ह ये दो आन्दोलन जर्मनी ग्रेटब्रीटन और अमेरिकामें बध्दमूल हुअे थे। तो ट्रेड यूनिॲनिझम और कोऑपरेटिव्ह आन्दोलन पहलेसे जहाँ अच्छा चलता है वहाँ कम्युनिझम नही आ सकता है, यह बात स्पष्ट है। जहाँ कम्युनिझम आया मानों रुस और चायना वहाँ ट्रेड युनिॲनिझम नहीं था यह भी आपको देखनेके लिये मिलेगा। कोई बडी औद्योगिक मजदूरोंकी संख्या नहीं थी, रूस और चायनाका उन दीनोंमें बडा इंडस्ट्रियलायझेशन नहीं हुआ था, और युनियन्सके आधारपर क्रांती हुअी एसा कहनेकेलिये कोई गुंजाइश नहीं थी। क्रांतीके बाद भी कम्युनिस्ट देशोंमें ट्रेड युनॅनिझम पनप रहा ऐसा नहीं दीखता। उलटे यही दृष्य दीखता है कि ट्रेड युनॅनिझमको खतम करनेका प्रयास चल रहा। रूसमें ट्रेड युनियनको आब कोअी भी स्वातंत्र्य नहीं–अपने पदाधिकारियोंका स्वयं चुनाव करनेका स्वातंत्र्य नहीं। पार्टीकी ओरसे जो संकेत आयेगा उसीके अनुसार पदाधिकारियोंको चुनना पडता है। हमारे यहा बँक कर्मचारी खिलाफ आंदोलन चला रहे है। हमने कम्युनिस्ट भाईओंको कहा कि भाई आपको आंदोलन चलानेका कोई अधिकार नही वह तो हमे ही हैं। आपको अधिकार नहीं इसलिये कि आपके देशोंमें, चाहे वह मातृदेश रहे या पितृदेश रहे रूस रहे या चायना रहे तो आपके देशोंमें फॉटी... के समकक्ष ऐसा कोई अधिकार मजदूरोंको नहीं। रूसके भी और चायनाके भी बँक कर्मचारी उस तरहका डेमोनस्ट्रेशन नहीं कर सकते, जिसको ३६ ए डी. के द्वारा प्रोहिबिड किया गया है। रुसमें हम जानते हैं कि कम्युनिस्ट क्रांतीके पश्चात मजदूरोंने लगबग प्रतिसाल बिद्रोह किया, लाखोंकी संख्यामें उनको मारा गया। हम लोग यह जानते हैं मजदुरोंको स्ट्राइक करनेका कोई स्वातंत्र्य नहीं। अपनी माँगके लिये कलेक्टिव्ह बार्गेनिंगके लिये कोई प्रेशर टेक्टिक्स का स्वातंत्र्य नहीं। सरकार

और मजदूरके बीचमें लियासन नातेही यूनियनको काम करना पडता है। माने सरकारकी जो प्लॅनिंग होगी उसको कार्यान्वित कारखानेकी दृष्टीसे यूनियनके पदाधिकारियोंका उपयोग होता है। मुझे स्मरण है कि अभीके हमारे दौरेमें हमलोग ताश्कंद गये थे। वहाँ लेनिन कलेक्टिव्ह फार्मपर हमको ले गये। तो वहाँ हमने चेअरमन साबको पूछा कि साहब आप यह बताइये कि आप चेअरमन बने कैसे? यूवेभर इलेक्टेड, और सिलेक्टेड और अपॉइंटेड और नॉमिनेटेड–ऑर व्हॉट! तो उन्होंने कहा इलेक्टेड। हमने कहा, भाई किसने आपको इलेक्ट कीया? उन्होने कहा हमारे फार्मपर यह १६०० फार्मर्स हैं उन्होंने हमको इलेक्ट किया। फिर आधा घंटा इधर उधरकी बातें की फिर धीरेसे पूछा कि यहाँ कुछ ट्रेड यूनियन्सभी चलती हैं? बोले हाँ हाँ। यहाँके फार्मर्स की यूनियन हैं। तो हमने कहा, यूनियनके पदाधिकारी जो है उनका चुनाव कौन करता है? वे भूल गये थे कि आधे घंटेके पहले हमने क्या कहा था! बोले हमारे फार्मर्स! तो फिर हमने पूछा कि क्या इसका मतलब यह होता है कि मॅनेजमेंटके पर्सनलका चुनाव करनेवाला जो इलेक्टोरेट हैं वह और ट्रेड यूनियनके पदाधिकारियोंका चुनाव करनेवाला इलेक्टोरेट दोनों आयडेन्टिकल हैं? तो उसमेंसे वह कोई जादा रीगल और नहीं कर सका? तो वास्तवमें कोई स्वातंत्र्य नहीं और यूरोपमें भी जहाँ आज मजदूरोंका शासन हैं वहाँ मजदूरोंने भी अपनी इच्छा से इन शासनोंका स्वागत नहीं कीया। उलटा हम देखते हैं कि हंगेरी में ईस्ट जर्मनी में लडाइयाँ हुओ, वहाँके किसानोंने, मजदूरोंने कम्युनिस्टोंके खिलाफ लडाइयाँ, की हाँ! यह बात ठीक है कि रशियन टॅक्स ॲन्ड रशियन बुलेटस वेअर मोअर पॉवरफुल! और आजभी वहाँ कोई बडी स्वस्थता है ऐसा दिखाई नहीं देता। चायना की तो बातही छोड दीजिये। चायना में जेन्युइन ट्रेड युनॅनिझम अब न चले इसलिये कम्युनिस्टोंने भरसक प्रयास कीये, वहाँ ट्रेड यूनियनके नेताओंने कम्युनिस्ट शासकोंका विरोध किया फलस्वरुप दंड साल पहले उन्होने ऑल चायना ट्रेड यूनियन्सको डिझॉल्व कर दिया। और झझटसे मुक्त हो गये। माने इस तहरसे अन्टी लेबर पॉलिसीज को लेकर कम्युनिझम चल रहा है यह बात स्पष्ट है। तो क्या हम इसीके लिये उसका विरोध कर रहे है? यह बात ठीक है कि वह अन्टी नेशन है, यह बात ठीक है कि वह ॲन्टी लेबर है किन्तु केवल इसीलिये हम विरोध नहीं कर रहे हैं। विरोध जो हमारा है वह इसीलिये है कि कि उसके द्वारा समाजकी धारणा नही हो सकती। चाहे हमारा समाज रहे रूसका समाज रहे, चायनाका समाज रहे जहाँ वहाँ मनुष्योंका समाज है उसकी धारणा इसके द्वारा नही हो सकती। हम थोडा सोचे, बहुत जादा गहराईमें न जाते हुओ भी - की उनके सिद्धांतोंका आधार क्या है? मटीरिॲलिझम है। भौतिकतावाद है। अब मटीरिॲलिझमका मतलब मैंने आपको बताया कि सारा अस्तित्व जो निकला है वह मॅटरसे निकला है, और मन वगैरे जो बात है, बुद्धी वगैरे जो बात है यह कोओ बेसिक फंडॅमाटल चीज नहीं है।

माइंड इज ओन्ली ए सुपर स्ट्रक्चर ऑफ मॅटर और जो कुछ भी है मॅटर है, इस आधारपर सारी फिलॉसॉफी निर्माण हुओ है। अब हम लोग जानते हैं कि मटीरिॲलिझम हमारे लिये तो बिलकुलही नया नहीं है। हमारे देशमें स्पिरीच्युअॅलिझमकी बात तो बहुत चलती है। इसलिये लोग मानते है कि हमे मटीरिऑलिझम का पता नहीं। गल्त बात है। वास्तवमें मटीरिरिऑलिझमका प्रारंभही हिन्दुस्थानमें हुआ। पाश्चिमात्य जगतमें तो २००० वर्ष पहले डेमॉक्रॉटस नामका जो एक ग्रीक तत्ववेत्ता हो गये उन्होने मटीरिअॅलिझमका प्रारंभ कीया। किन्तु हमारे यहाँ तो बिलकुल प्राचीन कालमें बृहस्पतीने मटीरिॲलिझमका पहला सूत्र कहा है जो सूत्र सुप्रसिद्ध है– ‘ असतो सत् अजायत ’–अनस्तित्वसे अस्तित्व आया-और ऑफ नॉन ॲक्झिस्टंन्स इमर्जड अेक्झिस्टन्स–इस प्रकारका एक बडीही धृष्टताकी बात कही और उसके बाद धीरे धीरे मटीरिॲलिस्टिक फिलॉसाफीके बडे बडे श्रेष्ठ लोग तैयार हुअे, उन्होंने प्रचार किया। उनके अन्तीम आचार्य चार्वाक बडेही प्रसिद्ध है. और आजके जो प्रोग्रेसिव्ह हमारे कम्युनिस्ट लोग, हमारे धर्म और उसके खिलाफ बोलते है, उनसे कम बोलनेवाले तो चर्वाक नहीं थे। कितने अश्रद्धामय थे इसका भी उदाहरण देना हो तो १।२ उदाहरण दूँगा चार्वाकिने कहा, कि भाई ये जो सारे धर्म और वगैरेह बात बोलते हैं झूट है। उन्होंने कहा कि “ न स्वर्ग नापवर्गोवा नवात्मा पारमार्थिकाः नैव वर्णाश्रमादीनाम् क्रियाश्च फलदायिका” यहाँ स्वर्ग नही है, अपवर्ग नही है कोई यहाँसे ऊपर आत्मा है यह बात भी गलत है। और यह जो वर्ण बोलते हैं आश्रम बोलते हैं, धर्म बोलते हैं; इससे कोईभी फल प्राप्त होनेवाला नहीं है। श्राद्धके समय जो पिण्डदान करते हैं उनके बारेमें कहा, यदि यहाँ पिण्ड देनेसे पितर स्वर्गमें तृप्त हो जाते है, तो ब्राम्हण लोगोंने ऊपर सेकंड स्टरीपर बैठना चाहिये हम यहाँ उनको नैवद्य देते हैं, पिण्डदान करते है; उनको वहाँसेही तृप्त होना चाहिये यह कहा, चूँकि बली देनेके कारण यदि पशू स्वर्गमें जाता है, और यज्ञ करनेवाले लोगोंको पशूको स्वर्गमें भेजनेकी इतनी जल्दी है तो वही जल्दी अपने पिताजीके बारेमें क्यों नहीं दिखाते ? तो उन्होने कहा कि ‘ स्वपिता-यजमानेन तत्र कस्मान न हिंसते ’–माने इस तरहसे, उन्होंने यहाँतक कहा कि आप वेद वगैरह क्या बोलते हैं ! ‘ त्रय वेदस्य कर्तारः ’ तीन लोगोंने वेद बनाया ! भाई कौन ? धूर्त, भण्ड, निशाचराः ! ऐसा बोला ! माने यह सब कहनेवाले लोग अपने यहाँ थे। यह कोई आजके प्रोग्रेसिव्ह लोगोंकी ठेकेदारी नहीं है कि वोही कहे। यह पहलेभी कहा गया। इसका एक बडा सिस्टिमॅटिक सायन्स निर्माण हुआ जिसको लोकायतशास्त्र कहा गया। जिसका सूत्र है ‘ लोकायतमेवशास्त्रम् ’ यही सायन्टिफिक है बाकी सब अन् सायन्टिफिक है। और इसकी विशेषता क्या ? ‘ प्रत्यक्षमेव प्रमाणम् ’ जो प्रत्यक्ष है वही प्रमाण है, ‘ अनुमानम् अप्रमाणम् ’ अनुमानसे जो बोलते हैं कि भगवान् है; नहीं है वगैरे सारी चर्चा जो चलती है वह अप्रमाण है ! बडा एक

अच्छा सायन्स मटीरिॲलिझमका अपने यहाँ निर्माण हुआ। अब यदि वह चला नहीं इसका मतलब यही है कि 'इन फ्री ॲन्ड फेअर बॅटल, मटीरिॲलिझम वॉज डिफीटेड'। तो हमारे लिये यह कोई नयी चीज नहीं है। किन्तु कोई कहेगा कि भाई भारतीयताका जब नाम लेते हैं तो भाई आप ॲन्टि मटीरिॲलिस्ट है। तो भाई हम ॲन्टीमटीरिॲलिस्ट नहीं। ॲकॅडॅमिक ओपिनियनके नाते कोई मटीरिॲलिझमको लेकर चलेगा हमें कोई आपत्ती नहीं। क्योंकि हमारे यहाँ तो विचार स्वातंत्र्य है। मानो जितने षडदर्शन हैं वो भी सभी कोई आस्तिकतावादी हैं ऐसी बात नहीं। बडे प्रसिद्ध आचार्य जो 'कणाद' थे उनके विषयमें तो प्रसिद्ध है कि वे सायन्टिफिक ॲनॉलॉजी करते करते ॲटम तक पहूँचे। ॲटमका ॲनॅलिसीस वे कर नही पाये। तो ही उनको मृत्यू आयी। मृत्यूके पहले पत्नीने कहा, कि भाई सारे जीवनमें तो भगवानका विरोध किया अब मृत्यूकी वेला आ गयी हैं, अब तो कमसेकम भगवान का नाम लेकर स्वर्गमें जाइये! तो उन्होंने कहा, भगवान का मुझे तो पता नहीं, मैं उसका कैसे नाम लूं? तो 'किल्वः किल्वः' कहते हुअे उनकी मृत्यू हुअी! किल्वः याने ॲटम्स। अब इससे अधिक सायन्टिफिक थिंकिंग, मैं नहीं समझता दूसरे कहीं हो सकती है। तो इस तरहके लोग थे जिन्हें हमने आचार्य कहा! अब भगवान बुद्ध थे, उन्होने कहा भाई भगवान है। नहीं, ईश्वर है, नहीं इस झंझटमें मैं जाताही नहीं! प्रॅक्टिकल क्या क्या करना है इतनाही बताउंगा। उनकोभी हम भगवान मानते हैं। श्रेष्ठ मानते हैं। तो इस तरहसे मटीरिॲलिझमको एक अपना ॲकॅडॅमिक ओपीनिअनके नाते व्यक्तीने रखने में कोई आपत्ती नहीं। किन्तु मटीरिॲलिझमको यदि कोई समाजरचनाका आधार बनाएँ तो हम उसका विरोध करते हैं। व्यक्तिगत ओपीनिअनके नाते विरोध नहीं करते। यहाँ मटीरिॲलिस्ट बनने का पूरा स्वातंत्र्य है। आप हिंदुस्थानमें कुछभी बन सकते हैं। और सब कुछ बनने के बाद भी आप भारतीय ही हैं और कुछभी नहीं। तो सबको विचार स्वातंत्र्य है, लेकिन कोई यदि आग्रह करेगा कि समाजरचना चाहे हिन्दुस्थानकी हो, चाहे रुसकी हो मटीरिॲलिझमके आधारपरही हो सकती है–तो फिर उसका विरोध करना आवश्यक हो जाता है। क्यों की यह समाजकी धारणाका सवाल है।

अब हम यह सोचें कि वास्तवमें मटीरिॲलिझमके आधारपर समाचरचना हो सकती है क्या? और स्वयं मार्क्सनेभी अपने सामने जो लक्ष्य, जो टार्जेट्स् जो उद्देश रखे थे वे पूरे हो सकते हैं क्या? हम उदाहरणे के तौरपर इसका विचार करें। जहाँ मटीरिॲलिझम आ जाता है वहाँ 'मटीरिॲलिस्टिक व्हॅल्यूज ऑफ लाइफ' आ जाती हैं। भौतिक जीवनमूल्य आ जाते हैं। मानो यह सोचा जाता है, जैसा मार्क्सने सोचा, कि मनुष्य यह आर्थिक प्राणी है। मॅन इंज ॲन इकॉनॉमिक ब्रीइंग! और कुछ भी नही! आर्थिक

प्राणी है। माइंड इज ए सुपरस्ट्रक्चर ऑफ मॅटर। इस दृष्टीसे जो विचार है, भावना है साहित्य है, कला है, रिलिजन है, एथिक्स है, यह सारा मॅटरका सुपरस्ट्रक्चर है। जैसे विशिष्ट कॉम्बिनेशनमे यदि कुछ पदार्थ आ जाते हैं तो फर्मेंटेशन होता है। तो फर्मेंटेशन इटसेल्फ इज नॉट अे फंडामेंटल थिंग। कुछ कॉम्बिनेशनके कारण, फंडामेंटलके कौम्बिनेशनके कारण फर्मेंटेशन हो गया। वैसे मॅटरके जो अणू हैं उनके विशिष्ट कॉम्बिनेशन्सके कारण आपके मनमें कोई कविता आ जाएगी, कोई सायन्टिफिक इन्व्हेन्शन्स आ जाएगा किन्तु जो कुछ भी है मॅटर है, एसा यदि सोचा जाय, तो मनुष्य केवल भौतिक प्राणी है, आर्थिक प्राणी है यह मानना पडेगा। बाकी कुछ नहीं। इमोशनल बीइंग नहीं, इंटलेक्च्युअल बीइंग नहीं, स्पिरीच्युअल बीइंग नहीं, बाकी कुछ भी नहीं, नथिंग बट इकॉनॉमिक बीइंग। और फिर इस दृष्टीसे इतिहासका उन्होंने इन्टर्प्रिटेशन किया। कहा कि इतिहास जो कुछ भी हुआ है वह सारा मटीरिअल कन्सीडरेशन्स के कारण हुआ। जो कुछ भी इतिहास हो भौतिक घटनाओंके कारणही हुआ है। और फिर जीवनमूल्यभी भौतिकताके कारणही आ जाते हैं। तो भाई मामूली बात का भी विचार करें तो यह सबकुछ ख्याल में आ सकता है। बहुत बडे सिद्धांत की ओर जाने की कोई आवश्यकता नहीं। अब यदि हमने कहा कि मटीरिअॅलिझम सही है या गलत है इसका निर्णय करने का ठेका हमने नहीं लिया। वह बडे विद्वान लोगोंका काम है – जैसेकी कल मैंने आपको बताया। कि यद्यपि मार्क्सने न्यूटनके फिजिकल सायन्स के आधारपर मॅटर–को फंडॅमेंटल माना तो भि जैसेही आइनस्टाइनने यह खोज की कि मॅटर अेनर्जीमें परिणत हो सकता है, अेनर्जी मॅटरमें परिणत हो सकती है, दोनों इन्टर कन्व्हर्टेबल हैं, तो इसके कारण फंडॅमेंटल ऑफ मॅटर इज लॉस्ट! और सायन्स आज मटीरिअॅलिझमको स्वीकार नहीं करता। किन्तु हम आज इस झंझटमें जाते नहीं क्यों कि हम न न्यूटन हैं न आनइस्टाइन! हम इतना कहेंगे कि भाई जो विद्वान लोग हैं, वे अपनी लडाई लडते रहें हमें कुछ करना नहीं। आप मटीरिअॅलिस्ट हैं याँ नहीं इसके बारेमें हमे संशय थोडा ही लेना है? इन्डीव्हिज्युअली आप मटीरिअॅलिस्ट चाहे तो हो सकते हैं। किंतु यह आग्रह हम नहीं चलने देंगे कि मटीरिअॅलिझमके आधारपर समाजरचना हो! क्यों? हम मामुली विचार करें, हम सारे मटीरिअॅलिस्ट हैं, तो हमारें जीवनमूल्य कौनसे होंगे-जैसें आज होते जा रहे हैं। वैसे केवल भौतिक जीवनमूल्य होंगे क्या? मानो रुपयेकी परिभाषामें ही हर चीजका विचार होगा क्या? और इसके कारण क्या होगा? कि यदि रुपयेकी परिभाषामें हर चीजका विचार होता है तो मार्क्सने जो कहा है कि भाई इक्वॅलिटी आनी चाहिये वह कभी आ भी नहीं सकती। और इक्वॅलिटी आएगी तो ह्यूमन प्रोग्रेस नहीं हो सकता! दोनों साथसाथ नहीं हो सकते। मानों इक्वॅलिटी भी आ जाय, ह्यूमन प्रोग्रेस भी हो और जीवनमूल्य भौतिकही रहें– तीनोंका इकठ्ठा रहना असम्भव है। आप कहेंगे–कैसे असम्भव है?

अब मामूली उदाहरण लीजिये। आपने केवल भौतिक जीवनमूल्य रखें, मनुष्य आर्थिक प्राणी है, यह मान लिया। अब उस दृष्टी से सोचने लगे। अब मैं स्कूलमें जा रहा हूँ तो पढाई करनेमें, अध्ययन करने में, कलाप्राप्त करने में, व्होकेशनल ट्रेनिंगमें मैं जादा मेहेनत कब उठाऊंगा? यदि मुझे ऐसा लगेगा कि भाई इसमें मेरे आत्माकोभी संतोष है–स्वान्तःसुखाय है–और दूसरा कि इससे मेरा विकास होगा। मैं यदि भौतिक प्रगतिवाला हूँ तो मैं यह सोचूंगा कि यह विकास वगैरे क्या चीज है? इसमेंसे जादा पैसा मिलेगा तब तो मैं काम करूंगा। अब आपने कहा इक्वॉलिटी भी आ जाय। तो कैसी इक्वॉलिटी आ जायेगी? जैसे भारतीय मजदूर संघका सिद्धान्त है कि कमसे कम आमदनी और जादासे जादा आमदनीमें कितना फर्क रहे? हमने कहा एक और दसका रहें! हालाँकी कम्युनिस्ट रूसमें एक और अस्सीका अंतर है। हमने कहा एक और दस का अन्तर होना चाहिये। अब १ और १० का भी अन्तर रहा और मान लीजिये की बडे आदमी डॉ. राधाकृष्णन है गजेन्द्रगडकर हैं, वह जो बडे बन गये तो उसके लिये उनको बहुत मेहनत करनी पडी। बहुत अध्ययन करना पडा। और यदि मेरे जीवनमूल्य केवल आर्थिक भौतिक हैं और मुझे यहि इक्वालिटी चाहीये तो क्या मुझे पागल कुत्तेने काटा है जो मैं इतनी मेहनत करुंगा कि जिसके फलस्वरुप राधाकृष्णन और गजेंद्रगडकर और विश्वेश्वरय्या जैसा आदमी बन सकूं? मैं कायके लिये कोशिस करूंगा? मैं सोचुंगा कि मैंने कुछ भी काम नहीं किया तो भी स्टेटकी ओरसे मिनिमम नीड्सकी तो पूर्ति होनेवाली है। और बहूतकुछ काम किया तोभी एक और दसके अनुपातसे जादा पैसा मिलनेवाला नहीं। तो फिर आइनस्टाइन बननेकी कोशीस क्यों की जाय? मानो ह्यूमन प्रोग्रेस के लिये जो इन्सेंटिव्ह चाहिए वह क्या हो? हम यदि कहें, स्वान्तःसुखाय तो स्वान्तःसुखाय नामकी कोई बात कम्युझममें नहीं है। क्यों कि माइंड ही नहीं। माइंड होगा तो स्वान्तःसुख होगा। माइंड यदि केवल सुपरस्ट्रक्चर ऑफ मॅटर है तो केवल स्वान्तःसुखवाली बात नहीं! तो फिर आदमी प्रयास क्यों करेगा? और इसलिये रूसमें यह देखा गया कि लोगोका काम करनेका इन्सेंटिव्ह खतम हो गया! अब आप कहेंगे कि इन्सेंटिव्ह दीया तो क्या होगा? आदमी यदि केवल आर्थिक प्राणी रहा और उस्को प्रोग्रेसके लिये इन्सेंटिव्ह मिला तो वह प्रोग्रेस बहोत करेगा। इन्सेन्टिव्ह आर्थिक रहेगा, इसके कारण डिस्पॅरिटी ऑफ इन्कम बढ जायेगी। फिर एकादा बडा व्यापारी बन सकता है, इण्डस्ट्रिअॅलिस्ट बन सकता है, रॉकफेलर बन सकता है, थोर बन सकता है। लेकिन इक्वॉलिटी नहीं आ सकती, आप समझ लीजिये कि दोनोंमें सायकॉलॉजिकली बडा फर्क है। यदी हम इक्वॉलिटी का आग्रह रखते हैं तो फिर आइनस्टाइन और राधाकृष्णन बननेका कोई सम्भव नहीं। क्यों कि कोई इन्सेंटिव्ह नहीं क्यों कि जो बाकी इन्सेंटिव्ह, आर्थिक

और भौतिक छोडकर-बीइंग ए मटिरिऑलिस्ट आप मानते हीं नहीं। और यदि आर्थिक भौतिक हैं तो जब तक मुझे जादा पैसा नहीं मिलेगा तब तक मैं जादा काम क्यों करूं? यह सवाल आता है। और यदि जादा पैसा देंगे, याने पर्याप्त जादा पैसा देंगे तो रशिया जो है वह बद जायेगा। अब हमारे यहाँ एक शिकायत आती है। कि भाई यहाँके टेक्नीशिअन इंजिनिअर्स सायन्टिस्ट, डॉक्टर्स, आदी इंग्लंड, अमेरिका पढनेके लिये जाते हैं और वहीं प्रॅक्टिस शुरू कर देते हैं। नौकरी ले लेते हैं! क्यों नोकरी लेते? अब अपने नोबल प्राइज विनर जो खुराणा साइब, वे बाहर गये, क्यों गये? यहाँ हम लोगोंने उनको अच्छी ट्रीटमेंट नहीं दी यह तो बात सही है। किन्तु दूसरी भी बात है कि केवल मटीरिॲलिस्टिक इन्सेन्टिव्ह होनेके कारण उनको लगा कि भाई यह मेरी मातृभूमी होगी लेकिन इससे क्या जादा फरक पडता है? हम कहींभी जायेंगे, स्वयं आरामसे रहेंगे अमरिकामें जाकर बसेंगे। शायद अपने प्रोग्रेसके लिये वे बसे हो, हम मानते है। चाहे मातृभूमींमें इतना पैसा नहीं मिलता जितना अमरिकामें मिलता है, इसलिये अमरिकामें चले गये। याने फिर डिस्पॅरिटी बढ जायेगी। माने केवल आर्थिक और भौतिक जीवन—मूल्य यदि रहे और और आपने कहा हम डिस्पॅरिटी नहीं बढने देंगे तो इन्सेन्टिव्ह फॉर प्रोग्रेस इज फिनिश्ड – और आप इन्सेन्टिव्ह फॉर प्रोग्रेस रखेंगे, तो डिस्पॅरिटी वुइल बी देअर! दो मेंसे एक हो सकता है। और यदि कम्युनिस्ट कहे कि प्रोग्रेसभी होगा और इक्वॉलिटी भी होगी तो दोनों साथसाथ हो नहीं सकती। अब इसका अनुभव रूसमेंभी आ रहा है। आप को यह पता होगा कि पहला स्पुटनिक जब अंतरीक्ष में गया उस समय क्रुश्चेव्ह साइबका स्टेटमेंट आया-कम्युनिस्ट होनेके कारण ॲरोगण्ट होना स्वाभाविकही था ' यह जो स्पुटनिक है यह कम्युनिझमकी यशस्विताका परिचायक है। ' तो बट्रान्ड रसेलने दूसरेही दिन उसको अच्छा रिटॉर्ट किया। उन्होंने कहा कि यह कम्युनिझमके फेल्युअरका परिचायक है। और कारण उन्होंने बताया कि कम्युनिझमके इक्वॅलिटीके सिद्धांतके अनुसार बाकी सब रशियन नागरिकोंके समानही आपने सब सायन्टिस्टोंको ट्रीटमेंट दी होती, और उनको प्रिव्हिलेज्ड के नाते कोई ॲक्स्ट्रा फॅसिलिटीज न दी होती, कभी उनको स्पुटनिक तक पहूँचनेका इन्सेंटिव्ह प्राप्त न होता तो आपका स्पुटनिक नहीं निकल सकता! आपने यह जो प्रिफरेन्शियल ट्रीटमेंट दी है इससे स्पष्ट होता है कि कम्युनिमझके सिद्धांतोंको छोडनेके कारण सायन्टिफिक प्रोग्रेस हुआ। इस तरह का बडाही अच्छा रिटार्ट रसेल साबने दीया। तो इसमें ह्यूमन प्रोग्रेसका इन्सेन्टिव्ह और समानता कैसे आ सकती है? इसकी किसीनेभी अभी तक कोई सुलझन नहीं दी।

आज वहाँ भी कोई इक्वॅलिटी की ओर सब लोक बढना चाहते है ऐसा दीखता नही! जैसा मैंने कहा की एक और अस्सीका रेशियो है, वह तो है हि। इसके आलावा

भी इन्होंने यह कहा था कि हम क्लासेस खतम करेंगे। इक्वैलिटी हो जानेसे क्लासेस खतम हो जाते है। अब ऐसा दिखता है की पुराने क्लासेसतो खतम किये गये किंतु नये रिजिमके अन्तर्गत नये क्लासेस आये है। ॲडमिनिस्ट्रेटर्स और टेक्नीशिअन्स इन लोगों के अलग क्लास, बाकी सामान्य जनताका अलग क्लास वहाँ दिखता हैं। यहाँ तक कि यूगोस्लोवाकियाके डेप्युटी प्राइम मिनिस्टर जिलास ने न्यू क्लास नामकी एक किताब लिखी है। इस किताब में उन्होंने यह स्पष्ट कहा है कि पुराने क्लासेसको हमने खतम कीया और नये क्लासेस हमने निर्माण कीये। अधिकारपर रहते हुये क्रुश्चेव्हने एक आर्टिकल लिखा था जो उस स्थानके लगबग सभी अखबारोंमें आया था, उसमें उन्होने कहा कि 'मेरे सामने समस्या है नये आनेवाले जनरेशनकी। क्यों की बोले, स्कूल कॉलेजेसमें हम देखते हैं कि ॲडमिनिस्ट्रेटर्स ॲन्ड टेक्नीशियन्स के जो बच्चे होते हैं वे अलग ग्रूप करके इंटरव्हल में बैठते हैं। और वे सामान्य कुली और बाकी लोगोंके, किसानोंके साथ मिक्सअप करना भी बिलो डिग्निटी मानते हैं। तो यह जो डिस्पैरिटी आती है यह कैसे दूर कीया जाय यह मेरे सामने विचार है।' क्लासेस कहाँ नष्ट होंगे, कैसे नष्ट होंगे कुछ पता नहीं चलता। वास्तवमें बडा क्लासमिक्सका प्रचार कीया जाता है। किन्तु क्लासेस हैं। वास्तवमें, स्मशानभूमीमें-जहाँ वे लोग हम लोगोंको ले गये थे वहाँ पर पत्ता चला कि जिन्दो लोगोंके क्लासेस हैं या नहीं वगैरे विवादके विषय छोडे तोभी मृत्यूके पश्चात् भी क्लास सिस्टिम है। मानो लेनिन मासोलियम पास-जो हायक्लास लोग हैं उनकोही गाडा जाता हैं। बाकी लोगों के सिमेट्री अलग है। भाई ये क्लासेस भी आपने लाये। केवल भौतिक रहने के कारण यह आपत्ती आ जाती है।

अब आप कहेंगे कि इस के लिये भाई इलाज क्या है? इलाज एक है कि आप जरा भौतिक वाद के आधार पर समाज रचना की बात मत करो। अब डिस्कशन करें, आर्टिकल लिखें, भाषण दें कि हाँ भौतिकता वादही सही है हमें कोई आपत्ती नहीं। अब कितनेही लोग कितनीही बातें बोलते हैं। अपने हिंदुस्थान में साधू लोगोंके आश्रम भी हैं और मेंटल असायलम्स भी हैं तो किसीनेभी कुछ भी बात कही तो उसमें हमें कोई आपत्ती नहीं। विचार स्वातंत्र्य है, वाक्स्वातंत्र्य है सब कुछ है। लेकिन समाज रचना का आधार मटीरिॲलिझमको मत बनाईये। हमारे यहाँ क्या था कि मनुष्यको केवल इकॉनॉमिक बीइंग नहीं माना गया। मानों वह इकॉनॉमिक बीइंग है, वैसे इमोशनल बीइंग है, इंटलेक्चुअल बीइंग, स्पिरीच्युअल बीइंग है और उसकी जो इकॉनॉमिक बीइंग के नाते आवश्यकता है उनकी तो पूर्ता होनीही चाहिये ऐसा माना गया था। क्यों कि जब तक प्राथमिक अवश्यकताओंकी पूर्ति नहीं होती तब तक वह आगेका विचार कैसे कर

सकेगा ? यह कहा गया कि आहार, निद्रा, भय मैथुनं च जो है वह तो होनाहि चाहिये। इसके सिवा आदमी बढ नहीं सकेगा। लेकिन यह सोचा गया कि यह प्राथमिक आवश्यकतायें हैं। अन्तिम आवश्यकता नहीं है ! और इनकी पूर्ति होनेके पश्चात अुनको सारे सुख साधन इस लिये उपलब्ध किये जाय, की, जिसके कारण उसको शांतता मिले, फुरसत मिले लिझर मिले। जिसेसकी वो विकास की ओर संस्कृतिकी ओर बढ सके। फिर साहित्य है कला है और सांस्कृतिक बाते जिधर वो बढ सके। मानो सांस्कृतिक बातोंकी ओर ख्याल करने की दृष्टीसे, पर्याप्त फुरसत और मनःशान्ती होनी चाहिये। इस दृष्टीसे, सारी भौतिक आवश्यकता ओंकी उसकी पुर्ती होनी चाहिये। फिर यह सोचा गया की जैसे भौतिक आवश्यकता ओंकी पुर्तीने होने के कारण भौतिक आवश्यकताओंके पिछेही दौड ने में सारा जीवन गुजरना पडे यह भी बात मनुष्यता के लिए प्रतिकूल है। जैसे भौतिक आवश्यकता और भौतिक उपभोगोंमेंही उलझ जाना यह भी बात प्रगतिके लिये बाधक है। तो इस तरह से आवश्यकताओंकी पूर्ती होने के पश्चात् मनुष्यने देवतत्वके ओर बढना चाहिये, संस्कृती की ओर बढना चाहिये यह एक विचार अपने यहाँ रखा गया। इसके कारण जीवनमूल्य दूसरे तरहके थे। अब उनको मैं एकदम 'स्पिरीच्युअल' बोलना या न बोलना इसका फैसला नही दे सकता—लेकिन मटिरिअॅलीस्टीक नही थे इतना कह सकता हूँ बाकी नाम कुछ भी दिजिये। 'नो फाइट फॉरवर्डस' इसके कारण क्या हुआ कि हमारे यहाँ यह सोचा गया की हरएक मनुष्यकी सर्वांगीण उन्नती होनी चाहिये। अब मनुष्यकी सर्वांगीण उन्नती कैसी हो सकती है ? तो लोगोंने देखा की प्राथमिक आवश्यकताओंकी पूर्ती यह तो मामूली बात है। वह पूर्ती होनीही चाहिये। पूर्ती हो जाएगी किन्तु इसका विकास का मतलब ये है की उसकी जो प्रकृति है, प्रवृत्ति है. टेंडन्सीज है अॅप्टीट्यूड है उनके अनुसार काम करने का उसको आनंद मिलना चाहिये। और इस दृष्टीसे समाजकी रचना इस तरहकी होनी चाहिये कि अॅप्टिट्यूड वाइज अरेंजमेंट ऑफ जॉब, जिसकी जैसी प्रवृत्ति होगी, इच्छा होगी उस तरहसे उसको जॉब मिले। गुणकर्मके अनुसार जॉब मिले। और इस तरहसे गुणकर्मके अनुसार यदि काम मिलेगा तो स्वान्तः सुखाय वह काम भी करेगा यह बात स्पष्ट है। आदमी बहुत काम करता है। जिस समय इच्छाके अनुकूल काम रहता है तो फिर Work and rest का जो लाइन ऑफ डिमार्केशन है वह भी खतम होती है। वर्क बिकमस् रेस्ट यह भी अवस्था आती है तो इस तरहसे मनुष्यका एक विकास भी हो उसके गुणकर्म के अनुसारही हो, और इस तरहसे हरेक व्यक्ति अपना विकास करते हुअे, एक समाजके अंगके नाते रहे, यह बात हमारे यहाँ सोची गयी। और इसमें यह सोचा गया कि इन्सेंटिव्हके बारेमें क्या व्यवस्था की जाय ? हमारे यहाँ बडी पिक्यूलिअर व्यवस्था की गयी है। पाश्चिमात्य देश वेज डिफरन्शिअल विचार करता है, हमारे यहाँ वेज डिफरन्शिअलके साथ स्टेटस डिफरन्शिअलका विचार किया गया। दोनोका इकट्ठा विचार ! और यह सोचा गया कि जैसे वेज आदमीको इन्सेन्टिव्ह देता है वैसे जो विशुद्ध भौतिकतावादी नहीं उसको स्टेटससे भी इन्सेन्टिव्ह मिलता है। सोशल रेकग्निशन भी

इन्सेन्टिव्ह देता है। और इस दृष्टीसे यह भी सोचा गया कि जिस मात्रामें सोशल स्टेटस बडा होगा उस मात्रामें उसका स्फिअर अफ एन्जॉयमेंट छोटा होना चाहिये. उपभोगका दायरा छोटा होना चाहिये। उतना, जितनी सामाजिक प्रतिष्ठा जादा होगी और जितना उपभोगका दायरा बडा होगा उतनी सामाजिक प्रतिष्ठा कम होगी। आप वेज डिफरन्शिअल और स्टेटस डिफरन्शिअलमें आपको जो कुछ चाहे वह चुन लीजिये। कुछ भी हो। समाजका नियम कि जिसकी सामाजिक प्रतिष्ठा सबसे जादा उसका उपभोगका दायरा सबसे कम, और जिसका उपभोगका दायरा सबसे जादा उसकी सामाजिक प्रतिष्ठा सबसे कम। अपने अपने प्रवृत्तीके अनुसार आपको समाजमें कहाँ बैठना है आप सोच लीजिए। मानों आप सभी उपभोग ले सकते हैं लेकिन सामाजिक प्रतिष्ठा कम रहेगी। सामाजिक प्रतिष्ठा हाय्येस्ट हो सकती है उपभोगका दायरा छोटा रहेगा। और इसके कारण हमारे यहाँ इन्सेंटिव्ह रहते हुए भी झगडे नहीं हुए। क्यों की जिन लोगोंको प्रतिष्ठामें सोशल रेकग्निशनमें महत्व मालुम होता था–बीइंग नॉन मटीरिॲलिस्टिक तो वो जादा वेतन मिलेंगे तब मैं अन्वेषणका कार्य करुंगा ऐसा नहीं कहते थे। जादा मिलेगा तब तो मैं लेजिस्लेशनका काम करुंगा ऐसा नहीं कहते थे। लंगोटी लगाते थे, जंगलमें जाते थे लेकिन संपूर्ण समाजका विचार करते हुए लेजिस्लेशन करते थे। इतना बडा लेजिस्लेशनका काम संपूर्ण समाजको जिन्होंने दिया है वे लंगोटीवाले थे। तो हाय्येस्ट स्टेटस-लोएस्ट वेजेस, हाय्येस्ट वेजेस–लोएस्ट स्टेटस यह हमारे यहाँ रखा गया। और इसके कारण समाजमें संतुलन आया। पाश्चिमात्य जगतमें संतुलन नहीं। आज हमारे यहाँ पीछले बीस इक्कीस सालोंमें संतुलन नहीं इसका कारण क्या है? इसका कारण स्फिअर ऑफ अेंजॉयमेंट ॲन्ड सोशल स्टेटस गो टुगेदर। पैसेके द्वारा स्फिअर ऑफ अेंजॉयमेन्ट बढ सकता है और जिसकी सामाजिक प्रतिष्ठा बडी होगी उसकोही जादा पैसा मिलता है उसको अेंजॉमेंट जादा मिलती है इसलिये सामाजिक प्रतिष्ठा के लिये झगडा है। आदमी सोचता है कि प्रतिष्ठा भी मिलेगी, उपभोग भी मिलेगा किन्तु प्रतिष्ठा और उपभोग यदि हम लोगोंने इन्व्हर्स रेषो में रखा, मान लीजिये कि हमने कहा कि तुमको प्राइम मिनिस्टर बनाया जायगा– लेकिन दोसौ दिनतक व्रत रखना पडेगा, शादीब्याह नही कर सकते, कुटियामें चाणक्य के समान रहना होगा, अच्छे फॅन्सी कपडे नहीं पहन सकते, हरदिन दाढी नहीं बना सकेंगे ऐसे सारे अपने नियम बनाये जायेंगे तो मेरा ख्याल है कि आज जो प्राइममिनिस्टरशिपकेलिये कांटेस्ट है उसमेंसे ९९% लोग पीछे आ जाएंगे। आप उनको दुसरी भी बात बताइये कि प्राइममिनिस्टर मत बनो– सामान्य व्यक्ती के नाते रहो– यह सारा मिलेगा– दस शादीयाँ आप कर सकते है कोई आपत्ती नहीं। लेकिन तुमको प्राइममिनिस्टर नहीं बनाया जाएगा। मेरा ख्याल है कि सब लोग सोचेंगे कि ब्रह्मचारी रहते हुअे प्राइममिनिस्टर होना इससे दस शादीयाँ करते हुअे सामान्य नागरिक रहनेमें क्या आपत्ती है? ऐसाभी लोग सोच सकते हैं! क्योंकि भिन्न रुचिर्हि लोकाः। अलग अलग लोगोंकी अलग अलग प्रवृत्ती रहती है। तो इस तरहसे सामाजिक प्रतिष्ठा और स्फिअर ऑफ एन्जॉयमेंट अिनव्हर्स रेशियोंमें, व्यस्त प्रमाणमें रखा गया और जो इन्सेन्टिव्ह है वह केवल भौतिक नही तो भौतिकके अलावा उसको नाम

कुछ भी दीजिये–मैं जानबूझकर स्पिरीच्युअल्सका उपयोग नहीं कर रहा— क्योंकी बिटवीन स्पिरीच्युअल ॲण्ड मटीरिअल, देअर आर व्हेरिअस स्टेजेस–किन्तु नॉन मटीरिअल इस तरहके इन्सेन्टिव्ह यह यदि रहा तो समाजमें संतुलन आ सकता है। फिर इन्सेन्टिव्हके कारण डिस्पॅरिटी बढनी चाहिये यह आवश्यक बात नहीं। डिस्पॅरिटी न बटते हुए भी समाजका संतुलन आता है। क्यों की जीवनमूल्य अलग हो गया। जहाँ वेज डिफरन्शिअल्का विचार होता है–जब मूल्यांकन होगा तो वेज ॲण्ड स्टेटस दोनों को मिल्कर इव्हॅल्युएशन होगा इसके कारण समाजका संतुलन हमारे यहाँ रहा। यह बात जबतक नहीं होती, आपने सोशॅलिझमका नारा दीया तो भी या तो ह्यमन प्रोग्रेस रुक जाएगा या इक्वालिटी खतम हो जाएगी तो इस तरहसे मामूली एक उदाहरणसे सिद्ध होता है की बड़ा इन्क्यॅलिटीक विचार कीया जाता है किन्तु यदि हम मटीरिॲलिझम लेकर चलते है, केवल मटीरिॲलिस्टिक लाइफका विचार लेकर चलते है तो उन्होंने जो एक उद्देश रखा वह उद्देश सिद्ध नहीं हो सकता। वही बात क्लासेस सोसायटीकी है! जबतक मटीरिॲलिझम है तबतक क्लासेस रहनेहीवाले है। और इसके कारण जबतक हम मटीरिॲलिस्टिक व्हॅल्यूजको नहीं छोडते तबतक मार्क्सने जो उद्देश अपने सामने रखे वह भी पूरे नहीं होते!

हम दूसरा उदाहरण देते है। उन्होंने कहा कि भाई हमारा अन्तिम जो चिज है समाजका, वह कैसा है? जैसे क्लासेस सोसायटी कहा वैसे स्टेटलेस सोसायटी भी कहा। देअर विल बी नो स्टेट–स्टेट विल विदर अवे! बहुत अच्छी कल्पना है। क्यों कि हमारे यहाँ वैसाही था। उस आदर्श अवस्थामें हम लोग थे–हमारे यहाँ भिष्माचार्यका युधिष्ठिरकेद्वारा जब पूछा गया कि क्या यह स्टेट इन्स्टिटूशन हमेशा ही थी? उन्होंने कहा स्टेट इंस्टिट्यूशन हमेशा नहीं थी। न राज्यं नैव राजासीत न दंड्यो नच दांडिकः धर्मेणैव प्रजाः सर्वे रक्षन्तिस्म परस्परम्!'

भाई अपने यहाँ एक समय कोई स्टेट. ऑफीशिअल्स नहीं थे। और कोई स्टेट नामकी संस्था नहीं थी। जिसको दंड देना है ऐसाभी कोई नहीं था दण्ड देनेवाला भी कोई नहीं था– प्रिझन्स नहीं थे पोलिस ऑफिशिअल्स् नहीं थे ज्यूडीशिअरी नहीं थी। फिर लोग एक दूसरेका संरक्षण कैसे करते थे? उन्होने कहा– धर्म! धर्म के आधारपर करते थे। अब इसका मतलब क्या है, क्या नहीं इसके गहराई में जानेकी आवश्यकता नहीं। इतना पर्याप्त है कि देअर वॉज अ स्टेटलेस सोसायटी। और धिस इज ऑथेंटिकेटेड बाय भीष्म! उनको ॲथॉरिटी माननेमें कोई आपत्ती नहीं। हालाँकी वो पाश्चिमात्य नहीं है। तो इस तरहसे माननेमें आपत्ती नहीं! किन्तु इस स्टेटलेसनेसमेंसे स्टेट संस्था कैसे आयी इसका जो उन्होने विवरण कीया और आज पाश्चिमात्य जगत में हम जो दृश्य देखते हैं,

दोनोंकी तुलना करना बडा उपयुक्त होगा। स्टेट विल विदर अवे ऐसा तो पाश्चिमात्य जगत में कम्युनिस्टोंने कहा! क्या कहीं एकभी जगह आपको ऐसी कोई आशा दिखाई देती है कि स्टेट विल विदर अवे? नो! ऑन दि कांटररी स्टेट इज बिकमिंग ॲथॉरिटीरिअन। बहुत ॲथॉरिटिरिअन होते जा रहे हैं। मानो मनुष्य जीवनके सभी क्षेत्रोंपर अपनाही प्रभाव रहे यही स्टेटकी प्रवृत्ती है। फिर कला हो या और कुछ हो। जादा इन्युमरेट करनेकी आवश्यकता नहीं। ईव्हन इन युवर प्रायव्हेट लाईफ स्टेट डिक्टेट करने जा रहा है। ऐसी अवस्था कम्युनिस्ट देशोंमें आपको दिखेगी। तो इसका मतलब है कि विदरिंग अवे की कोई साइन्स नहीं। और मटीरिॲलिस्टिक व्हॅल्यूजको लेकर जब हम चलते हैं तो स्टेट शॅल नेव्हर विदर अवे। क्यों न विदर अवे होगा? तो स्टेट आया क्यों? इसका हम कारण खोजें! तो ऐसा दीखेगा कि, भीष्मके कहनेमेंहि आता है, शान्तिपर्वमें आता है, बडा अच्छा विवरण है, युधिष्ठिरने पूछा कि भाई ऐसी बात है तो फिर स्टेट आया क्यों? तो उन्होंने कहा कि, 'मोहवशा मात्रे न मनुजा मनुजर्षभ प्रति पत्ति विमोहाच्च धर्मस्तेषां अनीभषम—' वो जो लोग थे वे मोहवश हो गये। मोहका मतलब टेम्प्टेशन नहीं, तो कन्फ्युजन! कन्फ्युजन ऑफ थॉट वहाँ पैदा हुआ। और उसके कारण उनका जो प्रतिपत्ति विमोहाच्च— उनका जो ओरिजिनल नॉलेज था वह नष्ट हुआ। और इसके कारण उनका जो धर्म था विघटित हुआ। फिर अपने यहाँ जैसी एक कहनेकी पद्धति है कि—दे वेटेड ऑन लॉर्ड विष्णू इन डेप्युटेशन—वैसे लोग गये। उनको बताया। और जो बताया है वह भी अच्छा है। उसमें आता है की प्रश्न पूछा गया—व्हाय स्टेट वॉज नेसेसिटेड—व्हाय स्टेट वॉज इन्स्टिटयूटेड—उन्होने कहा भगवन्नरलोकस्थं नष्टं ब्रह्म सनातनम्। यह जो हमारा सनातन समाज है वह डिसइंटिग्रेट हो रहा है! क्यों?

लोभ मोह आदिभिर्भावैः तन्नोभव भुपाविश—लोभ मोह आदि भावोंके कारण यह डिसइंटिग्रेट हो रहा है इसके कारण—बुइ हॅव बिकम ॲप्रिहेन्सिव्ह! अब क्या किया जाय? तो भगवानने कहा की—स्टेट इन्स्टिटयूट कर लो तुमको राजा दे दू। मानो स्टेट इस्टिटयूट आयी क्यों? तो समाज डिसइन्टिग्रेट होने लगा था धर्मकी प्रवृत्ति नष्ट हो गयी थी। याने समाजकी धारणा जिन तत्त्वोंपर होती है वे तत्व नष्ट हो रहे थे। और यह जो मटीरिॲलिस्टिक टेन्डन्सीज है, लोभ मोह आदि जो भाव हैं ये बलवान हो रहे थे और इसीके कारण स्टेट आई! अब कम्युनिझम यदि दावा करेगा की इसका फल क्या मिलेगा? तो विदरबिंग अवे ऑफ दि स्टेट होगा तो यह हो नहीं सकता—मटीरिॲलिस्टिक टेडन्सीजकी बीज यदि आप बोते है तो उसमेंसे स्टेट इस्न्टिटयूट खतम हो जाऐगी यह आशा नही है। तो उनकाही

जो उद्देश है–स्टेटलेसनेस आना चाहिये वह उनके मटीरिअॅलिझमके आधारपर नहीं आ सकता ! तो ऐसा यदि हम विचार करते है तो दीखेगा कि क्लासलेस सोसायटीके बारेमें, स्टेटलेस सोसायटीके बारेमें, इक्वॅलिटीके बारेमें, जो भी उन्होंने अपने उद्देश रखे हैं वहाँ। सोचनेके लिये रास्ता याने उनका मटीरिअॅलिझम नही। इतना हम समझ सकते है।

और जैसा हम समझ सकते है वैसा कम्युनिस्टभी थोडा बहुत समझने लगे हैं। और इसके कारण बडा रीथिंकिंग उनके मनमें हो रहा है। इधर तो लोग हमको कहते है कि भाई आप कम्युनिझम क्यों ले रहे है ! उधर कम्युनिस्टोंके मनमें बडा रीथिंकिंग हो रहा हैं। रीथिंकिंग के कुछ उदाहरण यदि मैं बताऊँ। तो क्या बी ऑल अन्ड अन्डॉल जो है वह मॅटरही है। आदि और अन्त में मॅटरही है इसके विषय में बडा सन्देह निर्माण हुआ। मार्क्सकी जो भविष्यवाणी थी वह गलत सिद्ध हुअी यह मानना पडा। मार्क्सने जो प्रक्रियाअें बताई थी वैसा इतिहासने मोड नहीं लिया इसको स्वीकार करना पडा। जो कहा गया था कि–रिच वुइल बिकम रीचर, पुअर विल बिकम पुअरर–पोलरायझेशन हो जाएगा–थोडे लोग ऊपर रहेंगे बाकी सब नीचे रहेंगे जो माल पैदा होगा उसको खरीदनेवाले कोई नहीं मिलेंगे और इसके कारण कॅपिटॅलिझम वुइल बी टंबल डाउन अंडर द बर्डन ऑफ इटस् ओन सेल्फ कॉंट्रॅडिक्शन......आदि जो कहा गया यह दृश्य कहींभी दिखाई नहीं देता।–मिडल क्लास विदर अवे हो जाएगा—तो मिडल क्लास सारे देशोंमें जैसे के वैसे है। जो कॅपिटॅलिस्ट क्लास कहा है और जो लेबर क्लास कहा जाता है ये दोनो ऑलवेज अॅट लॉगर हेड्स रहेगा और क्रांती होगी ऐसा कहा लेकिन पश्चिमके कॅपिटॅलिस्ट कहाँ गये ? अमेरिकामें क्रांतीकी कोई आशा नहीं दिखाई देती। आज कॅपिटॅलिझमका जो ही स्वरुप मार्क्सने कहा था वैसा कहीं दुनियामें दिखाई नहीं देता और कम्युनिझम का भी स्वरुप यदि कुछ उन्होंने कहा होता—कहा या नहीं इसके बारेमें बादमें कहेंगे—वह भी दिखाई नहीं देता। मानो कॅपिटॅलिझम इज नॉट सो कॅपिटॅलिस्टिक अॅन्ड कम्युनिझम इज नॉट सो व्हेरी कम्युनिस्टिक इस तरहकी विचित्र अवस्था आज दिखाई देती है। और यह भी दिखाई देता है कि जो कॅपिटॅलिस्टिक हैं वे अपनीही मानमानी चलाअेंगे ऐसी कोई अवस्था अमरिकामें नहीं है और मजदूरोंके द्वारा शासन चल रहा है यह अवस्था रुसमें भी नहीं है तो तीसरीही अवस्था दोनों देशोंमें आती जा रही है यह दिखाई देता है। आगे चलकर यह भी सब लोग कह देते हैं कि कॅपिटॅलिस्ट कंट्री रहे या कम्युनिस्ट कंट्री रहे, आजकल तो टेक्नॉलॉजीका यह जो अनप्रिसिडेंटेड अॅडव्हान्स है इसके कारण ऐसी पोझीशन आ रही है कि जो वास्तवमें इंडस्ट्रीका कंट्रोल रहेगा वह शेअर होल्डर्सके हातमें नहीं रहेगा। प्रोप्रायटर्सके हाथमें नहीं

रहेगा। एक तरफ वह कॅपिटॅलिस्टों के हाथमें नहीं रहेगा। या दुसरी तरफ वह कम्युनिस्ट पार्टीके सेक्रेटरीके हाथमें भी नही रहेगा। तो जो टेक्नोक्रॅट्स है उनके हाथमें रहेगा। वे जैसा डिक्टेक्ट करेंगे वैसा करना पडेगा। इतनी टेक्नॉलॉजी अॅडव्हान्स हो गयी है। और एक नयी रचना-जिसको बर्नहॅमने मॅनेजरीयल स्टेटस कहा वह आ सकती जिनका विचार सभी देशोंमें आज आ रहा है। इस तरहसे अभूतपूर्व घटना-अभूतपूर्व माने जिनका विचार मार्क्सने नहीं किया था-ऐसी हो रही है। ए न्यू ट्रेंड-अनप्रेडिक्टेड बाय मार्क्स ऐसा आ रहा है। ये सब बातें कम्युनिस्ट देखते है। आपके साथ बातचित करते समय वो बडे असर्टिव्हली बात करें लेकिन मनमें तो अखिर मनके दरवाजे कम्युनिस्ट भी हुआ तो कहाँतक बन्द करेगा? तो इस तरहसे सारे विचार आते है? और यह जो री थिंकिंग कम्युनिस्टोंके मनमें हो रहा है उसके कुछ कारण है।

पहले यह सोचा गया था कि कम्युनिझम याने इन्टरनॅशनल या सारे दुनियाके कम्युनिस्ट एक है नॅशनल आदि सारा झूट है यह सोचा गया था। इसीके आधारपर तो हमारे यहाँ लोगोंने गद्दारी की। कहा कि नेशन आदि सारी झूट है। सारी मनुष्य जाती जो है वह एक है। अब वैसे देखा जाय तो हमारे यहाँका वह सिद्धांत रखा गया था। इतनाही नही इससेभी बढिया बात कही गयी। माने हमारे यहाँ यहाँतक लोगोंने साक्षात्कार किया कि कम्युनिस्ट तो केवल इंटरनॅशनल की बात करते, सारी सारी मनुष्यजाती एक है—कहते हैं लेकिन हमारे यहाँ कहा गया सारी मनुष्यजाती एक है इतनाही नहीं सारे मनुष्यप्राणी एक है इतनाही नहीं तो अॅनिमेट अॅन्ड इन अॅनिमेट सारा वर्ल्ड एक है। इतनाही नही तो सारे वर्ल्डस् मिलकर जो सारा युनिव्हर्स होता है वह एक है। और वह केवल युनायटेड होता है यह बात नहीं तो इट इज वन ऑल ईज वन। माने इसमें यह बात नहीं है कि ऑल आर वन! ऑल आर वन का मतलब होता है कि दे आर डिफरन्ट एन्टिटीज और ऑल दे आर युनायटेड। ऐसी बात नहीं सोचा। गया आल ईज वन। तो इस तरहका अद्वैतका साक्षात्कार हमारे यहाँ द्रष्टाओंने किया है! सब मिलकर एकही तत्व है! सारे विभिन्न पदार्थ मिट्टीसे लेकर मनुष्य तक जो दिखते हैं दे आर डिफरन्ट प्रोजेक्शन्स ऑफ दि सेम मॅटर। जैसे विभिन्न गहने हैं! लेकिन मॅटर एकही है। जो सोना है उसीकोहि मानो भिन्न भिन्न अलंकार हैं। रोटियाँ भिन्न भिन्न दिखाई देती हैं लेकिन मॅटर एकही है। वह जो आटा है उसीके अलग अलग प्रोजेक्शन्सके ये रोटिया है। उसी तरहसे एकही अस्तित्व तत्वका यह सारा प्रोजक्शन है। इसका यहाँके लोगोंने साक्षात्कार किया। भाषण नहीं दिया साक्षात्कार किया। दोनोंमें बडा अंतर है। रियलायझेशन यहाँतक हुआ। किन्तु साथ ही साथ हमारे यहाँ कहा गया कि भाई जिसकी जितनी जाग्रतीकी प्रगती हुआ

होगी, प्रोग्रेस ऑफ कॉन्शसनेस उसी अवस्था में उसने सोचना चाहिये। मानो हरेकने कहना शुरू कीया कि, ब्रह्म सत्य जगन्मिथ्या– नहीं चलेगा। जो वास्तव में ब्रह्मसत्यं जगनन्मिथ्याका साक्षात्कार कर सकता है वह तो आधिकारी पुरुष है। ब्रह्मसत्यं जगान्मिथ्या मैं नहीं कह सकता क्योंकि मैंने साक्षात्कार नहीं किया है। और इसलिये कहा गया कि जिसके कॉन्शसनेसकी, जागृतीकी जितनी प्रगती हुओ होगी उतनीही बात उसने बोलनी चाहिये। अनाधिकार चर्चा नहीं करना चाहिये। और फिर इसके कारण यह सोचा गया कि जो विभिन्न ऑर्गनिझम्स हैं इनके अन्दर- कम्युनिस्टोंके समान हम नहीं मानते कि बडा विरोध है। जैसे उनका फॅमिली को विरोध है! उन्होंने फॅमिलीको टोड डाला। हम कहते हैं कि ऐसा कोई विरोध नहीं है। इन्डिव्हिजुअल, फॅमिली, नेशन, मनकाइंड, ॲन्ड यूनिव्हर्स यह जो सारा है दे आर दी ग्रोइंग स्टेजेस ऑफ दि डेव्हलपमेंट ऑफ कॉन्शसनेस मनुष्यके जागृती की यह बढती हुओं सीढी हैं! एक के बाद एक आती है। छोटासा बच्चा रहता है। वह अपनेकोही पहचानता है। माँको भी नहीं पहचानता-तब उसके लिये 'अहं' यहि केवल सत्य है बाकी सारा मिथ्या है थोडा बडा होता है बाबा, माँ, भाई, बहनका परिचय होता है वह अपने फॅमिली के साथ एकात्म हो जाता है। उस अवस्था में फॅमिली यह ही उसके लिये हायेस्ट ग्रुप है। लेकिन और भी कॉन्शसनेसकी प्रोग्रेस होती है वह सारा नेशन मेरा है समझने लगता है तो उसके लिये नेशनही केवल सत्य है। नेशन सत्य है याने फॅमिली असत्य है ऐसा हमारे यहाँ नहीं माना गया। फॅमिली सत्य है याने इडिव्हुजल असत्य है यह भी नहीं माना गया। उसी तरह से उससे भी ज्यादा प्रगति हो जाती है तब मनुष्य यह सोचता है कि सारी मनुष्य जाती मेरी है और इसलिए स्वदेशोभुवन त्रयम्। ऐसा हमारे यहाँ संन्याशी कह सकता है लेकिन हरेक आदमी नहीं कह सकता। जो संन्याशी बना हुआ है वही कह सकता है कि 'स्वदेशो भुवन त्रयं–सारा विश्व मेरा है। He is the citizen of the universe.. not only the citizen of the world but citizen of the universe सारा युनिव्हर्स इसका है। इंडिव्हिज्यूअल फॅमिली–नेशन–मनकाइंड-वर्ल्ड और यूनिव्हर्स ये तो परस्पर विरोधी बातें नहीं है। तो ये मनुष्यके जागृतीकी कॉन्शसनेसकी बढती हुओ अवस्था है। जैसे बीज है, बीजसे अंकुर, अंकुरसे पौधा उससे फिर शाखाअें उससे फिर पल्लव, उससे फूल और उससे फल, दीज और डिफरन्ट स्टेजेस ऑफ डेव्हल-पमेंट। कोई कहेगा की भाई बीज अलग दीखता है, पौधा अलग दीखता है शाखा अलग दीखती है, फूल अलग, फल अलग इनके अन्दर बडा झगडा है–तो बात गलत होगी– कहना चाहिये आपने गलत देखा है, इनके अन्दर झगडा नहीं है। ये तो एक प्रगतीकी विभिन्न अवस्थाअें हैं। तो एकही कॉन्शसनेसकी विभिन्न अवस्थाअें हैं।

मनुष्य अहंसे लेकर बिलकुल चराचरतक स्वयं अपनेको एकात्म समझ सकता है–और इसके कारण इसमें कोई झगडा नहीं। वैसेही हमारे यहाँ इंडिव्हिज्युअल व्हर्सेस फॅमिली कोई झगडा नहीं–फॅमिली व्हर्सेस नेशन कोई झगडा नहीं, नेशन व्हर्सेस मनकाइंड झगडा नहीं मनकाइंड व्हर्सेस यूनिव्हर्स कोई झगडा नहीं–हम मानते हैं कि ये हमारी प्रगतीकी विभिन्न अवस्थाएँ हैं।

अब उन्होंने वैसे नहीं माना–और न माननेके कारण उन्होने कहा कि नेशन वगैरे सब झूट है! ऐसा क्यों! क्यों, किन्हींभी कारणोंसे हो–इसकी विस्तृत चर्चा करनेका यहाँ कोई कारण नहीं! उनके यहाँ नॅशनॅलिझमका एक प्रतिक्रियावादी स्वरुप ऐसा आया कि जो नॅशनॅलिस्ट हो सकता है वह इन्टरनॅशनॅलिझमके विरोधमें हैं–ये किसी कारणसे हो–चर्चाकी आवश्यकता नहीं। उन्होंने कहा नॅशनॅलिझम या इंटरनॅशनॅलिझम। हम इंटर-नॅशनॅलिस्ट हैं इसलिये नो नेशन। अब हमारे कम्युनिस्ट कहने लगे कि नेशन तो खतम हो गया क्यों कि मार्क्सने कहा– किंतु यह नेशन जो है, राष्ट्र जो है वह इस तरहसे थिअरीसे खतम होनेवाली चीज नहीं है! आजतक कितनीही इंटरनॅशनल फिलॉसफीज इस दुनियामें आयी है जैसे की दोज हू हॅव जम्प्ड फ्रॉम मॅन टु मनकाईंड मनुष्यसे मनुष्य जाती तक एकदम कूदनेवाली फिलॉसॉफीज आ गयी। इसमें उनके टांगको चोट पहूँची। राष्ट्रको इग्नोअर करनेकी जो बात थी, खतम करनेकी जो बात थी सिद्ध नहीं हो सकी! बाकी इंटरनॅशनल थिअरीज जैसे असफल हुओ वैसेही कम्युनिझमभी असफल हुआ ऐसाही हम देखते हैं!

और फिर हम यह देखते हैं कि आज दुनियामें जो चित्र है वह बडा विचित्र है। यह विचित्र क्या है? अब यह अभीतक माना जाता था। कि वर्ल्ड कम्युनिझम का एक सेंटर है। 'कम्युनिझम इज यूनिसेंटर' मास्को उसका सेंटर है—तो उसमें कम्युनिस्टोंको जरा आत्मिक समाधान था। बाकी दुनिया के कम्युनिस्टोंसे हिंदुस्थानके कम्युनिस्ट जादा रिलीजस है। उनका रिलीजन कम्युनिझम है। वे जादा रिलीजस है। हमारे यहाँ जो पतिव्रता धर्म है। बाकी दुनियामें कही भी इतना कट्टर प्रतिव्रता धर्म नहीं दिखाई देता। उसका असर इनकेभी हृदयपर हुआ है। यहाँ के कम्युनिस्टोंने माना कि नेशन सारा खतम हो गया। किन्तु हम देखते हैं कि नेशन को खतम करते हुए जो युनिसेंट्रिक कम्युनिझम बना था, वह धीरे धीरे बायसेंट्रिक हो गया। उसके दो केंद्र हो गये। मॉस्को और पेकिंग! अब आज तो आप कह सकते हैं कि यह मल्टिसेंट्रिक कम्युनिझम होनेवाला है। अेव्हरी नेशन विल बी सेंटर। और धीरे धीरे ऐसी स्थिती आ रही है। जैसे किसी समय वर्ल्ड इस्लाम वॉज वन–कोई नेशन वगैरेकी झंझट नहीं थी–नॅशनॅलिझम वॉज सबमर्जड् अंडर इस्लाम– लेकिन

धीरे धीरे नॅशनॅलिझमने अपना सर ऊपर उठाया और आज हम देखते है कि अलग अलग इस्लामी राष्ट्र या देश हैं। वे आपसमें अपने देश के लिए झगडते हैं, राष्ट्रहितके लिए झगडते हैं। एक समय ख्रिश्चॅनिटीके अन्तर्गत विभिन्न देशोंका नॅशनॅलिझम सबमर्ज हुआ था। किन्तु नॅशनॅलिझम फिरसे ऊपर आया और हम यह देखते हैं कि ये दोनों बडे महायुद्ध इंग्लड और जर्मनी जैसे ख्रिश्चन और प्रॉटिस्टंट राष्ट्र मेंही लडे गये। उसी तरहसे मार्क्सीझमका भी हाल होनेवाला है कम्युनिझम का हाल होनेवाला है। क्योंकी यह भी एक रिलीजन है परफेक्ट रिलीजन है! रिलीजनकी कितनीही प्रीरिक्वीझिट्स है सारी मार्क्सझम है। रिलीजनके लिये प्रशिज चाहिये प्रॉफेट चाहिये। तो महंमद और ईसाके स्थान पर मार्क्स है। इसके लिए किताब चाहिये बुक चाहिये तो कुराण के स्तर पर दास कॅपिटल है। उसके लिये कोई सप्तम स्वर्ग चाहिये तो हायर फेझ ऑफ कम्यूनिझम है। और सभी बातोंका नियंता इस तरहका भगवान चाहिये तो डायलेक्टिसिझम सबका नियंता है। इस तरहसे कम्युनिझम पूरा रिलिजन है। किन्तु अब वह मल्टिसेंट्रिक हो जाऐगा। बाकी रिलिजन्सकी तरह इसकी भी अवस्था होगी ऐसा दिखाई देता है। अब ये आपसमें झगड रहे हैं। और झगडते समय एक दूसरेको जो गाली देते हैं बडी इंपॉर्टंट है। रुसका कहना है कि चायना डेव्हिएशनिस्ट है। चायनाका कहना है रुस डेव्हिएशॅनिस्ट है। अल्बेनियाका कहना है युगोस्लाव्हिया डेव्हिएशनिस्ट है। युगोस्लाव्हिया का कहना है रशिया डेव्हिएशॅनिस्ट है। हम अपनेही देशमें यदि पीछले दो सालमें देखें तो नंबुद्रिपादने कहा-डांगे इज डेव्हिएशॅनिस्ट। डांगेनें कहा नंबुद्रिपाद इज डेव्हिएशॅनिस्ट मुजुमदारने कहा की दोनों डेव्हिएशॅनिस्ट है-मानो इस तरहसे विभिन्न कम्युनिस्टोंने एक दूसरेको जितने सर्टिफिकेट दिये उनको यदि इकट्ठा किया तो हिसाब यही लगेगा कि कम्युनिझम=डेव्हिएशन। यह तो हम नहीं बोलते हैं। वेही आपसमें सर्टिफाय कर रहे हैं। अब विचार आता है कि ऐसा क्यों? किसीभी सिद्धांतमें इतना डेव्हिएशन कैसे हो सकता है? इसका एक महत्वपूर्ण कारण यह है जो कम्युनिस्ट छिपाते हैं। जहाँ कार्ल मार्क्सने कॅपिटॅलिझम कैसे निर्माण हुआ? इसकी आज आवश्यकता क्या है? आगे उसमें सेल्फ काँट्रॅडिक्शन अन्तर्विरोध कैसे आयेगा और अपनेही अन्तर्विरोधके बोझके नीचे कॅपिटॅलिझम अंततोगत्वा कैसे खतम होगा। बहूत देरसे खतम होगा और इसमें मनुष्य जातीका समय नष्ट होगा इसलिये ऑपरेशन करते हुए ब्लडी रेव्हुल्युशनके माध्यमसे इसे ॲक्सिलरेट करना चाहियें यह सारा बताया और कॅपिटॅलिझम खतम होगा यह कहा! उसके बाद सोशॅलिझम आएगा यह कहा। और सोशॅलिझम आये गा, तो इसके बारेमें पायस प्लॅटिट्यूड जिसे कहते हैं

वैसा कहा–कि टु ईना, अकॉर्डिंग टु हिज नीड, फ्रॉम ईच–अकॉर्डिंग टु हिज कॅपॅसिटी–ऐसी व्यवस्था होगी। लेकिन अॅक्चुअली सोशीओ इकॉनॉमिक ऑर्डर क्या होगा इसका कोई विवरण नहीं! वह तो पायस अॅप्टिट्यूड है–टु ईच अकॉर्डिंग टु हिज नीड फ्रॉम ईच अकॉर्डिंग टु हिज कॅपॅसिटी। यदि हमारे यहाँ कोई आदमी कहें कि भाई, सर्वोपि सुखिनः सन्तु..हमारा इकॉनॉमिक्स है, तो बात गलत होगी। यह अेक पायस विश है. (Pious Wish) यह इकॉनॉमिक्स नहीं। इकॉनॉमिक्स का मतलब होता है कि यू हॅव टु गिव्ह अे कंप्लीट ऑर्डर। अेजन्सीज ऑफ प्रॉडक्शन क्या रहेगी? अेजन्सीज ऑफ डिस्ट्रिब्यूशन क्या रहेगी? उनके परस्पर संबंध कैसे रहेंगे? कौन उसका नियमन करेगा? यह सब देना पडता है। और इसलिये ऐसा कहा गया कि कार्ल मार्क्स हॅज नॉट रिटन ए सिंगल वर्ड अबाउट इकॉनॉमिक्स ऑफ सोशॅलिझम। पायस अॅप्टिटयूडकी बात छोड दीजिये। लेकिन जो इकॉनॉमिक्स ऑफ सोशॅलिझम। है वह कार्ल मार्क्सने वैसाही छोड दिया। मैं यह लेनिनसाब का कोटेशन दे रहा हूँ। और दूसरे का नहीं! क्योंकी हम जो कहेंगे उसको, झूट माना जायेगा। यह जो कहा वह लेनिनने कहा इसलिये सच माननेवाले लोग हैं। तो लेनिनने यह कहा कि कार्ल मार्क्स हॅज रिटन नथिंग अबाउट दि इकॉनॉमिक्स ऑफ सोशॅलिझम। जैसेही लेनिनने पॉवर हाथमें लेनेके बाद न्यू इकॉनॉमिक प्रोग्रॅम हाथमें लिया वैसेही लोगोंने कहा कि यह डेव्हिएशन है। तो तभीसे शुरुवात हो गई है। अपने सेल्फ डीफेन्समें लेनिनने इस वाक्य का उच्चारण कीया। कहा कि कार्ल मार्क्स हॅज नॉट रिटन ए सिंगल वर्ड अबाउट इकॉनॉमिक्स ऑफ सोशॅलिझम। और इसी के लिये आप देखते हैं कि वे मार्क्सका नाम लेते हैं लेकिन रचना अपनी अपनी करते हैं। चायनाकी रचना अलग है, युगोस्लाव्हिया की अलग है, रूसकी अलग है। तो इस महत्वपूर्ण बातसे हम यह समझ सकते हैं कि कार्लमार्क्स श्रेष्ठ पुरुष था; हम मानते हैं। उनके सिन्सिरिटीके बारेमें हमें बिलकूल शक नहीं। मनुष्य जातीके वह अच्छे हितचिंतक हैं यह हम मानते हैं। अब कुछ लोगोंका कहना है कि यदि मार्क्सकी श्रेष्ठता आप मानते है तो मार्क्सवाद क्यों नहीं मानते? हमारी भारतीय परंपरा यह नही है। कि मार्क्सकी परंपरा नहीं मानते इसलिये मार्क्स बडा झूटा और गलत आदमी था यह भी हम नही कहें। वह बडा श्रेष्ठ पुरुष था इसीलिये उसने कहा हुआ सबकुछ श्रेष्ठ या यह भी हम नहीं मानते हैं। क्यों की हमारी परंपरा अलग है। भगवान बुद्धके सारे मतका खंडन करनेवाले शंकराचार्यने यह कहा कि 'यआस्ते कलौ योगिना चक्रवर्ती सबुद्धः प्रबुद्धो सुनाश्चित्तवत्' कि वह बुद्ध भगवान हमारे हृदयमें जागृत रहें जिन्होने बुद्धके मतोंका खंडन कीया वे शंकराचार्य यह कहते हैं उन्होंने कहा कि जो कलियुग में

योगियोंके चक्रवर्ती हुअे वे बुद्ध भगवान हमारे हृदयमें सदैव जागृत रहे। तो व्यक्ति और उसके मत दोनोंको बायफरकेट करते हुए दोनोंका अलग अलग मूल्यांकन करना यह हमारी भारतीय पद्धति है। मार्क्स बडे है हमें उसमें कोई शक नहीं किन्तु उनका मार्क्सवाद जो है उसके बारेमें हम जब इव्हॅल्युअेशन करते हैं तब एक बात ख्यालमें आती है कि **मार्क्स वॉज नॉट अे लॉ गिव्हर**। हम इस बातको समझ लें। यह बहुत महत्वकी बात है। मार्क्स वॉज नॉट अे लॉ गिव्हर–लॉ गिव्हरका मतलब समझ लीजिये–कि जिन्होंने सोशिओ इकॉनॉमिक ऑर्डर दिया हैं--प्रिस्क्राइब कीया है उसको लॉ गिव्हर कहते हैं। जसे पाश्चिमात्य जगतमें '**मोझेस**' यह बडा लॉ गिव्हर हो गया, महंमद बहुत बडा लॉ गिव्हर हो गया, **हमारे यहाँ मनु आदि लोग लॉ गिव्हर हो गये**-किन्तु मार्क्सने लॉ नहीं दिया, याने सोशिओ इकॉनॉमिक ऑर्डर नहीं दिया। और क्योंकि उन्होंने लॉ नहीं दिया। उनके मतका- अभिप्रायका तरह तरहका इंटरप्रिटेशन करना बाकी लोगोंको संभव हुआ। कम्युनिझम यानें डेम्हिअेशॅनिझम है ऐसा लोग कह सकते हैं।

तो इसके कारण समाजकी धारणा कैसी हो इसका कोई विचार करेगा तो ये सारी बातें उसके ख्यालमें आयेगी। कार्ल मार्क्सने स्वयं कोईभी लॉ दिया नहीं, सोशिओ इकॉनॉमिक ऑर्डर प्रिस्काइब कीया नहीं यह एक बात। उन्होंने स्वयं जो अपने उद्देश्य सामने रखे हैं उनकी पूर्तीके लिये, सिद्धीके लिये उन्होंने जो मटीरिअॅलिझमका रास्ता बनाया है वह बिलकुल गलत है वह दूसरी बात। और इसके कारण कम्युनिस्ट देशोंमें नाना विभिन्न दृश्य दीखते हैं। नॅशनॅलिझम की बात तो यही है कि जगह जगह नॅशनॅलिझम ऊपर आ रहा है। हमारे यहाँ लोग हमको बताते हैं कि आप बडे नॅरो माइंडेड हैं क्योंकी आप राष्ट्रकी बात करते हैं। अभी जब मैं रुस गया था मुझे बडा आश्चर्य हुआ। इतना प्रखर राष्ट्रवाद रुसमें है कि कम्युनिझमके सिद्धांतके अनुकूल जिनको ठोकर लगानी चाहिये ऐसे पुराने राजा महाराजा उनके स्टॅच्यूज वहाँ हैं। बडे इज्जतके साथ हैं। हमे वे दिखाअे गये। पीटर दि ग्रेट है। कॅथॅरिन दि ग्रेट है, उनका मार्शल हो गया, इसने नाना लडाइयाँ जीत ली थी। केवळ अेक लडाई ये मार्शल हार गये थे वह याने अपनी पत्नी के साथ। शी डाय-व्हर्स्ड। बाकी सारी लडाइयाँ आपने जीत ली थी। कहींभी उन्होंने अपयश नहीं पाया था। तो इस तरहसे उनके थे राष्ट्रपुरुष याने नेशनबिलडर्स! किन्तु जो कम्युनिझमके सिद्धांतोंके अनु-सार कंडम करने योग्य हैं। उनकी राष्ट्रपुरुषके नाते इज्जत होती हैं। अपनी हरेक चीज बहूत पुरातन है यह दिखानेका प्रयास हो रहा है। हालाँकी हमारे यहाँ यह बताया जाता है कि 'डोन्ट लुक अॅट दि पास्ट'! हम लोगोंको लेनिनग्राड में वे ले गये। वहाँ नौ सो दिनतक लेनिनग्राडने हिटलरके साथ संग्राम किया था। और वहाँ पाँच लाख लोग मर गये थे उसकी सिमेट्री है। उसके बीच में एक

रेज्ड प्लॅटफॉर्म है। यहाँ अखण्ड ज्वाला जलती है। मैंने पूछा यह क्या है? तो बोले अखण्ड ज्वाला अपने मदरलँड के लिये जो मर गये उनकी स्मृती में। और उसके सामनेही मातृभूमी का बड़ा ब्रॉंझका स्टॅच्यू है। उसके हाथ में पुष्पमाला है। कल्पना यह है कि मातृभूमी अपने शहीद पुत्रों को, वीर पुत्रोंको माला अर्पण कर रही है। हर दिन सुबह शाम बडे रिच्युअल के साथ रिलीजिअसली वहाँ बडा गार्ड ऑफ ऑनर होता है। वहाँ कुछ हमने स्टॅच्यूज देखें जो देवताओंके थे। हिटलरने उनको नष्ट किया था। उन्होंने ये सब दुबारा जैसे के वैसे खडे कीये। हमने कहा आपका तो ग्रीक देवताओंपर विश्वास नहीं। इसमें तो ज्युपिटर है, व्हीनस है–ये कैसे? उन्होंने कहा हमारा विश्वास हो या न हो हिटलरने इनको क्यों तोडा? हमारा नॅशनल इनसल्ट करने के लिये! तो अपने नॅशनल इन्सल्ट को धोनेके लिये हमारा यह कर्तव्य हैं कि हम वैसे के वैसे इन स्टॅच्यूजको खडे करे। मानों यहाँतक कि हरचीज अपनी कितनी पुरातन है यह दिखानेका और अपना बडप्पन दिखानेका वे इतना प्रयास करते हैं कि हमलोग जब बैकाल लेकपर गये, वहाँ एक घंटा उन्होंने भाषण दीया। टेक्निकल होनेसे हम समझ नहीं सके लेकिन मतलब समझ गये कहनेका मतलब यह था। कि बैकॉल यह दुनियाका ओल्डेस्ट लेक है, स्वीटेस्ट है, डीपेस्ट है, ग्रेटेस्ट है, बिगेस्ट है, सुपरलेटिव्ह है। तो उनका यह जो पेट्रिऑटिझमका 'फॅनॅटिझम' था वह देखकर हम तो ऊब गये और हममेंसे एक आदमीने एकदम उद्‌गार निकाला, इट मे बी बिगेस्ट ॲन्ड डीपेस्ट ॲन्ड चीपेस्ट बट आफ्टर ऑल इट्स् नेम इज़ इंडियन। इन्होंने पूछा इस नाम का क्या मतलब होता है? उन्होंने कहा, इट्स् नेम ईज बैकॉल बंगाल में उसका मतलब लेट आफरनून होता है। बोलनेवाले हीरेन मुखर्जी थे मानो इनका भी नॅशनॅलिझम उनके कारण ऊपर उठ आया। हंगेरीमें हम लोगोंको एक आर्ट गॅलरी दिखाइ गयी। आर्ट गॅलरीमें तुर्क लोगोंमें लडाइ हो गई उसमें उनका एक राजा मर गया ऐसा एक चित्र था। तो वो लोग उसका बहुत बडा विवरण करते थे। अुनको ऐसा लगा की, हम लोग अुस लडाईका महत्त्व नही समझ रहे हैं। तो उन्होंने पूछा 'यू हॅव नॉट अंडरस्टूड दअु द क्रिटीकल वॉज दि बॅटल' तो हम उनकी ओर देखते रहे। उन्होने कहा **व्हॉट दि थर्ड बॅटिल ऑफ पानिपत वॉज फॉट दॅट लॉग फॉर अस**। मैंने सोचा की इनका राष्ट्रीयत्व जागृत है ही किन्तु कमसे कम इन्होंने हमारे साथीयोंसे कहा की पानिपत वॉर वॉज दि नॅशनल बॅटल। ये तो कमसे कम लाभ हुआ। क्यों की हमारे साथियोंको इसका पता नही था।

तो नॅशनॅलिझम आ रहा है। हम उसको रोक नही सकते। जो इंटरनॅशनॅलिझमकी बात करते थे ऐसे कम्युनिस्टोको अनाथिंकींग करना पडता है। अब दूसरा रीथिंकींग रिलीजनके बारेमें चल रहा है। इटालियन कम्युनिस्ट पार्टी, ब्रिटिश कम्युनिस्ट पार्टी,

जर्मन कम्युनिस्ट पार्टी, और फ्रेंच कम्युनिस्ट पार्टी ने ऐसा निर्णय लिया है की रिलिजन इज अँन ओपिनियन ऐसा मार्क्स ने जो कहा था वो उनके समय उन्होंने जो चर्च का दृश्य देखा उसके पृष्ठभूमी पर वह सही था। लेकिन उसके जनरलायझेशन न किया जाय। और जब हम किसी भी रलीजन के बारेमें बोलेंगे तब उस विशेष परिस्थितीमें उस विशेष कालखंडमें विशेष देशमें रिलीजनका कौनसा रोल है यह हम देखना पडेगा। और दॅट रोल मे वी डिफरंट अँकॉरडिंग टू दि टाईम। यह भी उन्होंने निर्णय लिया। रिलीजन क्या है यह समझ लेना चाहिये यहभी इच्छा निर्माण हुअी। और उसीके फलस्वरुप पीछले फरवरी में दस दिन तक ग्रेटब्रीटनमें कम्युनिस्ट पार्टीके सेक्रेटरीज और बिशप लोगोंका एक सेमिनार हुआ। बादमें उसका क्या हुआ इसका रिपोर्ट आया नहीं लेकिन एक दूसरेको समझनेकी– कोशिश चल रही है। और इतनाही नहीं तो हमारे देशमें भी इसका प्रभाव हो रहा है। यहाँके सब लोगोंने डांगे साहबके आर्टिकलस पढे होंगे। उन्होंने कहा था कि राणा प्रताप और शिवाजी क्या है ? यह तो किसान मजदूरोंकी भावना का एक प्रगटीकरण है। लेकिन अभी उनके एक साथीने जो किताब लिखी उसमें उन्होंने रिलिजन के बारेमें '**भक्तिकलह**' इस नामसे एक अलग चप्टर लिखा। और उसमें यह स्पष्ट रुपसे कहा कि शिवाजी यह रामदास और तुकारामको मानते थे। और यह कहा कि भक्तिकलह के कारण सेंट्रल इंडियामें, पंजाबमें, महाराष्ट्रमें पोलिटिकल इव्होल्यूशन्स हुई है। तो इस प्रकार इस बातको कम्युनिस्टोंकी द्वारा पहलीही बार स्वीकार किया गया। इतनाही नही तो मॅटर सबकुछ है यह कहनेके कारण कम्युनिस्टोंका जो मटीरिअँलिस्टिक इंटरप्रिटेशन ऑफ हिस्ट्री था जिसमें यह कहा गया था कि रिलिजन, कल्चर, अेथिक्स सारे सुपर स्ट्रक्चर हैं। रिलीजन, कल्चर अेथिक्स अँन्ड एव्हिरीथिंग इज मोल्डेड बाय सोशिअो इकॉनॉमिक कन्डिशन्स। ह्यूमन माइंड इज दी प्रॉडक्ट ऑफ सोशिओ इकॉनॉमिक कंडीशन्स। ये सारी बातें जो मटीरिअँलिस्टिक इंटरप्रिटेशन ऑफ हिस्ट्री के अनुसार कही जाती थी। आज वहाँ उन्होंनेही उसी किताबमें कहा है कि ये बात तो ठीक है लेकिन यह भी बात ठीक है कि जैसे सोशिओ इकॉनॉमिक कन्डीशन यह अेथिक कल्चर के ऊपर अँक्शन करती है वैसे यह बात ठीक है कि रिलीजन, कल्चर अेथिक्स, सोशिओ इकॉनॉमिक कण्डिशन्सपर अँक्शन करती हैं। दे अँक्ट अँन्ड रीअँक्ट अपॉन ईच अदर। और इसी तरहसे इतिहास है ऐसा उन्होंने कहा।

लेकिन उनको लगा कि शायद कुछ लोग कहेंगे कि यह तो मार्क्ससे आपका डिव्हिअेशन है। तो उन्होंने अलग शब्दोंका उपयोग किया। उन्होंने कहा कि मार्क्सका मंतव्य तो वही होगा किन्तु कुछ डॉग्मॅटिक मार्क्सिस्ट इन इंडिया बराबर इंटरप्रीट नही कर सके। यह भी मार्क्सिस्ट ही है। उन्होंने कहा सम डॉग्मॅटिक मार्क्सिस्ट। लेखकका नाम है के. दामोदरन् M. P. राइट कम्युनिस्ट पार्टीके नेता है। यह भी मैं सेलस् अेबंटके

नाते नहीं बोल रहा हूँ। (किताब है इंडियन थॉट) किताब बडी है २० रु. कीमत है। मुझे कुछ कमिशन देनेका कोई वादा उन्होंने नही किया। तो वह किताब है इन्डियन थॉट बाय के. दामोदरन्। तो इस तरहसे जो उनका अभीतकका विचार था उसमें रीथिंकिंग चल रहा है यह आपको स्पष्ट दिखाई दे रहा है।

और यहाँतक बात है कि जो सबसे बडी चीज मार्क्सने कही थी कि ह्यूमन हिस्ट्रीका इतना लंबा पीरियेड पढनेमें हम फिजूल समय खर्च क्यों होने दे ? इट शुड बी ॲक्सिलरेटेड, और इसलिये जैसे ऑपरेशन करके बच्चेको निकाला जाता है वैसे ब्लडी रेव्हल्यूशन के द्वारा कम्युनिस्ट सोयायटी की स्थापना हुयी ऐसा उल्लेख उसमें होना चाहिये। जिन चार कम्युनिस्ट पार्टीजका मैंने नाम लिया इन फ्रेंच, ब्रिटिश, जर्मन और इटालियन कम्युनिस्ट पार्टीजने अधिकृत नीतीके नाते यह कहा कि हम इस बातपर आज कन्व्हिन्स्ड नहीं हैं कि ब्लडी रिव्होल्यूशन इज ए मस्ट! हमें लगता हैं कि आजकी जो डेमॉक्रॅटिक सिस्टिम है उसके द्वाराभी कम्युनिस्ट सोसायटी आ सकती है। तो हमें इसके बारेमें कोई फायनल अभिप्राय देनेके पहले कोई एक्सपरिमेंट करनेके लिये टाईम चाहिये ऐसा उन्होंने स्पष्ट रुपसे कहा!

फ्युडॅलिझमके बारेमें आपने देखा होगा। फ्युडॅलिझमके बारेमें हमारे यहाँ वैसे यह भी बिल्कुल कहा गया था कि मार्क्सने जैसे एक लाइन दी है कि 'फ्रॉम प्रिमिटिव्ह कम्युनिझम टु स्लेव्हरी' उसी पध्दतीसे और यहाँ फ्युडलिझम था ऐसा अभी अभीतक कम्युनिस्ट कहते थे। अब यहाँके विचारक कम्युनिस्टोंने, राइट कम्युस्टोंने यह कहना शुरू किया कि मोगल पीरियडतक यहाँ फ्युडॅलिझम नामकी कोई पद्धति नहीं थी। बादमें आगयी। तो हमने उनको कहा कि आप यदि कहते हैं कि यहाँ फ्युडॅलिझम नहीं था फिर यहाँ पद्धति कौनसी थी? उन्होंने कहा कि भाई देखिये–कौनसी पद्धती थी। यह अध्ययन करके निश्चित करना पडेगा। हम अध्ययन कर रहे हैं। लेकिन हाँ। अभी कुछ न कुछ मान लेनेके लिये तो चाहिये। और इसलिये मार्क्सने एक जगह शब्द प्रयोग कीया है–'ओशियाटिक ऑर्डर ऑफ सोसायटी'। तो अभी सुविधाके लिये कहते है कि, 'बिफोर मोगल पीरियड देअर वॉज ओशिअटिक ऑर्डर ऑफ सोसायटी इन इंडिया'। ओशियाटिक ऑर्डर ऑफ सोसायटीका विवरण बादमें अध्ययनके बाद करेंगे। माने इस तरहसे बडे पैमानेपर रीथिंकिंग चल रहा है। माने उन्होंने अपने सारे सोर्स चेंज कर दिये यह तो कहनेका मतलब नहीं! किन्तु कम्युनिस्टोंको रीथिंकिंग करना पडा। कम्युनिस्टोंकी अपने सिद्धांतोंके बारेमेंही श्रद्धा टूट रही। कुछ कम्युनिस्टोंने हमको यह कहा कि ठेंगडीजी आप जो

समाज-रचना

★ स्वा. श्री. दत्तोपंत ठेंगडी

अपना यह भारतीय मजदूर संघ आर्थिक क्षेत्रमें काम कर रहा है। आजकल बहुत लोगोंका ऐसा ख्याल है कि आर्थिक विचार, आर्थिक चिन्ताए यह एक नयी प्रक्रिया है, मॉडर्न प्रोसेस है। और हम लोग मॉडर्न प्रोग्रेसिव्ह (modern Progressive) होनेके कारण इसका स्वीकार कर रहे हैं। जबसे इस दुनियामें प्रोग्रेसिव्ह लोग आये तबसे यह विचार शुरु हुआ, पहले यह नहीं था, ऐसा कुछ सोचा जाता है। वास्तवमें यह बात गलत है। बिलकुल प्रारंभिक कालसेभी सामाजिक, आर्थिक रचना किस तरहकी हो इसका विचार हरेक समाजमें अपने अपने ढंगसे कीया जाता था! जहाँतक भारतवर्षका संबंध है, आज अपने भाईसाहब वैद्यने कुछ बातें आपके सामने रखी। जिससे प्राचीन कालके विषयमें कुछ निष्कर्ष आपको निकालने हैं, वे आप निकाल सकते हैं। यह तो एक भारतकी विशेषता है। किन्तु उसके अलावा भी ऐसा दीखेगा कि जिस समय (civilization) सिव्हिलिझेशन बहुत जादा बढी हुभी नहीं थी उस समय भी और आज भी जो अनसिव्हिलाइज्ड लोग माने जाते हैं ऐसे लोगोंमें भी उनकी अपनी सामाजिक आर्थिक रचना, उनके अपने परिस्थितियोंके, आवश्यकताओंके अनुकूल हमेशा कुछ न कुछ रहती थी ऐसा इतिहास बताता है। आफ्रिका आजभी अनसिव्हिलाइज्ड् माना जाता है। तो भी वहाँ के जो (Tribals) ट्रायबल्स हैं उनकी भी अपनी एक रचना है। जिसमें आपसमें उनके परस्पर सम्बन्ध क्या रहें? सामाजिक और आर्थिक सम्बन्धोंका नियमन कैसा हो? अब यह बिलकुल प्राथमिक अवस्था की होगी, प्रिमिटिव्ह टाइपकी होगी। लेकिन कुछन कुछ उनकी व्यवस्था है। वैसेही संसारमें जोहि श्रेष्ठ पुरुष, विचारक, लॉ-गिव्हर्स, समाजके बारेमें विचार करने वाले निकले, उन्होंने अपने अपने परिस्थिती और आवश्यकताओंके अनुकूल कुछ न कुछ रचना बताई। केवल उदाहरण के लिये थोडीसी बातें हम बताएँ।

पंथ प्रवर्तक-लॉ गिव्हर्स

वैसे तो अपने भारतवर्षके बारेमें कहा गया कि, हमारे यहाँ एक रचना थी। विभिन्न समाजोंका अध्ययन करनेपर पता चलता है कि जिनको आर्थिक विचारक नहीं माना जाता, किन्तु जो समाज कल्याणका विचार करनेवाले थे, ऐसे लोगोंने सब बातोंके साथ आर्थिक पहलु पर भी कुछ विचार कीया था, कुछ कानून दीया था। उदाहरणके लिये हम जानते हैं कि पाश्चिमात्य जगतमें सबसे पहला रिलिजन यदि कोई होगा तो वह ज्यू लोगोंका, यहुदी लोगोंका है। उनके अन्दर लॉ गिव्हर के नाते '**मोझेस**' का महत्व है। और कोई लोग इस बातको जानते हैं कि 'विकली पेड हॉलिडे' यह जो कल्पना है वह कल्पना पाश्चिमात्य जगतमें मोझेसके विचारसे निकली। हम लोग यह जानते हैं कि दूसरे श्रेष्ठ विचारक '**जीझस ख्राइस्ट**' थे। कई बातें उन्होंने कही। केवल तीन वर्षका उनका कार्यकारी जीवनकाल था। वे कुछ रचना नहीं दे पाये। किन्तु जिस ढंगसे उन्होंने शिक्षा दीक्षा दी, उसके कारण, उनके मृत्यूके तुरन्त पश्चात उनके अनुयायिओंने एक 'कम्युनिटी ऑफ गुड्स' की स्थापना की। इस कम्युनिटी ऑफ गुड्सकी विशेषता यह थी कि उसमेंका हरेक सदस्य चाहे जितनी प्राप्ती करें, आमदनी ले आये; जोभी हरेककी आमदनी होगी वह कम्युनिटीकी होगी, संपूर्ण गुटकी होगी। और वह जो गुटका पूल होगा, 'पूल ऑफ प्रॉपर्टी' उसमें अपनी अपनी आय हरेक डाले और उसमेंसे हरेकी आवश्यकताके अनुसार उसको जो कुछ दीया जाय, वह ले सके। इस तरह की 'कम्युनिटी ऑफ गुड्स' की स्थापना जीझसके मृत्यूके तुरन्त पश्चात हुओ थी। इसका मतलब यही है कि यह जो सम्भव हो सका वह उनकीही शिक्षा दीक्षाका जो स्पिरिट था उसकेही कारण हो सका, यह बात स्पष्ट है। महंमद साहबके बारेमेंभी हम लोग जानते हैं कि उनके समय मानों चौदहसौ साल पहले, उनके सामने जो समाजका दृश्य था; उसके अनुकूल उन्होंने कुछ नियम दिये। धन प्राप्त करनेके जायज और नाजायज रास्ते कौनसे हैं यह प्रिस्क्राइब कीया। खर्चा करनेके जायज और नाजायज रास्ते कौनसे हैं यहभी प्रिस्क्राइब कीया। लॉ ऑफ इनहेरिटन्स इस तरहसे बनाया, कि जिसके कारण ज्यादासे ज्यादा संपत्तीका विकेंद्रीकरण, डी सेंट्रलाइझेशन ऑफ वेल्थ हो सके। हरेकने पब्लिक एक्सचेकरको ढाई पर्सेंट अपने आयसे देना चाहिये इस तरहकी एक जकातकी पद्धति बिठाई। स्वेच्छा से समाजको कुछ देनेके लिये एक 'सदाकत' नामकी पद्धति बिठाई। और यह नियम बनाया कि भाइ अपने समाजमें जो नये नये उद्योगशील लोग सामने आते हैं उनको जो कर्ज दीया जाता है उसको ज्यादा बोझ न हो इस दृष्टीसे किसीने सूद नहीं लेना चाहिये। इन्टरेस्ट चार्ज नहीं करना चाहिये। मानो इस बात पर उन्होंने आग्रह दीया जो उस समय आवश्यकता थी। किसीने उनको पूछा, कि यदि

कोई आदमी नमाज नहीं पढता तो वह स्वर्गमें जा सकेगा क्या? महमदसाहबने कहा कि भाई वह नहीं जा सकता। फिर पूछा गया कि भाई कोई नमाज पढता तो है लेकिन कर्जपर इन्टरेस्ट चार्ज करता है, तो क्या वह स्वर्गमें जा सकेगा? तो, उन्होंने कहा कि वह कितनाभी नमाज पढनेवाला हो उसके लिये स्वर्गके द्वार खुले नहीं है। मानों इस तरह से कुछ निश्चित विचार १४०० सालके पहले, जो वहाँकी परिस्थिती थी, आवश्यकताएँ थी, उनके अनुकूल उन्होंने रखे और एक रचना दी। अपने यहाँ भी जो पारसी लोग हैं उनकी परिस्थिती के अनुकूल झरथुष्ट्रने कुछ रचना बताई। उनका एक नियम बहुतही सुप्रसिद्ध है। हुमत, हुक्त, हवर्ष, याने 'थॉट वेल थॉट, वर्डस् वेल स्पोकन्, डीड वेल डन्।' इसके आधार पर उन्होंने एक रचना बताई। जिसके कारण बहुत अच्छी तरहसे वहाँ कई सालोंतक शतकोंतक उनकी सामाजिक, आर्थिक धारणा हो सकी, ऐसा दीखता है।

भारतीय संप्रदायों की रचनायें

ऐसे कई उदाहरण अपने देशमें भी है। अर्वाचिन इतिहासमें भी है। भगवान बुद्धके बारेमें हम लोग जानते हैं कि सारी जो उनकी शिक्षा है उसकी (स्पिरीच्युअल) अध्यात्मिक बातें छोडकर भी नोकरोंके साथ किस तरहका व्यवहार करना चाहिये इसके संबंधमें स्पष्ट सूचनाएँ उनके लेखनमें हमें प्राप्त होती हैं। जैनिझम के बारेमें शायद कुछ लोग जानते होंग, कि उन्होंने तो यहाँतक रचना दी है कि जो श्रेष्ठ पुरुष माना जाता है, उनके लिये कहा कि उन्होंने 'परिग्रह परिमाण व्रत' का पालन करना चाहिये। परिग्रह परिमाण व्रतका मतलब होता है कि आप चाहें जितनी प्रॉपर्टी अर्जन करें किन्तु जितना अपने लिये अति आवश्यक हैं उतनाही केवल अपने पास रखा जाय। और बाकी सारा समाजको दीया जाय। इस तरहसे, स्वेच्छासे, अति आवश्यक याने जो केवल उदरभरणके लिये आवश्यक है उतनी छोडकर, बाकी संपूर्ण संपत्ती समाजको देनी चाहिये। मानों चाहे जितना अर्जन करें, लेकिन अति आवश्यक छोडकर, सारा समाज को देना चाहिये। यह 'परिग्रह परिणाम व्रत' उन्होंने बताया। सिखख संप्रदायके बारेमें भी लोगोंको पता होगा, कि जहाँ उन्होंने लडाइयाँ की वहाँ सिखिजमका भी प्रचार किया। यह जो आर्थिक पहलू है वह उनके आँखोंसे ओझल नहीं हुआ। केवल उदाहरण के लिये एकही बात मैं कहूँगा। बन्दा बैरागी ने जैसेही अपना एक छोटासा राज्य स्थापन किया पहली बात यदि कुछ की होगी, तो लँड रीडिस्ट्रिब्यूशन किया। जो लँडलेस लेबर था उसके बीचमें सारी जमीन उन्होंने बाँट दी। माने यह पहलू कोई आँखोंसे ओझल हो गया, था ऐसा नहीं दीखता।

प्रायव्हेट प्रॉपर्टी कितनी हो

अपने यहाँ तो प्राचीन कालसे यह सारी बातें आयी हुअी हैं। प्रायव्हेट प्रॉपर्टी हरेककी कितनी क्या रहें ! हमारे यहाँ तो स्पष्ट कहा गया कि **यावद् भ्रियेत जठरम् तावद् स्वत्वम् हि देहिनाम्। अधिकम् योऽभि मन्येत सस्तेनो दण्ड मर्हति।** याने आपके उदर में जितनाभी समाविष्ट हो सकता है उतनाही आपका, याने प्रायव्हेट प्रॉपर्टीके नाते हो सकता है। उस से जादा जो क्लेम करेगा वह चोर है, और उसको दण्ड देना चाहिये। इस तरह की बात कही। प्रॉडक्शन बहुत करो लेकिन सारा डिस्ट्रिब्यूट करो इस तरह की आज्ञा अथर्वमें भी आती है। 'शतहस्त समाहर, सहस्रहस्त वीकिर' प्रोडयूस बाय हंड्रेड हॅन्डस् डिस्ट्रिब्यूट बाय थाउजन्ड हॅन्डस्। इस में एम्फसिस क्या है हम भी देख सकते हैं। ईशावास्य की पंक्तियाँ तो सुप्रसिद्धही हैं। जो कुछ है वह भगवानका ही है, 'तेन त्यक्तेन भुञ्जीथाः'। इस से जादा विवरण की कोइ आवश्यकता नहीं। तो इस तरह से जोभी सारे श्रेष्ठ विचारक हो गये, उन्होंने जहाँ संपूर्ण समाजका विचार किया वहाँ आर्थिक पहलूका भी विचार किया और अपनी अपनी परिस्थितीमें जो उन्हें आवश्यक और उचित लगा वह उन्होंने समाजके सामने रखा ऐसा हम देखते हैं। इस दृष्टीसे हम लोगोंका यह अहंकार शायद वृथा है कि बस भाई हम प्रोग्रेसिव्ह हैं, मॉडर्न है, हमनेही यह विचार शुरू किया है यह वृथा अहंकार है।

आज की गलत धारणा

प्राचीन कालसे हरेक समाजमें, हरेक जातीमें, जातीका, मेरा मतलब कम्युनिटी है, हरेक राष्ट्रमें इस तरहसे समाज धारणाकी चिन्ता रखनेवाले लोक थे। और इसी दृष्टीसे समाजधारणा होती रही। अब आज हम मॉडर्न टाइम्समें आ गये। और इस दृष्टीसे अब दूसरा विचार हमारे देशमें शुरू हुआ कि भाई, जो प्राचीन व्यवस्था होगी उसका विचार छोडें। अभी हम लोगोंने भूतकालका विचार छोडना चाहिये। केवल भविष्यकी ओर देखना चाहिये। और भविष्यकी ओर देखना होगा याने अजकल जिस तरहसे सारे देशमें एक लहर फैली है कि पाश्चिमात्योंका अनुकरण करना चाहिये, वहाँकी विचारधाराअें उठाकर यहाँ ले आनी चाहिये, तभी हम लोगोंका उद्धार हो सकता है ऐसा एक विचार आजकल चल रहा है। यह कुछ स्वाभाविक भी हैं क्यों कि हम लोग बहुत सालतक पराधीन थे, और भौतिक दृष्टीसे पाश्चिमात्य जगत बहुत प्रगत है। सब लोगोंके

मनपर ऐसा कुछ प्रभाव भी हुआ है, कि भाई वहाँकी जोभी चीज है वह अच्छी होनी चाहिये। क्यों कि वह वहाँकी है। हमारी जोभी चीज है वह खराब होनी चाहिये क्यों कि वह हमारी है। लगता है की इस तरहका निश्चिय कई लोगोंके मनमें हुआ है। और इसलिये अब एक दूसरी तरहसे भी सोचा जाता है। वह याने पाश्चिमात्य जगतमें एक नयी फॅशन चल पडी, वह फॅशन क्या है कि सामाजिक, आर्थिक जीवनका विचार इझमकी परिभाषामें होना चाहिये। हरेकको कोई न कोई इझम होनाही चाहिये। मानो जैसे, प्रतिष्ठित होनेके लिये जो आवश्यकता होती है, प्रीरिक्विझिट्स होती हैं, जैसे कि टाय पहनना चाहिये: बगैर टायके आप रहेंगे तो फिर आप कम प्रतिष्ठित माने जाओंगे। तो वैसे इझम भी हरेकको होना चाहिये। आपका इझम नहीं रहेगा तो आपकी प्रतिष्ठा कम है, यह एक धारणा होने लगी है। इस दृष्टीसे पाश्चिमात्य जगतमें कई इझम्स हैं। हम लोगोंकोभी पूछा जाता है कि भाई आपका इझम क्या है? और जिस समय हम लोग बताते हैं कि हमारा कोई इझम नहीं। तो अपनेमी कुछ लोगोंको लगता है कि यह बडी कमी है। इझम तो होनाही चाहिये था। जैसे बगैर टायका आदमी रहे तो कुछ कमी मालूम होती है वैसे बगैर इझमके आदमी रहे तो ठीक नही, कुछ न कुछ तो इझम होनाही चाहिये। इस तरहका एक प्रभाव लोगोंके मनपर दिखाई देता है।

ईझम का मतलब अेक रास्ता

तो इस दृष्टीसे अपना विचार क्या है? हम जरा सोचें! एक एक इझमका विचार यदि छोड दिया तो भी सर्वस धारण दृष्टीसे, इझमके विषयमें हमारी प्रतिक्रीया क्या है! ईझमका मतलब यही होता है कि एक विशेष परिस्थितीमें विशेष समाजके सामने जो समस्यायें हैं, उनको सुलझानेकेलिये निकाला हुआ रास्ता। वह रास्ता अच्छा रहे, बुरा रहे, सही रहे, गलत रहे, किन्तु एक रास्ता। काहेके लिये? तो एक विशेष कालखण्डमें एक विशेष समाजके सामने जो समस्याएँ रही हैं उनको सुलझानेके लिये निकाला हुआ रास्ता, वह रास्ता याने इझम है।

हरेक की उपयोगिता

अब दुनियामें जोभी चीज निकलती है उसकी कुछ तो उपयोगिता होती है। हमारे यहाँ कहा गया '**अमंत्रमक्षरम् नास्ति**' कोई अक्षर नहीं है जिससे मंत्र नहीं बन सकता है। और '**नास्ति मूलमनौषधम्**'। कोई वनस्पति नही है जिससे औषधी नहीं बन सकती। अब इस अर्थमें देखा जाय तो हरेक चीजकी कोई उपयोगिता होती ही है। भगवानने यहाँ जो संसार बनाया है, इसमें साधुपुरुषोंकीभी उपयुक्तता है और जो साँप हैं, शेर हैं, उनकीभी

कुछ उपयोगिता है। चुहेकीभी उपयोगिता हैं, बिल्लीकीभी उपयोगिता है। माने बिलकुल जिसकी उपयोगिता नहीं है ऐसी कोई वस्तु नहीं। कोई विचार यदि निकलता है तो इसका मतलब यही है कि परिस्थितियाँ ऐसी हैं, आवश्यकताएँ ऐसी हैं, जिनके फलस्वरूप यह विचार लोगोंके मनमें आया यह तो बात स्पष्ट है। और इस दृष्टीसे कोई भी ईझम हो, कोई भी विचार हो, उसकी कुछ ना कुछ सीमित उपयोगिता है यह बात भी ठीक है। किन्तु कोई भी ईझम ऐसा है कि जो पॅनेशिया है, सभी बीमारियोंके लिये रामबाण इलाज है, सभी देशोंमें, सभी समाजोंके लिये, सभी परिस्थितियोंमें उसकी उपयोगिता है, यह मान लेना कुछ गलत मालूम होता है। क्यों की हम सोचें, कि एक विशेष परिस्थितीमें एक विशेष समाजके लिये जो चीज उपयुक्त होगी वह उसी समाजके लिये विभिन्न परिस्थितिमें शायद उपयुक्त नहीं होगी। या उसी कालखंडमें विभिन्न समाजोंके लिये उपयुक्त नहीं होगी। उदाहरण के लिये आप देखीये। लोग हमें बताते हैं, जैसेकी हमने कैलेंडर कभी देखा नहीं– कि 'साब अब यह बीसवी शताब्दी है' हम कहते हैं कि अच्छा आपने यह बडी न्यूज हमें दी। लेकिन उनके कहनेके अनुसार आजका भी यदि हम विचार करें, सोचें, कि क्या ऐसा कोई ईझम निकाला जा सकता है कि जो बीसवी शताब्दीके १९६८ साल के लिये उपयुक्त होगा। तो लगता है, ऐसा एक ईझम निकालना बडा कठीन है। क्योंकि एकही कालखंडमें रहनेवाले, विभिन्न समाजोंके सामने जो समस्याएँ हैं उनका स्वरूपही भिन्न है। अब हमारे सामने समस्या है कि साधन कम हैं खानेवाले लोग ज्यादा हैं। अमरिकाके सामने सवाल है कि पैसा बहूत ज्यादा है खानेवाले कम हैं। इसलिये उनका ईझम है 'कन्झ्यूम मोअर', हमारा है 'कर्टेल दि वॉन्टस्' याने दोनों १९६८ में रहते ह, किन्तु यहाँ की परिस्थिति हमें ऐसा कहने के लिये बाध्य करती है कि 'कर्टेल दि वॉन्टस' ऑस्टेरिटी आनी चाहिये। और अमरिकामें ईझम चल रहा कि दो सालसे जादा किसीने अपनी मोटर उपयोगमें नहीं लानी चाहिये उसको बदल देना चाहिये।

ईझम – रामबाण इलाज नहीं

तो एकही कालखंड में यदि विभिन्न परिस्थितियों में विभिन्न समाज हैं तो उनके लिये एक कोई ईझम उपयुक्त नहीं हो सकता। वैसे एकही समाज के लिये विभिन्न कालखंडमें एकही विचार उपयुक्त नहीं हो सकता। जैसे हम उदा. के लिये यह सोचें– मुझे स्मरण है कि जब मैं छोटा बच्चा था, मराठी की कुछ पाठ्यक्रम की पुस्तक पढता था, उस में इधर के बम्बई पूना के लोगों के लेख आदि रहते थे। तो उस में रहता था कि बालविवाह नहीं होने चाहिये। और बालविवाह क्यों नहीं होने चाहिये इस के बारेमें बडे तर्क– अर्ग्युमेंट्स उसमें आते थे। तो बचपनमें हम इतना तो समझ गये कि जिस समय ये

लेख लिखे गये उस समय बालविवाह चलते होंगे। अब ७५ साल हो गये। अब मान लीजिये कि कोई आदमी पूना में जाकर भाषण देगा कि बालविवाह नहीं होने चाहिये– और क्यों नहीं होने चाहिये इसके बारे में ये मेरे तर्क हैं। उसको लोग ठाना में भेजेंगे, पागलखाने में भेजेंगे। क्योंकि आज परिस्थिति बिलकुल उलटी है। बालविवाह यह आजकी समस्या नहीं तो बम्बई पूना में यह समस्या है कि अति प्रौढ विवाहोंको किस तरह रोका जा सकता है। यह समस्या अभी बम्बई पूनामें है। तो इस दृष्टीसे जो ही विचार शायद ७५ सालके पहले वहाँ के समाज के लिये बडाही उपयुक्त मालुम होता था, आज उसी ढंगसे वह विचार उपयोगी नहीं हो सकता। और इस दृष्टीसे कोई भी विचार या कोई भी एक ईझम यह रामबाण इलाज है यह समझना गलत है। इसका एक तो कारण ऐसा है कि परिस्थितियों में फरक पडता है। दूसरा भी कारण है– जो कोई विचार या ईझम बनता है– मत बनता है, वह उसके निर्माण के समय मनुष्य समाज की जो टोटल जानकारी होगी, टोटल नॉलेज होगा, उसीके आधारपर बनता है।

मार्क्स की कॉस्मॉलॉजी गलत थी

अब हम यह देखते हैं कि मनुष्यका ज्ञान बदला जा रहा है 'फ्रॉंटियर्स ऑफ ह्यूमन नॉलेज आर एक्स्पांडिंग.' और इसके कारण जो बात कल सही मानी जाती थी वह आज गलत मानी जाती है। हम उदाहरण के लिये एक दोही बातें लें। हम जानते हैं कि मार्क्सने अपना एक वैश्विक दर्शन दिया – कॉस्मॉलॉजी दी। कॉस्मॉलॉजीमें क्या होता है ? उसमें तीन बातोंका विवरण करना पडता है–व्हेन्स ? व्हिदर ? हाऊ ? यह जो सारा अस्तित्व है वह अस्तित्व कहाँसे आ रहा है ? किधर जा रहा है ? जानेकी प्रक्रिया क्या है ? तीन बातोंका विवरण देना पडता है। अब उस समय जितनाहि सारा सायन्स था, मार्क्सने उसका बराबर अध्ययन किया था। उन्होंने उस आधारपर ही उनको जबाब दिया। उसमें कोई दोष नहीं। उस समय जो कोई सायन्सकी प्रगति थी उसके आधारपर उन्होंने कहा कि फिजीक्समें, फिजिकल सायन्समें **न्यूटनने** जो आखिरी शब्द उस समय कहा था कि सारा जो कुछ भी निकला है – वह मॅटरसे निकला है। मार्क्सनेभी कहा कि सारा जो कुछ निकला है मॅटरसे निकला है। उस समयके बायोलॉजीमें आखिरी शब्दके नाते **डार्विनने** कहा था कि सारा यह जो प्राणिमात्र है वह उत्क्रांतीकी, इव्होल्यूशनकी ओर जा रहा है। उसीको सोशॅलॉजीपर ॲप्लाय करते हुअे मार्क्सने कहा कि यह सारा इव्होल्यूशनकी ओर जा रहा है। इव्होल्यूशन याने अपवर्ड मूव्हमेंट ऑफ मॅटर। अब उसका जो सायन्सका ज्ञान था, उसके आधारपर यह ठीक था। लेकिन अब हम देखते हैं कि **डार्विनके** बाद अब लोग सोचने लगे कि सारा जो कुछ जा रहा है वह केवल इव्होल्यूशनकी ओर

नहीं। तो उसमें इव्होल्यूशनभी है इन्व्होल्यूशनभी है। उत्क्रांतीभी है-अपक्रांतीभी है। और इव्होल्यूशन, इन्व्होल्यूशन और प्रोजेक्शन, जिसको हमारे यहाँ सृष्टी कहा गया यह कन्टीन्युअसली, सायमल्टिनिअसली चल ही रहा है। तो सबकुछ इव्होल्यूशनकी ओर जा रहा है यह कहना बडा गलत होगा। तो यही कहा जा सकता है कि इव्होल्यूशन और इन्व्होल्यूशन ये दोनों प्रक्रियाएँ सायमल्टेनिअसली चलती जा रही हैं। अब यह नया विचार है-सायन्सका है किन्तु इसके कारण **डार्विनका** जो विचार था वह इनॲडिक्वेट याने अपर्याप्त था यह सिद्ध हुआ। और उसके आधारपर फिर जो मार्क्सने कहा था वह भी इनॲडिक्वेट था, अपर्याप्त था। पूरा, सही नही था यहसिद्ध हो जाता है। फिजिकल सायन्सेस की दृष्टीसे **आइनस्टाइनने** एक बात खोजके निकाली कि मॅटर कॅन बी कनव्हर्टेड इन्टु ॲनर्जी, ॲनर्जी इन्टु मॅटर-दोनों इन्टर कन्व्हर्टिबल हैं। तो इसके कारण मॅटरका जो प्रायमरी-फन्डमॅंटल स्वरूप था-वह नष्ट हुआ। और इसके कारण सारा मटिरिॲलिझम का बेस था वह भी खतम हुआ। और इसके कारण मार्क्स ने जो एक मौलिक बात कही थी वह बात ठीक नहीं थी ऐसा आज सायन्सके आधारपर कहा जा सकता है।

परिस्थितियाँ परिवर्तनशील हैं

अब यह तो कॉलेजस्टूडंटभी कह सकता है। लेकिन **आइनस्टाइनने** जो भी संशोधन कीया और उसके कारण, मार्क्सने जो आखिरी शब्द इस नाते लिखा, वह यदि गलत सिद्ध होता है, तो आजका कॉलेजस्टूडंटभी मार्कससे बडा विद्वान होता है ऐसा इसका मतलब नहीं। यह एक स्वाभाविक बात है। हमारे यहाँ द्रष्टा नामकी जो कॅटॅगरी है उसको छोडकर, कोईभी श्रेष्ठ पुरुष, जब विचार करेगा, निष्कर्ष निकालेगा, सिद्धांतका प्रतिपादन करेगा, तो वह उसके जीवन कालमें जो 'लास्ट वर्ड ऑफ विस्डम' होगा वैज्ञानिक क्षेत्र की लास्ट इन्फर्मेशन जो होगी उसीके आधारपर करेगा। और यह जो उसके विचारोंका, सिद्धांतका इझमका फाउंडेशन है उसीमेंही यदि परिवर्तन हो जाता है, बढते हुए जानकारीके कारण उसमें बदल हो तो फिर वह जो ईझम है वह भी उस मात्रा में अपर्याप्त या गलत सिद्ध होगा इसमें कोई आश्चर्य नही। तो दोनों कारण ऐसे हैं, कि एक तो परिस्थितियाँ परिवर्तनशील हैं, और सभी परिस्थियोंमें उपयुक्त ऐसा कोइ सिद्धांत हो नही सकता। इस दृष्टी से, और दूसरा कि फ्रॉंटिअर्स ऑफ ह्यूमन नॉलेज आर ॲन्डर ॲक्सपांडिंग। और कोई भी सिद्धांत निकलेगा तो आजकी परिस्थितिके आधारपर निकलेगा, दोनों बातोंके कारण हम ईझमको 'पॅनिशिया।' माननेकेलिये तैयार नहीं।

मेमोरॅण्डम कलेक्टिव्ह थिंकींग

हम किसी इझमके हैं यह कहनेमें गर्वकी अनुभूति हो ऐसा तो हम नहीं समझते। अब लोगोंका उदाहरण क्या लें? हमने तो कहा कि केवल विचारकी दृष्टीसे यदि कहा जाय तो अभी भारतीय मजदूर संघकी ओरसे जो मेमोरेण्डम नॅशनल कमिशन ऑन लेबर को सबमिट हुवा है वह सब लोगोंकी सलाहसे, सबको पूछते हुए-तैयार हुवा। कहा गया कि इट इज ए डाक्युमेंट ऑफ अवर कलेक्टिव्ह थिंकिंग ॲन्ड कलेक्टिव्ह विस्डम। तो इस तरहसे यह सबमिट हुआ। हमने वह सोच समझकर दिया। कोई यदि हमें पूछें तो मैं कहुँगा कि इसकी बहुत उपयोगिता है, बहुत महत्व है, इस में कोई शक नहीं। लेकिन कोई यह कहेगा कि 'धिस इज द लास्ट वर्ड ऑन लेबर प्रॉब्लेम' तो समझना चाहिये की यह बात गल्त है। जब परिस्थितियाँ बदल जायेगी इसकी उपयोगिता कम हो जायेगी। हम यह कहें कि १९६८ में हमारी दृष्टी से यह मोस्ट व्हेल्युएबल डॉक्युमेंट है। किन्तु १९९० में यही मोस्ट व्हेल्युएबल डॉक्युमेंट रहेगा ऐसा आज कहना याने-मानों परिस्थितियाँ परिवर्तनशील हैं इस बातको आँखोंसे ओझल करना है।

ईझम-क्लोज्ड बुक ऑफ थॉट

तो इस दृष्टीसे इझम यह पॅनेशिया हो नहीं सकता। क्योंकि इझम की एक विशेषता है। कोई भी इझम रहे, इधरका रहे, उधरका रहे- इझमका मतलब ही होता है कि इट इज ए क्लोज्ड बुक ऑफ थॉट। इझमका मतलब ही है कि इट इज ए फायनॅलिटी, आखिर शब्द है। जो है वह माने क्लोज्ड बुक ऑफ थॉट। और यदि कोई कहे- कि ये क्लोज्ड नहीं है- द मोमेंट इट सीजेस्ट टु बी क्लोज्ड इट सीजेस्ट टु बी ॲन ईझम। ये क्लोज्ड नहीं है ऐसा कहा जाय तो यह इझम नहीं रहता। अब परिस्थितियाँ डायनॅमिक हैं, सभी इझम्स स्टॅटिक हैं, तो डायनॅमिक परिस्थितियोंके साथ स्टॅटिक इझम मुकाबिला नहीं कर सकते। जानकारी 'एव्हर एक्स्पांडिंग' है- ज्ञान 'एव्हर एक्स्पांडिंग' है और इझम क्लोज्ड बुक ऑफ थॉट है, तो वह 'एव्हर एक्स्पांडिंग' में 'नॉलेज' के साथ मेल नहीं खा सकता। और इसी दृष्टीसे हम लोगोंने कहा कि एक अॅक्स्ट्री-मपर जाकर हम यह नहीं कहते कि इस संसार में निर्माण होनेवाला कोई भी विचार एकदम अनुपयुक्त है। हरेककी अपनी अपनी उपयोगिता है। जहाँ हम मानते हैं कि बिलकुल जहर है, और साँप हैं, और शेर हैं उनकी भी अपनी उपयुक्तता हैं। जंगलमेंसे शेर हट जाएंगे तो जंगल भी हट जायेगा। इस दृष्टीसे हरेक की अपनी अपनी उपयोगिता है। वहाँ किसी भी इझमको एकदम हम लोग अैसा क्लिंग करें, चिपक जाय, बस जो होगा वह इसीके आधार पर होगा ऐसा भी हम मानने के लिये तयार नहीं।

फिर दूसरी भी बात हम जानते हैं। बहुत बार जब इंझमकी परिभाषामें लोग बोलते हैं तो शब्दोंको लेकर झगडे जादा होते हैं, अर्थको लेकर कम। ईसा मसीहने कहा है 'दि लेटर किलेथ'। माने शब्द बडी गडबड कर सकता है मरवा सकता है। 'दि लेटर किलेथ'–इसका मतलब क्या है? लोग बहुत बार जो ऊपरके शब्द हैं उसीपर बडे झगडे खडे कर देते हैं। गहराईमें जाकर अभिप्राय क्या है यह देखनेकी झंझट नहीं करते। अब जैसे हम उदाहरण के लिये देखें, हम तो किसी की इंझमके पक्षपाती नहीं। लेकिन कुछ मॉडर्न लोगोंके साथ मुलाकात हो जाती है। हमें कुछ लोगों ने कहा कि भाई हम सोशॅलिस्ट, और हम आपके विरोध में हैं। हमने कहा कि भाई क्यों? उन्होंने कहा कि आप सोशॅलिझमको नही मानते। हमने कहा कि भाई यह तो बात सही है कि हम सोशॅलिझमको नहीं मानते। हालाँकी यह भी बात सही है कि हम किसी भी इंझमको नही मानते। तो बोले हमारा यह निर्णय है कि जो सोशॅलिझमको मानते नहीं वे प्रतिक्रियावादी हैं रीॲक्शनरी हैं। हमने कहा कि भाई हमारा भी यह अभिप्राय है कि जो सोशॅलिझमको मानते हैं वह मनुष्यताको नहीं मानते। अब यह हमने बोल दिया। वास्तव में हम दोनों बातचित के लिये बैठे थे। आखिर उनके ख्यालमें आया कि शब्दके लिये झगडा बहुत चल रहा लेकिन अभिप्रायमें दोनोंमें ज्यादा अंतर नहीं। अब यह भी हम देखें की कुछ लोग कहते हैं कि भाई हम सोशॅलिझमके समर्थक हैं, कुछ लोग कहते हैं कि हम सोशॅलिझमके विरोधक हैं। तो जो समर्थक हैं उनमेंसे सभी लोक सोशॅलिझमके नामपर जो स्टेट कॅपिटॅलिझम आता है उसका समर्थन करनेवाले नहीं हैं। वास्तवमें सायन्टिफिक सोशॅलिझमके अन्तर्गत तो स्टेट कॅपिटॅलिझमही आता है तो भी सभी सोशॅलिस्टस् कोई स्टेट कॅपिटॅलिझम के समर्थक नही हैं। उनमेंसे बहुत सारे तो ऐसे सज्जन पुरुष हैं कि जिनको यह देखकर बडा दुःख होता है कि, कुछ लोग शोषित हैं, कुछ शोषक हैं। थोडे लोग जादा श्रीमान हो रहे है और बहुत सारा बहुजनसमाज जो है वह शोषित है। उनको यह अच्छा नहीं लगता। शोषण समाप्त हो, विषमता समाप्त हो, संसार में सुख रहे ऐसा सभी सज्जन लोगोंको लगता है; इन को भी लगता हैं। इनकी धारणा है कि शायद इसीका नाम सोशॅलिझम है। और यही सोचकर वे अपने को सोशॅलिस्ट बताते हैं। वे समझते हैं कि सोशॅललिझम माने इतनाही होगा कि असमानता को हटा दिया जायँ, सब सुखी रहे। अब इस दृष्टीसे यदि देखा जाय तो विषमता और शोषण खतम हो जाना चाहिये, यह निगेटिव्ह आस्पेक्ट है। तो मैं समझता हूँ कि जो सोशॅलिझम का विरोध करनेवाले हैं उनमें भी ऐसे लोग हैं। हम भी वैसे हैं। हमे भी लगता है कि भाई विषमता खतम हो, शोषण नहीं होना चाहिए।

इतना विचार तो सबको स्वीकार है। किन्तु सोशिऍलिझमको जो विरोध करते हैं उनका मतलब यह नहीं है कि विषमता रहें, टाटा-बिर्ला-दालमिया यहीं रहें। विरोधक विरोध करते हैं उसका कारण यह है कि वे जानते हैं कि सोशॅलिझम नामपर केवल विषमता समाप्त होगी इतनाही नहीं तो स्टेट कॅपिटॅलिझम आयेगा, स्टेट मोनापोली आएगी-और एक तरहसे डिक्टेटरशिप-तानाशाही-शुरू हो जाएगी। लोकतंत्र समाप्त हो जाएगा। मनुष्यके मौलिक अधिकार समाप्त हो जाएंगे। इस तानाशाही का विरोध करने के नाते लोग सोशॅलिझमका विरोध करते हैं।

सोशॅलिस्ट क्यों बनें ?

अब हम देखें कि सोशॅलिझम के कई समर्थक ऐसे हैं जो सोशॅलिझम का निगेटिव्ह आस्पेक्ट देखकर सोशॅलिस्ट बन गये हैं। विषमता और शोषण समाप्त हो इस लिये वे सोशॅलिस्ट बन गये हैं। मनमें वे तानाशाहीके समर्थक नहीं। सोशॅलिझम का विरोध करनेवालोंमेंभी बहुतसे लोग ऐसे हैं जो तानाशाही का विरोध करते हैं। विषमता और शोषण का समर्थन नही करते। अब दोनोंका मन्तव्य, अभिप्राय देखा जाय तो वह एकही है! किन्तु शब्दको लेकर बडे झगडे हो जाते हैं,। और इसलिये कहा कि दि लेटर किलेथ यह बात सही है। यदि ठंडे दिमागसे आपसमें बैठेंगे तो इस बातका पता चलेगा कि 'कॉमन डिनॉमिनेटर' बहुत जादा है।

कितने प्रकार

अब जहाँतक इझमका सवाल है, हम तो किसीभी इझमको मानते नहीं। तोभी आज जादातर 'इझम' चलता है। लोग पूछते हैं इसके बारेमें आपकी प्रतिक्रिया क्या है? मैंने तो कहा कि विषमता, शोषण समाप्त हो, यह हम जरूर चाहते हैं, और स्टेट मोनॉपोली, कॅपिटॅलिझम, डिक्टेटरशीप न आय यह भी हम चाहते हैं। अब यह कौनसा सोशॅलिझम है यह सारा हम जानते नहीं। क्योंकि हमारे लिये यह बडी मुश्कील है। हम तो पुराने ढंगसे विचार करनेवाले लोग हैं। हमारे देशमें ऐसा एक विचार था कि भाई एक शब्दका एकही अर्थ हो और अर्थ छटामें भी यदि फरक हो जाता है तो शब्दमें परिवर्तन होना चाहिये। शब्द एक अर्थ अनेक यह अशास्त्रीय बात है। अर्थ एक शब्द अनेक यह भी अशास्त्रीय बात है। एक एक शब्द का एक एक निश्चित अर्थ होना चाहिये ऐसा हमारे यहाँ माना गया। किन्तु सोशॅलिझम जो शब्द है उसके बारेमें कुछ कहना बडा मुश्कील है। यह शब्द एक है उसके अर्थ कितने हैं हमें पता नहीं। क्योंकी एक दूसरेसे मतभेद रखनेवाले सभी सोशॅलिस्टही हैं। अब अपनेहि

देशमें यदि विचार करें तो **जवाहरलालजी** सोशॅलिस्ट, **जयप्रकाशबाबू** सोशॅलिस्ट है फिर **डांगेजी** सोशॅलिस्ट है **नंबुद्रीपाद** भी सोशॅलिस्ट है। सायंटिफिक सोशॅलिझम भी है ऐसा कहा जाता है। **विनोबाजीभी** कभी कभी अपनेको सर्वोदयी सोशॅलिस्ट कहते है। **लोहिया** भी सोशॅलिस्ट है। फिर कुछ तो हिन्दु सोशॅलिस्ट भी हैं। **नासेर** साहबने **अरब** सोशॅलिझम निकाला। **हिटलर** नॅशनल सोशॅलिस्ट था। **स्टॅलिन** सायंटिफिक सोशॅलिस्ट था। **अॅटली** भी सोशॅलिस्ट है। अब ये जो सारे सोशॅलिस्ट हैं तो हम इसमेंसे किसको सोशॅलिस्ट सही माने यही हमारे लिये बडी समस्या है। जैसे हमारे यहाँ पुराने लोग परब्रह्मके बारेमें कहते हैं '**एकं सद् विप्रा बहुधा वदान्ति**' कि ब्रह्म तत्व है वह तो एक है, लेकिन विभिन्न विद्वान विभिन्न नामोंसे उसको पुकारते हैं। इसके ठीक विपरीत बात सोशॅलिझम की है। कि बातें अनेक हैं नाम एक है। और इस दृष्टीसे कोई फिर यदि कहेगा कि सोशॅलिझमके बारेमें आपकी प्रतिक्रिया क्या है? तो हमें भी बाध्य होकर पूछना पडेगा कि विच व्हरायटी ऑफ सोशॅलिझम? वो जयप्रकाश व्हरायटी है, या **लोहिया** साबकी या **विनोबाजीकी** या **जवाहरलालजीकी** है? या अभी कॉंग्रेस सोशॅलिझममें भी तरह तरहके सोशॅलिझम आ रहे हैं उनके बारेमें आप पूछ रहे हो? तो इसके कारण हम ऐसा समझते हैं कि बहुत ज्यादा शब्दके झंझटमें न जॉय। जिसमें से कुछ निकलनेवाला नहीं।

ट्रेड युनियॅनिझम का जन्मस्थान

तो हम सीधेहि इतना विचार करें कि भाई आजकी रचनाअें क्या हैं। और उन रचनाओंमेंसे हमें अभिप्रेत क्या है? इसका हम विचार करें। जैसा कि मैंने कहा कि सोशॅलिझम के नामपर वहाँ एक सही और अच्छा विचार आया कि भाई शोषण समाप्त हो जाय विषमता समाप्त हो जाय। वहाँ अपनेको सोशॅलिस्ट कहनेवाले लोगोंको भी समय समयपर अपने अनुभवोंके आधारपरही अपने विचारोंमें परिवर्तन करना पडा है ऐसा दिखाई देता है। उदाहरणके लिये थोडा ग्रेट ब्रिटनकाही विचार करें। हम जानते हैं कि ग्रेट ब्रिटन की एक विशेष पोझीशन है। ट्रेड युनियॅनिझमका वह जन्म स्थान है। वेस्टर्न पार्लमेंटरी डेमॉक्रॉसीकाभी वह जन्म स्थान है। और वहाँ बडी यूनिक प्रोसेस ऐसी हुअी है कि पहले ट्रेड यूनियन्सका जन्म हुआ, और उसके बाद उनके कुछ लोगोंको लेकर सोशॅलिस्ट पार्टीका, लेबर पार्टीका जन्म हुआ। सोशॅलिझम वहाँ बहुत चलता है। कुछ अटल सिद्धांत सोशॅलिझमके हैं यह मानकर वह चले है। लेकिन हम ऐसा देखते हैं कि परिस्थिती के आधारपर सबको यह बात खयालमें आगई की ईझम को लेकर चलनेसे कुछ होगा नहीं। व्यवहार देखना पडेगा, वास्तविकताअें देखनी पडेगी। उदाहरणके लिये

केवल मैं **ग्रेट ब्रिटनकाही** संक्षेपमें उदाहरण देना चाहता हूँ । इसका मतलबही होता है- **किताबी रिलिजन**-तो यह जो किताबी रिलिजन है । वह वास्तविकतासे मेल नहीं खाता इसका अच्छा उदाहरण हमारे सामने वहाँके अनुभव से खडा होता है ।

ब्रिटन के अनुभव

हम हिंदुस्थानमें उनके बारेमें क्या समझते हैं? कि भाई वहाँ एक ग्रुप सोशॅलिस्ट है, एक ग्रुप कांझर्व्हेटिव्ह है। वहाँ भी कॉंझर्व्हेटिव्ह पार्टी है, सोशॅलिस्ट पार्टी है। अब हम सोचें कि नॅशनलाइझेशन यह एक बडा भारी सिद्धान्त है । आजकल हमारे देशमें उसकी बडी चर्चा चलती है। हमारे देशके जो प्रोग्रेसिव्ह लोग हैं, जो स्वयं विचार करनेकी दृष्टीसे अपने ब्रेनको तकलीफ नहीं देना चाहते, उन्होंने यह प्रचार करना शुरू कर दिया है कि कोईभी आर्थिक, औद्योगिक बीमारी रहे उसका रामबाण इलाज हमारे पास है; वह याने नॅशनलायझेशन कर दे। अब यह इन्होंने अपने दिमागसे बडा सोचकर निकाला ऐसी बात नहीं । वह किताबमें है । यह जो किताबी मजहब है, उसका नॅशनलायझेशन यह एक सिद्धान्त है। हमें पूछा जाता है कि हमारी भूमिका क्या है? वह तो हमने स्पष्ट की है। हम सोचते हैं कि भाई **उद्योगके स्वामित्वके कई ढाँचे हो सकते हैं**। हरेक उद्योगकी अपनी-अपनी विशेषता है। उसके अनुसार उसके स्वामित्वके ढाँचे में भी परिवर्तन होना चाहिये । कोई भी अेक स्वामित्वका ढॅांचा ऐसा नहीं कि जो सभी उद्योगोंपर लागू हो सकता है। जैसे प्रयागमें नाई लोग एकही उस्तरेसे सब हजामत करते हैं। वैसे एकही सिद्धान्तसे सब उद्योग बराबर स्वामित्वका अपना ढाँचा ले लें ऐसी बात हो नहीं सकती । अलग अलग विचार करना होगा। हरेक स्वामित्वके ढाँचेकी अपनी अपनी उपयोगिता है। अलग अलग परिस्थितियोंमें नॅशनलायझेशनभी हम पॅनेशियाके नाते नही मानते। एक रामबाण इलाज के नाते नही मानते। किन्तु हाँ !अेक अपरिहार्य बुराईके नाते, इनएव्हिटेब्रल इव्हिलके नाते हम जरूर उसको थोडा बहुत मानते है। जैसे कि दाल चावल आटा यह स्थाई अन्न होता है। किन्तु स्ट्रिकलिन है, आर्सेनिक है यह तो किसीका स्थाई खाद्य नहीं है। तोभी जब रोमॅंटिझम हो जाता है, कोई बीमारिया होती हैं तो उसके लिमिटेड डोसेस दीये जाते हैं। उसी तरहसे लिमिटेड मात्रामें कुछ अपरिहार्य परिस्थितियोंमें हम नॅशनलायझेशनकाभी कुछ उद्योगोंके बारेमें जरूर विचार कर सकते हैं। तो इस तरहका संतुलित विचार हम लोगोंने रखा। किन्तु संतुलित रहे तो फिर प्रोग्रेसिव्ह कैसे होंगे? इस दृष्टीसे सभी उद्योगोंके लिये स्वामित्वका एकही ढाँचा लागू हो और वह नॅशनलायझेशनकाही रहे यह विचार आजकल चल रहा है। अब **ग्रेट ब्रिटनका** उदाहरण हम देखें। मैंने कहा की संक्षेपमें मैं निर्देश करूंगा। वहाँ दो पार्टियां हैं- कॉंझर्व्हेटिव्ह पार्टी

और लेबर पार्टी। कॉन्झर्व्हेटिव्ह पार्टी सोशलिझमके विरोध में है। सोशॅलिझमके विचारोंका केंद्रबिन्दू नॅशनलायझेशन है इस नातेसे और कॉन्झर्व्हेटिव्हज नॅशनलायझेशनके लिये सिद्धांत के रुपमें खिलाप है यह दोनों बातें हम ले। किन्तु वहाँ एक विचित्र बात दिखती है।

नॅशनलायझेशन की प्रक्रीया

नॅशनलायझेशनकीप्राक्रियाका प्रारंभ जो हुआ वह नॉन सोशॅलिस्ट और ॲन्टि सोशॅलिस्ट गव्हर्नमेंटके रहते हुअे हुआ। १८८८ में वहाँके हायकोर्टने यह जजमेंट दीया कि भाई टेलिफोन सर्विसेस जो है वह सरकार अपने हाथमें ले सकती है। १८८८ से लेकर तो लगभग १९१२ तक सारे टेलिफोन सर्विसेसका नॅशनलायझेशन हुआ। इस संपूर्ण अवधीमें नॉन सोशॅलिस्ट, ॲन्टी सोशॅलिस्ट गव्हर्नमेंट थी। अभी जो नॅशनलाइज उद्योगोंका एक मॅनेजमेंटका पेटर्न है उसका आधार लंडन पोर्ट ट्रस्ट ॲथॉरिटी का मॅनेजमेंट का जो ढाँचा पहले बना था वही है। १९०८ में लंडन पोर्ट ट्रस्ट ॲथॉरिटीका यह ढाँचा बना। और उससमय कॉन्झर्व्हेटिव्ह पार्टीके हाथमें अधिकार थे। माने नॉन सोशॅलिस्ट, ॲन्टि सोशॅलिस्ट लोगोंके हाथमें अधिकार थे। माने कई उद्योगोंका नॅशनलायझेशन कॉन्झर्व्हेटिव्हज ने कीया। यही कहते हुअे किया कि भाई व्यवहारके लिये हमें यह ठीक लगता है। हम सिद्धान्त के रुपमें तो नॅशनलायझेशनके खिलाफ है किन्तु व्यावहारमें हमें लगता है कि इनका नॅशनलायझेशन होनेसे हमारे समाज का लाभ होगा। यह एक बात देख ली। अब दूसरी बात हम देखें। उधर सोशॅलिस्ट हैं। हमारे समाज की उनकी दो विंग्ज है। ब्रिटिश ट्रेड यूनियन काँग्रेस और लेबर पार्टी इन दोनोंने १९१२ में बहुत, हो हल्ला चलाया, कि उद्योगों का नॅशनलायझेशन हो। बहुत कुछ शोर मचाया। जैसे अपने यहाँ है। वहाँ भी–सब बँकोंका नॅशनलायझेशन हो-यह सारा लगा। बाकी के उद्योगोंके बारे में भी लगा। १९४५ में भी लेबर पार्टी फॅार दि फर्स्ट टाइम क्लिअर मेजॉरिटीमें आगई। माने कोअि सेशनमें नहीं। स्पष्ट रुपसे उनकीही गव्हर्नमेंट ४५ में आगई। उनके बाद जब उनका विचार हुआ–तब बँकस्के बारेमेंही उन्होंने कहा कि बँकोंका नॅशनलायझेशन करना क्यों आवश्यक है? उनकी कॉन्फरन्सेस हुअी। बताया गया कि 'ड्युरिंग वॅार पीरिएड' जो इंग्लैंड की बँकिंग सिस्टिम थी, उन्होंने नॅशनल टार्जेट्स् पूरे कीये हैं, नॅशनल डिसिप्लीन को मान लिया है। और इस लिये उनके नॅशनलायझेशनके लिये कोई वास्तवमें– आवश्यकता है ऐसा उनके प्रवृत्तीको देखकर नहीं लगता। किन्तु हाँ; विचार सामने आया कि कमसे कम एक जो सेंट्रल बँक है उसको तो नॅशनलाइजड कीया जाय। क्यों कि हम लोगोंने व्होटर्स को कमिटमेंट दीया है। बाकी बँकोंको छोड दिया जाय। जो कमार्शिअल बँक है उनको छोड दिया जाय। इस एकका तो कमसे कम नॅशनलायजेशन करना होगा। माने इन अपॉलॉजिटिक टर्ममें उस कॉन्फरन्सने सोचा। बादमें उनके कालावधीमें कुछ उद्योगोंका नॅशनलायझेशनभी हुआ। उसमेंसे एक उद्योग, कोयला उद्योग था। चुनाव के पहले कॉन्झर्व्हेटिव्ह पार्टीकी जो कॉन्फरन्स हुअी थी, उसमें कॉन्झर्व्हेटिव्ह पार्टीने पहलेही निर्णय लिया था कि कोयला उद्योगका हम नॅशनलायझेशन करेंगे! क्यों? क्यों कि वह लॉसेस में जा रहा

था। प्रायव्हेट ऍम्प्लॉयर्स उसको चलानेके लिये तैयार नहीं थे। जहाँ मुनाफा नहीं वहाँ ऍम्प्लॉयर जायेगा कायके लिये ? तो सरकारने हाथ में लेने की परिस्थिति थी। उसीका इन्होंने पहले नॅशनलायझेशन कीया। लेकिन नॅशनलायझेशन करनेके बाद जो व्यवहारिक अनुभव आया उसके कारण ब्रिटिश ट्रेड युनियन कॉंग्रेसको और लेबर पार्टीको अपने विचारोंमें कुछ परिवर्तन करना पडा। अनुभव कैसे आया ? १९१३ में यह बात सोची गयी थी कि नॅशनलायझेशन यहि पॅनेशिया है। क्योंकि नॅशनलायझेशनका मतलब क्या है ? उद्योग राष्ट्रका हो जाएगा। माने-ग्रेट ब्रिटनके जो आठ करोड नागरिक हैं उनका हो जाएगा। अब उससे अधिक अच्छी अवस्था कौनसी हो सकती है ? कोई भी उद्योग सभी जनताका हो जाय इससे अधिक अच्छी अवस्था -वांछनीय अवस्था कौनसी हो सकती है ? तो नॅशनलायझेशनका विचार सोचा गया। अब सभी जनताका उद्योग हो इस दृष्टीसें कोई माध्यम होना चाहिये-तो भाई सरकार माध्यम है। क्योंकि इलेक्टेड सरकार है। और फिर यह सोचा गया कि इलेक्टेड जो है याने पार्लमेंट है उसको हरेक नॅशनलाइज्ड इंडस्ट्री जिम्मेवार होनी चाहिये। कागजपर यह सारा ठीक रहा। अब वह लेबर पार्टीने नॅशनलायझेशन कीये हुअे उद्योगोंमें समस्याअें खडी हुअी।

समस्याअें

सबसे पहली समस्या तो यह खडी हुअी, कि भाई उद्योगका नॅशनललायझेशन कीया, जैसे मान लीजिये, रोड ट्रान्स्पोर्ट हैं-नॅशनलायझेशन किया। नॅशनलायझेशन करनेके बाद उसकी मॅनेजमेंट कौन करेगा ? बोर्ड ऑफ मॅनेजमेंट करेगा। बोर्ड ऑफ मॅनेजमेंटमें किसको लेना चाहिये ? तो एक विचार यहाँ आया कि उद्योगसे संबंधित जितने हो हितसंबंध है, इंटरेस्ट है, उनका प्रतिनिधित्व बोर्ड ऑफ डायरेक्टर्समें होना चाहिये। माने बोर्ड ऑफ मॅनेजमेंटमें होना चाहिए। अब रोड ट्रान्स्पोर्ट के संबंधित कौन है ? हिसाब कीजिये-तो जो इधर उधरसे माल भेजते हैं-कमर्शिअल इंटरेस्ट, वे उसमें है। अॅग्रिकल्चरिस्ट जो अपना माल भेजते हैं वे उसमें है। इंडस्ट्रियॅलिस्ट जो अपना माल भेजते हैं वे उसमें है। गिनती करते करते यह पता चला कि आठ करोडमेंसे कोई भी ऐसा आदमी ग्रेट ब्रिटनमें नहीं कि जो रोड ट्रान्स्पोर्टसे संबंधित न हो ! तो कन्सर्नड् इन्टरेस्ट बोलने के बाद किसको छोडा जा सकता है ऐसा कोई भी नहीं। अब सबका प्रतिनिधित्व कैसा होगा ? फिर सोचा गया जो टेक्निशिअन्स है उनको रखा जाय। किन्तु जो अपने यहाँ डिफिकल्टी है वहाँ भी डिफिकल्टी है। हरेक वेस्टर्न पार्लमेंटरी डेमॉक्रासीके अन्तर्गत वह डिफिकल्टी आती है। कि जो टेक्नीशिअन्स है वह किसीभी इंटरेस्टका प्रतिनिधित्व करें इसकीभी गॅरेंटी नहीं। क्यों कि हम लोग जानते हैं, कि अपने देशमें भी वह कठिनाई है कि टेक्नाशीयन बनने के लिये पूरा समय देना पडता हैं, बडी मेहनत करनी पडती है। और जो टाईम अॅन्ड एनर्जी टेक्निशियन बनने के लिये खर्च करेंगे, उनको पॉप्युलर बननेके लिये टाईम अॅन्ड एनर्जी खर्च करना सम्भव नहीं होता। दोज हू कॅन डिव्होट टाइम

ॲन्ड एनर्जी इनफ, टु बिकम टेक्नीशिअन हॅव नो टाइम ॲन्ड एनर्जी टु स्पेंड टु बिकम पॉप्युलर–' अब टेक्नीशिअन होना होल टाइम जॉब है। और पाप्यूलर होना होल टाईम जॉब है। और एक आदमी दोनों नहीं कर सकता। और 'दोज हू कॅन डिव्होट टाइम ॲन्ड एनर्जी इनफ टु बिकम पॉप्यूलर हॅव नो स्पेअर टाईम ॲन्ड अेनर्जी टु बिकम ए टेक्नीशिअन'। इसीलिये डेमॉक्रसीमें बहुत बार अैसा दीखता है–कि जो पॉप्युलर रहते हैं वह टेक्नीशिअन नहीं रहते और जो टेक्नीशिअन होते हैं वह पॉप्युलर नहीं होते। तो यह टेक्नीशियन्स वहाँ जाअेंगे तो किसीका भी प्रतिनिधित्व नहीं करेंगे। फिर यह सोचा कि चलो एक वर्किंग कॉंप्रमाइज कुछ निकाला जाय। कुछ टेक्नीशिअन्स को लिया जाय, कुछ इनकोमी लिया जाय। तो यह बोर्ड ऑफ मॅनेजमेंट बन गई। अब उसमें राष्ट्रीयीकरण किया हुवा उद्योग पार्लमेंटको जिम्मेदार होना चाहिये। यह सवाल जैसे आया वैसे राष्ट्रीयकरण कीये हुअे उद्योग में मालिक मजदूर संबंध प्रायव्हेट सेक्टरसे तो अच्छी होने चाहिये यह भी विचार आया। लोगोंको लगना चाहिये कि भाई यह तो मैंही चला रहा हूँ! और इसलिये फॅक्टरीज में यह बडा प्रयास चल रहा था कि वर्कर्स पार्टिसिपेशन होना चाहिये।

राष्ट्रवाद!

अब यहाँ मैं एक बात कहूँ कि हम भारतीय मजदूर संघके लोग राष्ट्रवाद, राष्ट्रीयत्व पर बहुत आग्रह देते है। बहुत लोग इसका व्यावहारिक अर्थ, आर्थिक अर्थ नही समझते। लोग तो सोचते हैं राष्ट्र का मतलब तो यही है कि चायनीज फ्रांटियर पर या पाकिस्थानी फ्रांटियर आप लडनेको जायें। मेरा मतलब वह नहीं है। राष्ट्रका आर्थिक पारिभाषामें भी एक अलग अर्थ है। वह अर्थ क्या है? वह है नियरेस्ट इक्विव्हॅलंट टु नॅशनल इंस्टरेस्ट इन इकॉनॉमिक टर्म्स, इज कन्झ्यूमर्स इंटरेस्ट..। आर्थिक परिभाषामें राष्ट्रहितका बिलकुल नजदिक का, पर्यायावी शब्द, याने उपभोक्ता का हितसंबंध! अब इस दृष्टीसे पूरा राष्ट्रवाद यदि किसी जगह है तो वहाँ सब लोग आर्थिक क्षेत्र में उपभोक्ताका विचार करेंगे। मालिक भी उपभोक्ता का विचार करेंगे, मजदूरभी उपभोक्ता का विचार करेंगे–सरकार भी उपभोक्ता का विचार करेगी और उपभोक्ता जाग्रत रहेगा। ये तो बात नही कि कन्झ्यूमर्स तो स्वयं कॉन्शसन रहे और बेशिस्त गवाहके बाकी लोग उसके बारेमें सोचे ऐसा नही हो सकता। तो कन्झ्यूमर्स इंटरेस्ट जो है उसके साथ आयडेन्टिफिकेशन लेबर का भी हो अेंप्लॉयर्स का भी हो, गव्हर्नमेंट का भी हो। अब वहाँ ऐसी परिस्थिति नही थी! आयडेन्टि-फिकेशन नहीं था। माने राष्ट्रवादकी मात्रा कुछ कम थी। और इसके कारण वर्कर्स पार्टिसिपेशनके सिद्धांत के अनुसार जब कार्यवाही होने लगी. कुछ कठिनाईयाँ आयी। कोयला के अुद्योग में इस दृष्टीसे सोचा गया अनुसार, अब मान लीजिये बोर्ड ऑफ मॅनेजमेंट पर युनियन के जनरल सेक्रेटरी को लेने का सोचा अब किसी भी अुद्यो में युनियन के जनरल सेक्रेटरीको बोर्ड ऑफ मॅनेजमेंट पर लिया जाता है तो उनका अनुभव ऐसा है कि

उसमें दिक्कतें आती हैं। मान लीजिये कि उद्योग यदि प्रॉस्परस है तब तो कोई दिक्कत नहीं। बोर्ड ऑफ मॅनेजमेंट वह कहेगा कि हमको ज्यादा तनखा मिलना चाहिये, बोनस जादा मिलना चाहिये, यह होना चाहिये। दस बातें कह सकता है। लेकिन मान लिजिये जनरल रिसेशन है, उद्योग नीचे जा रहा है! अब यह क्या कहेगा? वर्कर्सके मीटिंग में भाषण देना तो बडा सुविधाका होता है क्योंकि वहा जिम्मेदारी जादा नहीं रहती। जो जादा से जादा डिमांड करेगा उसको प्रोग्रेसिव्ह लीडर कहा जायगा। किन्तु बोर्ड ऑफ मॅनेजमेंटमें टेबल पर जब सारे इंटरेस्ट के प्रतिनिधि बैठे हैं वहाँ सारे आंकडे, तथ्य, फॅक्टस्, फिगर्स आप के सामने रखे जाते हैं, और आपको सब लोग पूछते हैं कि इस में आप का वेज इन्क्रीज कैसे अॅडजेस्ट होगा बताईये। इसमें आपका बोनस कैसे अॅडजेस्ट होता है ये बताईये। और अब वहाँ तो भाषणबाजी नहीं चलेगी न? वहाँ तो तथ्य और आंकडोंके आधार पर बोलना पडेगा—मानो जिम्मेदारी आ गयी। तो अनुभव आया कि उद्योगमें इस तरहसे रिसेशन है, वहाँ सारे तथ्य और आंकडे टेबलपर आते हैं। और उन सारोंको देखकर जनरल सेक्रेटरी जादा वेज दो यह कह नहीं सकता। क्योंकि लोक कहते हैं हमने ना तो कहाही नहीं, हम देनेको तैयार हैं। आंकडोंके आधारपर बताइये यह कैसे अडजेस्ट हो सकता है! फिर जनरल सेक्रेटरी को वहाँ वेज फ्रीज की बात लेनी पडती है। क्योंकि तथ्य और आंकडे ऐसे हैं। अब हर यूनियनमें आप जानते हैं कि झगडे थोडेबहुत होते ही हैं। फ्रॅक्शनॅलिझम होता है। आज एक जनरल सेक्रेटरी है उसके विपक्षमें भी थोडेबहुत लोग होते हैं। तो वहाँ यदि किसीनें वेज फ्रीज की बात मान ली तो पहलेहि उसके खिलाफ प्रॅपोगांडा शुरू होता है कि भाई दालमें कुछ काला है। कुछ गडबड है। यह खरीदा गया है। बात शुरु हो जाती है। अब जनरल सेक्रेटरीको युनियनकी जनरल कौन्सिलके, महासमितीके सामने लाया जाता है। एक्झामिन करनेके लिये क्रॉस होते हैं। वह सारे तथ्य बताता है, आंकडे बताता है। उसके जो विपक्षी हैं, दूसरे फ्रॅक्शनके वह सब उसको क्रॉस अेक्झॅमिन करते हैं। अब बडी मुश्किलमें यूनियन आ जाती है। क्योंकि वहाँ जनरल सेक्रेटरी दूसरा कुछ बोल नहीं सकता क्योंकि तथ्य और आंकडे उसके खिलाफ हैं। इस लिये ये वहाँ अगर कोई चीजको कमिट करता है, तो उसी डिमांडको लेकर युनियन स्ट्राइकपर नहीं जा सकती। क्यों कि जनरल सेक्रेटरी का कमिटमेंट है। अब यूनियन तो स्ट्राइकपर जाना चाहेगी। तो यह जब बहुत बार हुआ तो यूनियनने भी सोचा कि हमारा अधिकृत पदाधिकारी वहाँ न रहें।

नयी सिस्टीम

बादमें यह सिस्टिम शुरू हो गयी कि यूनियनका जो पदाधिकारी है वह बोर्ड ऑफ मॅनेजमेंटपर नियुक्त न किया जाय और पदाधिकारी को वहाँ नियुक्त किया तो उसको यहाँसे हटाया जाय, और उसकी जगह दूसरेको लाया जाय। मानो अॅक्च्युअली यूनियनका जो पार्टि-

सिपेशन होना चाहिये वह नहीं। इस लिये कि वहाँ यदि यूनियनका प्रतिनिधी रहता है तो उसका जो शब्द होगा, वह कमिटमेंट होगा, बाईंडिंग होगा। फिर उसके खिलाफ कोई कारवाई यूनियन नहीं कर सकती। यूनियन अपनेको इस तरहसे बाँध लेनेके लिये तैयार नहीं। और इस दृष्टीसे वर्कर्स पार्टिसिपेशनका आग्रह छोड दिया। वहाँ जो आदमी आयेगा उसको आप नॉमिनेट कर लीजिये वह हमारे यूनियनका प्रतिनिधी नहीं लेकिन हम मजदूरोंकी ओरसे अपने एक आदमीं लिया है इतनाही हमे मान्य है। मानों वर्कर्स पार्टिसिपेशनवाली बात कम हो गयी। और उधर वर्कर्सके नाते जो प्रतिनिधी रहता है वह यदि एक बातको स्वीकार करता है तो इधर उसके खिलाफ और स्पीचभी होती हैं। इस प्रकारका दृश्य वहाँ दिखाई देने लगा। तो वहाँ कोन जाय इसके बारेमेंभी कोई फायनल डिसिजन अबतक बराबर नहीं हो सका। यह एक बात हम ख्यालमें लें।

स्टेट विदिन दी स्टेट

दूसरी बात कि हरेक उद्योग पार्लमेंटको अेन्सरेबल रहें। बात दीखनेमें अच्छी है। कागजपर जब लिखी गयी तो ब्रिटिश ट्रेड युनियन कॉंग्रेसको और ब्रिटिश लेबर पार्टीको ऐसा लगा कि इससे अच्छा रास्ता कौनसा हो सकता है? प्रॅक्टिकलमें आयी तो वहाँ कुछ दिक्कतें आयी। दिक्कतें ऐसी हैं कि आप मान लीजिये एक टेक्स्टाइल मिल है, उसका नॅशनलायझेशन हुआ। उसका एक बोर्ड ऑफ मॅनेजमेंट रहा और बोर्ड ऑफ मॅनेजमेंटमें कुछ आपके, कुछ बाकी लोगोंके प्रतिनिधी रहे यह सब सारा ठीक रहा। लेकिन फिर दूसरा प्रश्न आया कि यह पार्लमेंट को रिस्पॉन्सिबल कैसे रहेगी। उसका मतलब क्या है? क्यों कि मान लीजिये, आपके टेक्स्टाइल मिलमें मॅनेजरने किसीको गाली दी, लोगोंने मॅनेजरको घेराओ किया, अब उस समय क्या करना चाहिये यह बोर्ड ऑफ मॅनेजमेंटको पार्लमेंटने बताना चाहिये। अब वो कैसे, कब और कहाँ बताअेंगी? माने अेक तो यह घेराओ होता है तब पार्लमेंट सेशनमें रहे। दूसरा पार्लमेंट के लिये सेशनमें रहते हुअे उतना पर्याप्त समय रहे, कि बाकी सारे झगडे छोडकर अपने घेराओ के बारेमें पार्लमेंट सोचे। फिर तीसरी बात यही है कि यदि पार्लमेंट सेशनमें नही है तो पार्लमेंटका सेशन केवल घेराओंके लिये बुलाना कहाँतक संभव है? अेक औरभी बात है कि हरेक इंडस्ट्रियल कन्सर्नमें डे टुडे अॅडमिनिस्ट्रेशन जो चलती है उसकी दृष्टीसे इतनी देरी होना कहाँतक हम अॅफोर्ड कर सकते हैं? दो साचे हैं, चार साचें चलाअें न चलाएँ अैसी हरेक छोटेबडे चीज का निर्णय एकदम पार्लमेंटमेंही देना हो तो कुछ देरतक हरेक उद्योग बंद रहेगा? तो डे टुडे अॅडमिनिस्ट्रेशन पार्लमेंटके सलाह के अनुसार चलना असम्भव है, इम्प्रेक्टिकेबल है यह बात लोगों के ख्यालमें आयी। किन्तु सोचा, कि किताबमें लिखा है कि हर एक उद्योग अॅन्सारेबल टु पार्लमेंट हो। फिर क्या रास्ता निकालें। फिर दूसरा रास्ता निकला कि इस विषयको दो हिस्सोंमें बाँट दिया जाँय। एक डे टुडे अॅडमिनिस्ट्रेशन

और दूसरा जनरल पॉलिसी ऑफ इंडस्ट्री विद्इन द फ्रेम ऑफ नॅशनल इंटरेस्ट। तो इस तरहसे दो विषयोंमे बाँट दिया। और कहा कि डे टुडे अॅडमिनिस्ट्रेशन जो है वह बोर्ड ऑफ मॅनेजमेंटका विषय है उनको पूरा अधिकार है। लेकिन जनरल पॉलिसी ऑफ द इंडस्ट्री विद्इन द फ्रेम ऑफ नॅशनल इंटरेस्ट, जो है वह पार्लमेंट तय करें। अब उसमें भी अेक इंडस्ट्रीका विषय पार्लमेंटके सामने आता है। अेक M. P. महोदय उठकर खडे होते है-वे कहते है कि साब यह जो फलानी फलानी कॅटॅगरी है, उसका ऐसा ऐसा झमेला है, उसके बारेमें हम यह बोलना चहाते हैं। पार्लमेंटने कुछ इसका फैसला करना चाहिये। उस उद्योग के जो मंत्री होते हैं वे कहते हैं कि यह डे टुडे अॅडमिनिस्ट्रेशनका सवाल है, पार्लमेंटके सामने नहीं आ सकता। यह M. P साब कहते है कि यह विषय आठही लोगोंका होगा, लेकिन इसमें प्रिन्सिपल इन्व्हॉल्व्हड है। यह टेस्ट केस बन जाती है। इसलिये इसको जनरल पॉलिसी समझनी चाहिये। और फिर अध्यक्ष महोदयको (पार्लमेंट को) कहना पडता है कि भाई यह विषय जनरल पॉलिसीका है या डे टुडे अॅडमिनिस्ट्रेशनका है मैं सोचकर कल उसका व्हर्डिक्ट दूँगा। माने यह बडी कठीण बात है। हरेक चीजको प्रिन्सिपल माना जा सकता है। इस तरहसे एक दिखाई दिया कि जनरल पॉलिसी क्या है ? डे टुडे अॅडमिनिस्ट्रेशन क्या है ? यह बराबर डिमार्केट करना कठीन है। और इस दृष्टीसे हरेक उद्योग और पार्लमेंटको अॅन्सरेबल बनाना भी कठीण है। हरेक उद्योग, और उसका बोर्ड ऑफ मॅनेजमेंट, उसके चेअरमन वगैरे वह एक स्टेट विद्इन द स्टेट बन जाते हैं वह अनुभव वहाँभी आने लगा।

ब्रिटिश ट्रेड युनियन कॉंग्रेसका निर्णय

औरभी एक दूसरी बात हुई, कि बोर्ड ऑफ मॅनेजमेंट तैयार हुआ- लेकिन यदि वह पार्लमेंटको अॅन्सरेबल है तो कोई न कोई मिनिस्टर उसका इनचार्ज होना चाहिये। हरेक नॅशनालाइज्ड किया इन्डस्ट्रीका अेक विचार जैसा, इन्चार्ज एक मिनिस्टर रहे यह विचार तो ठीक है। किन्तु अब मिनिस्टर और बोर्ड ऑफ मॅनेजमेंट के परस्पर संबंध कैसे रहें ! तो यह तय हुआ कि बोर्ड ऑफ मॅनेजमेंटको स्वतंत्रता है, किसी भी प्रकारका प्रेशर मिनिस्टर की ओरसे बोर्ड ऑफ मॅनेजमेंटपर नहीं आना चाहिये। कोई पार्टी पॉलिटिक्स उस में नहीं आना चाहिये। बात ठीक है। अब व्यवहार में ऐसा हुआ, अगला चुनाव आ गया। अगले चुनावके पहले कोयले की कीमतें यदि बढ जाती हैं तो पार्टी इन पॉवर बदनाम हो जाएगी, उनके व्होट कम हो जाएंगे और सर्व साधारण कन्व्हेन्शन है कि इंडस्ट्रि वह कम से कम घाटे में न जाय। इसलिये कोयलेकी कीमत न बढें। किन्तु यदि कोयले की कीमत न बढती तो नॅशनलाइज्ड कोल इंडस्ट्रि घाटे में जाएगी। कोलइंडस्ट्री घाटेमें जायेगी। और सर्वसाधारण कन्व्हेन्शन है कि इंडस्ट्री वह कमसेकम घाटेमें न जायँ। और यदि

प्रॉफिटमें नहीं तो भी अब घाटा न हो तो कीमतें बढानी पडेंगी। कीमतें बढ जाएंगी तो रुलिंग पार्टी को व्होट कम मिलेंगे। कीमतें न बढ़ें तो रुलिंग पार्टी का, जिस पार्टी का वह मिनिस्टर है उसके वोटस् बढ जाएँगे। किन्तु इधर घाटा आएगा। और यह तो कन्व्हेन्शनके खिलाफ है। समस्या खडी हो गयी क्या किया जाय? अब मिनिस्टर सीधे 'अॅब मिनिस्टर' नहीं कह सकता, डायरेक्टिव्ह नहीं दे सकता। लेकिन प्रायव्हेट, इनफॉर्मल बातचीतपर तो कोई बन्धन नहीं। चेअरमनको चाय के लिये तो बुलाया जा सकता है। वे उसके यहाँ चाय के लिये जा सकते हैं। इन्फॉर्मली ऐसा कह सकते हैं कि भाई ऐसा है, यह हमारी ऑफिशियल तो कोई बात नहीं है। लेकिन कई लोगोंने तो हमको ऐसा कहा कि भाई कोयलेकी कीमत तो नहीं बढनी चाहिये। अब इन्फॉर्मली कह दिया। जिसमें मिनिस्टर साहबकी इच्छा तो व्यक्त हो गयी। अब चेअरमन साहबके सामने भी विचार आता है कि भाई कीमत मैं बढाता हूँ तो मिनिस्टर साहब नाराज हो जाएंगे। और यदि न बढाता हूँ तो इंडस्ट्री घाटेमें आ जायेगी। माने इस तरह से मिनिस्ट्री और बोर्ड ऑफ मॅनेजमेंटमें परस्पर संबंध कैसे होना चाहिये इस विषयमें बडी व्यावहारिक कठिनाइयाँ आती हैं ऐसा दिखाई दिया। इन सब बातोंका विचार करते हुओ वहाँ सोशॅलिस्ट M. Ps. हैं उन्होंने एक विचार करनेके लिये क्लब बनाया। उन्होंने यह कहा कि हमें नॅशनलायझेशन के बारेमें पुनर्विचार करना होगा। नॅशनलायझेशन याने 'सोशॅलिझम का केंद्र बिन्दू' है इस विचार छोड देना पडेगा। उन्होंने स्पष्ट रुपसे यह स्वीकार किया कि हम लोग पार्लमेंट को अॅन्सरेबल हरेक नॅशनल इंडस्ट्री नहीं बना सकेंगे। हम लोगोंने एक मशिनरी सेटअप तो की है लेकिन उसको हम कंट्रोल नहीं कर पायेंगे इस तरहका विचार उन्होंने स्पष्ट रुपसे कहा। अब मालिक मजदूर संबंधके विषयमें वहाँ के ब्रिटिश ट्रेड यूनियन कॉंग्रेसने १९५३ में एक कमिटी अपॉइंट की। उसका कामही यही था कि प्रायव्हेट सेक्टरमें मालिक मजदूर संबंध कैसे है, पब्लिक सेक्टरमें मालिक मजदूर संबंध कैसे है, पब्लिक सेक्टरमें मालिक मजदूर संबंध कैसे हैं दोनोमें क्या फर्क है यह देखा जाय। और सारा अध्ययन करनेके पश्चात ब्रिटिश ट्रेड यूनियन कॉंग्रेसके इस स्वाध्याय मंडलने रिपोर्ट दी है-जो पब्लिश हुई है-जिसमें कहा है कि इंडस्ट्रियल रिलेशन्स इन पब्लिक सेक्टर आर अॅज गुड अॅण्ड बॅड अॅज दोज इन प्रायव्हेट सेक्टर- दोनोंमें कोई अंतर नहीं। तो फिर इन सोशॅलिस्ट M. Ps. के ग्रुपने यह कहा कि हम उसको पार्लमेंटकोभी अॅन्सरेबल नहीं कर सके। मालिक मजदूर के संबंधोंमें भी कोई अच्छाई हम नहीं ला सके। तो इस दृष्टीसे नॅशनलाय झेशनको विचारका एक केंद्रबिन्दु बनाना यह ठीक नहीं है। यह विचार कुछ सोशॅलिस्ट M.Ps. के क्लबके माध्यमसे आया है। '२०th सेंचुरी सोशॅलिझम' नामकी उनकी किताब है उसमें उन्होंने दिया है। अब यह एक छोटासा उदाहरण आपके सामने रखा।

प्रॅग्मॅटिझम

ईझम नामपर जो रिजिड ॲटिट्यूड ली जाती है, वहीत ' रिजिड ॲटिट्यूड ' जिसको हम किताबी मजहब कहना चाहते हैं। वह व्यवहार में कहाँतक सही उतरती है यही सबसे जादा महत्वकी बात होती है। किताबमें हमारे कौनसा रिलिजन है इसका महत्व इतना नही। और इस दृष्टीसे ऐसा दिखेगा कि तरह तरहकी परिस्थितीमें तरह तरहकी बातें उपयुक्त हो सकती हैं। कोई बहुत बडा रिजिड जो हो ऐसा नियम बनाया नहीं जा सकता। यही होना चाहिये या नहीं होना चाहिये ऐसा भी हमेशाके लिये कोई कानून डालनेकी आवश्यकता नहीं। हम सोचते हैं कि ईझम नामसे कोई ना कोई एक होनाही चाहिये, वह पूँछ यदि हमारे पीछे न रही तो फिर हमारी प्रतिष्ठा क्या है? ऐसा समझनेकी आवश्यकता नहीं। हम यह सोचकर चलें कि हम सभी बातोंका अध्ययन करें, सभी ईझम्सका अध्ययन करें। अध्ययन सबका होना चाहिये। लेकिन सबका अध्ययन करनेके पश्चात अपनी परिस्थितियोंका, अपनी आवश्यकताओंका स्वतंत्र रूपसे विचार करें। और सभी ईझम्सके अध्ययनके पृष्ठभूमीपर, किन्तु अपनी परिस्थितियाँ और आवश्यकताओं ख्यालमें रखते हुओ हम अपना रास्ता खोजें यही जादा उपयुक्त होगा। और इस दृष्टीसे हम हमेशा यह कहते हैं कि हम किसी भी इझमके पीछे नहीं, हम किसीभी इझमके अनुयायी नहीं। लेकिन अब लोग पूछते हैं कि नहीं, साब, इझम तो होनाही चाहिये तो हम कौनसा ईझम बताएँ। क्योंकि नॅशनॅलिझम जो है वह ईझम नहीं। अंग्रेजी में शब्दरचना कुछ अपर्याप्त होने के कारण ऐसे गलत शब्द भी अंग्रजीमें चलते हैं। तो नॅशनॅलिझम यह कोई ईझम नहीं है। यह तो उनकी भावना है। फिर कौनसा ईझम बताएँ। तो इस दृष्टीसे एक तो हम कहते हैं कि हम किसी भी ईझम के नहीं और यदि कोई कुछ ईझम पूछनाही चाहता है, और ईझमके बगैर उसके दिमाग में हमारी बात नहीं आती तो हमारा ईझम है प्रॅग्मॅटिझम। प्रॅग्मॅटिझमका मतलब होता है ' व्यवहारवाद ' राष्ट्रहित के चौखट के अन्दर होते हुओ, ' व्यवहारवाद '। किसी भी ईझम के साथ अपने को न बाँधते हुओ, आँखे खुली रखते हुओ, कान खुले रखते हुओ, दिमाख खुला रखते हुओ, सभीका अध्ययन करते हुओ किन्तु किसी का भी अन्धानुकरण न करते हुओ, अपनी परंपरा, आजकी परिस्थिती, इसका विशेष विचार करते हुओ आज एक भविष्य का रास्ता हम सोचेंगे। यह ईझम के बगैर होता है। ईझम के साथ नहीं हो सकता। लेकिन नामही यदि ईझम की परिभाषा में चाहिये, तो उसको हम प्रॅग्मॅटिझम कहे यही विचार हम ईझम के बारे में आज रखते हैं। ☆ ☆ ☆

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम – संघ, भारतीय संविधान, पंचवर्षीय योजनाएँ

और

भारतीय श्रमिक

श्री. गो. का. आठवले,
ॲडव्होकेट,
मंत्री, भा. म. संघ,
विदर्भ विभाग.

प्रथम जागतिक महायुद्ध के भीषण मानव संहार ने दुनिया के पिछडे हुए देशों के पीडित तथा दलित मानव समाज के जीवनस्तर को ऊंचा उठाने तथा उस के सुखसमृद्धि को बढाने की दिशा के विचार का एक नया पर्व आरम्भ किया। सामाजिक न्याय के महान तत्त्वों पर आधारित चिरस्थायी शान्ति को दुनिया में बनाये रखने के उद्देश्य से 'लीग ऑफ नेशन्स' की स्थापना 'वर्साइलिस ट्रिटी' के अनुसार होते ही औद्योगिक दशाओं में सुधार की दृष्टि से भी कुछ अन्तराष्ट्रीय नियंत्रण होना चाहिए इस दृष्टि से २८ जून १९१९ को प्रमुख देशों ने अन्तर्राष्ट्रीय श्रम-संघ (International Labour Organisation) के रूप में एक स्थायी संगठन गठित किया। यह लीग आफ नेशन्स का एक प्रमुख अंग बन गया।

इस श्रम संघ के आधारभूत सिद्धान्त

१. श्रम को केवल एक वाणिज्य का विषय अथवा वस्तु नही समझा जाना चाहिये।

२. मजदूर तथा मालिकों को वैधानिक कार्यों के लिए संघ बनाने का अधिकार होगा।

३. देश, काल, परिस्थिति को समझ कर साधारण जीवनस्तर बनाएं रखने के लिए श्रम का सुयोग्य पारिश्रमिक दिया जाना चाहिये।

४. सप्ताह में ४८ घन्टे तथा दिन में ८ घन्टे का कार्य-नियम लागू हो।

५. कम से कम २४ घन्टे के विश्राम की व्यवस्था हो जिसमें सम्भवतः रविवार साम्मिलित रहे।

६. बालकों से काम लेना बन्द हो तथा उन के लिये ऐसा बन्धन हो जिसमें से उनके शारीरिक तथा बौद्धिक विकास के लिए अवसर मिलें।

७. स्त्री-पुरुषों को समान काम के लिए समान पारिश्रमिक दिया जाय।

८. देशवासी तथा विदेशी मजदूरों को समान आर्थिक न्याय मिलें। (equitable economic treatment)

९. प्रत्येक राज्य एक विशेष निरीक्षण पद्धति आयोजित करें जिस में स्त्रियां भी भाग ले सके, तो कि मजदूर कानून की अमलबारी हो सके।

अन्तर्राष्ट्रीय श्रमिक संगठन के प्रमुख उद्देश्य

१. हरेक स्वस्थ मजदूर को रोजगार की व्यवस्था।

२. उपयुक्तता, कुशलता तथा रुची के आधारपर मजदूर को काम देना।

३. श्रमिकों के आय में वृद्धि कर उस के जीवनस्तर को ऊँचा उठाना।

४. श्रमिक की गतिशीलता को सुविधाओं की व्यवस्था।

५. सामाजिक सुरक्षा की योजना।

६. सामुहिक लेन देन के तत्व को सम्मानित रख कर उसे प्रोत्साहित करना।

७. श्रमिकों की प्रशिक्षा का प्रबन्ध।

८. उत्पादनक्षमता वृद्धि का प्रबन्ध।

९. आर्थिक तथा श्रम-नीति का श्रमिकों को उस के फलों का हिस्सा मिल सके इस पद्धतिसे निर्धारण तथा समान श्रमके लिए समान पारिश्रमिक।

१०. श्रमिक निवास योजना।

११. बालकल्याण की व्यवस्था।

१२. काम करने की दशा में उचित सुधार।

१३. प्रसुति संरक्षण की व्यवस्था तथा नियम।

यह संस्था, संसार की आर्थिक तथा श्रम समस्याओं का अध्ययन कर, उन के निराकरण की योजनाएँ बनाकर, सामाजिक अधिनियम तथा संगठनके बारे में परामर्श देकर, प्रतिनिधी मण्डलों द्वारा सहायता प्रदान कर, बेरोजगारी, श्रम कल्याण, औद्योगिक उन्नति आदि विषयों पर प्रकाशन कर श्रमिकों की स्थिति सुधारने का प्रयास कर रही है।

संसार के अनेक देश इस के सदस्य हैं। भारत, स्वतंत्र न होकर भी, सन १९१९ से इस संस्था का प्रारम्भ से ही सदस्य रहा है। अन्यान्य देशों की तरह वार्षिक अनुदान भी दे रहा है। इस संस्था के आयव्ययक (बजट) में अंशदान की दृष्टिसे भारत का स्थान अमेरिका, ब्रिटन, फ्रान्स, जर्मनी तथा कॅनडा के बाद सातवाँ है। इस के अन्तरंग परिषद में भी भारत एक स्थायी सदस्य है। साधारणतः अन्तर्राष्ट्रीय श्रम सम्मेलन वर्ष में एक बार होता है और इस सम्मेलनों की शिफारिशें तथा Conventions पर संसार के अन्यान्य देशोंद्वारा कीये जानेवाले क्रीयान्वयन का परिषद निरीक्षण करती थी। इस आवश्यकता की पूर्ति के लिये १९१९ में हुए अन्तर्राष्ट्रीय श्रम सम्मेलन, में भारत के प्रतिनिधी के रूप में सर्वप्रथम श्री. ना. म. जोशीजी को भारत सरकारने भेजा था। भारत के श्रम संगठनोंके निर्माणमें अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संघ की आवश्यकता की प्रेरणा थी यह स्पष्ट हो सकता है। अर्थात यह भी स्पष्ट है कि भरत में संविधान, श्रमविधि तथा अधिनियमोंपर अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संघ के उद्देश्यों, आवश्यकता तथा नियंत्रण नीति का संस्कार दिखाई पडता है।

भारतीय संविधान में श्रमिकों को संरक्षण

२६ जनवरी १९५० को भारतने अपना संविधान स्वीकार किया। भारत में कल्याणकारी राज्य की प्रस्थापना के उद्देश्य से श्रमिकों को उचित और गौरवपूर्ण स्थान प्रदान किया गया। एवम् उनकी सुरक्षा की व्यवस्था की गयी। धारा ४३ के अनुसार यह स्पष्ट घोषित किया गया कि उपयुक्त विधानों या आर्थिक संगठनों अथवा अन्य किसी साधनोंसे राज्य, कृषि के उद्योगों के, या अन्यान्य क्षेत्रों के समस्त श्रमिकों का काम, मजदूरी, शिष्टसम्मत जीवनस्तर, अवकाशसहित सुनिश्चित काम की दशाएं, सामाजिक तथा सांस्कृतिक अवसर प्राप्त कराने का प्रयास करेगा।

वास्तव में भारत स्वतंत्र होने के पूर्व ही इन तत्वों की नीव डाली जा रही थी। औद्योगिक श्रमिकों की संख्यावृद्धि के साथ बढती हुई समस्याओं को सुलझाने के लिये ब्रिटिश सरकारने अपनी स्वार्थपरायणता से प्रेरित हो कर एक नीति अपनायी थी। Policy of Loisser Faire इससे देश के कुटिर तथा लघु उद्योगों पर बहुत बुरा प्रभाव पडा। भारत के रेल यातायात के उद्योग को भी इसी उद्देश से विकसित किया गया। अत: इंग्लैंड का माल देशभर पहुंचाने का काम ही इस के द्वारा हुआ और दरिद्री कारीगरो को किसी भी प्रकार की आर्थिक सहायता नही मिली। अर्थात कृषि व्यवसाय पर ही अधिकांश जनसंख्या को निर्भर रहना पडा। प्रतिकूल परिस्थितियों में ही द्वितीय महायुद्ध के समय भारत में औद्योगिक विकास हुआ किन्तु यह भी ब्रिटिशों की गुलामी वृत्ती से मुक्त न था। इस की नीव भी १९१६ में स्थापित किये गये औद्योगिक आयोग

(Indian Industrial Commission) की युद्धसहायता के उद्देश्य से ही की थी। अतः श्रमिकों की स्थिति पर इस का भी बुरा प्रभाव पडा। काम के घन्टे १६ से १८ तक रहते थे। कार्य कुशलता की भुगतान का विचार नही होता था। श्रमिकों के सुख और कल्याण का भी विचार नही होता था। किन्तु Factories Act बनने से इस में कुछ सुधार हो सका। इस स्थिति के परिवर्तनार्थ मई १९२९ में श्री. जे. एस. व्हिटले की अध्यक्षता में Royal Commission on Labour की नियुक्ति हुई। इस आयोग की सिफारिशों पर आधारित भारत में समय पर अधिनियम बने।

इस पृष्ठभूमी पर भारत के संविधान में श्रमिकों को एक विशेष स्थान दिया गया है। धारा २३ के अनुसार बलात श्रम (बेगार) पर प्रतिबन्ध लगाया गया। यह व्यवहार दण्डार्ह माना गया है। बच्चों की नौकरी पर भी प्रतिबन्ध लगाया गया है। धारा ३१ के अनुसार राज्य अपनी नीति इस प्रकार अपनायेगा।

१) स्त्री-पुरुषों को अपनी जीविका के प्रर्याप्त साधन प्राप्त करने का अधिकार होगा २) भौतिक संपत्ति का स्वामित्व और नियंत्रण इस प्रकार होगा कि सभी का सामूहिक हित होगा। ३) सामूहिक हितों के विरोध में अर्थ तथा उत्पादन के साधनों का केन्द्रीकरण न हो। ४) स्त्री-पुरुषों के समान काम के लिए समान वेतन हो। ५) श्रमिकों तथा बालकों के स्वास्थ्य का ऐसा दुरुपयोग न हो सके जिसके कारण उन्हें अहितकारी क्षेत्रों के लिये बाध्य होना पडे। ६) शैशव और किशोरावस्था का शोषण से नैतिक और आर्थिक परित्याग न हो।

धारा ४१, ४२ और ४३ के अनुसार आर्थिक योग्यता और सीमाओं के अन्तर्गत काम पाने का अधिकार, शिक्षा पाने का अधिकार, बेरोजगारी से मुक्ती, वृद्धवस्था, बीमारी और अभाव में सहायता, न्यायपूर्ण और काम करने की मानवीय दशाओं तथा प्रसुति-सहायता का प्रबन्ध, कृषि, औद्योगिक तथा अन्य श्रमिकों के लिये उपयुक्त कानूनों द्वारा जिस में से शिष्टसम्मत जीवनस्तर बन सके, यह प्रयास करनेका उद्देश अपनाया गया। इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिये १९५० में 'योजना आयोग' (Planning Commission) गठित किया गया। इसी के आधारपर कर्मचारी बीमा योजना, भविष्य निधी अधिनियम १९५२ इ. का निर्माण हुआ। उद्देश्यों की घोषणा आयोग द्वारा स्पष्ट शब्दों में की गई है। 'Labour problems should be approached from angles : the Welfare of the working class and the country's economic stability and progresss. The basic needs of the worker for food, clothing and

stability must be satisfied. He should also enjoy improved health services, wider provision of social security, better educational opportunity and increased recreational and cultural facilities. The conditions of work should be such as to safeguard his health and protect him against occupational and other hazzards. He should be treated with consideration by the management and should have assessed to impartial machinery if he fails to get a fair deal. Finally, he should have freedom to organise and adopt lawful means to promote his rights and interest."..Planning Commission

इन्हीं तत्वोंके आधारपर भारत की पंचवर्षीय योजनाएँ आयोजित हुई।

पंचवर्षीय योजनायें

प्रथम पंचवर्षीय योजना के अपेक्षित फल इस नाते औद्योगिक सम्बन्धों में सुधार, उद्योगशः मालिक तथा मजदूरों के बीच महत्वपूर्ण समझौते, श्रमिकों की सही आय तथा सामाजिक सुरक्षा, सुविधाओं में वृद्धि, काम और जीवनस्तर संबंधी स्थितियों में सुधार। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में भी श्रमिकों की स्थिति में सुधार की अपेक्षित मात्रा प्राप्त न हो सकी। अन्य समस्यायें सामान्यरूप में उसी प्रकार बनी रही। देश को समाजवादी समाज (Socialistic Pattern) निर्माण करने के मार्ग पर विकसित करने का विचार होने पर समाजवादी मूल्यों को कुछ महत्वका स्थान प्राप्त हुआ। आर्थिक प्रेरणा (Monetary incentive) की कल्पना के स्थान पर समाजसेवा की भावना को आधार माना गया। तृतीय पंचवर्षीय योजनामें भी इन्हीं कल्पनाओं को निहित किया गया था। द्वितीय पंचवर्षीय योजनान्तर्गत अनुशासन संहिता और आचार संहिता, औद्योगिक प्रबन्ध में श्रमिकों की भाग योजना, श्रमशिक्षा और उत्पादकता के महत्व पर आधारित कार्य शुरू किये गये। औद्योगिक विकास और संविधान के संरक्षण आदि कारणों से औद्योगिक श्रमिकों की संख्या में तीव्र गति से वृद्धि हुई। सामान्यत: आज १९ करोड श्रमिकों की संख्या में लगभग ७२ % कृषि उद्योग में, ११ % खनिज, बृहत तथा लघुउद्योगोंमें ८ % यातायात व सन्देशवाहन तथा अन्य सेवाओं में ९ % श्रमिक शक्ति लगी दिखाई देती है।

साथही योजनाओं का विचार पांच भागों में किया गया है। औद्योगिक सम्बन्ध, मजदूरी एवं सामाजिक सुरक्षा, काम की अवस्था (Service conditions)

रोजगार एवम् प्रशिक्षण, उत्पादकता । वेतनसंबंधी औद्योगिक सम्बन्धों के सुधार होने की दृष्टि से १९५५ में एक समिती नियुक्त हुई थी। इस समिति द्वारा इस विषय में मजदूर युनियनों में बाहरी व्यक्तियों को कम करना, युनियनों को मान्यता, मिल मालिकों से युनियनों के पदाधिकारियों की रक्षा, यूनियनों की आर्थिक स्थिति में सुधार तथा मजदूर संगठन मजबूत बनाने की दृष्टि से योग्य कानून, आदि सुझाव दिये।

किन्तु इतना होते हुए भी खेदपूर्वक यह कहना पडेगा कि ऊँचे ध्येय होते हुए भी श्रमिकों की स्थिति में आज भी सुधार नही हुआ है। विशेषकर आज भी औद्योगिक तथा अन्य श्रमिकों की वेतन नीति सुदृढ नीवपर न होने से अधुरा वेतन श्रमिकों के लिये असन्तोषजनक सिद्ध होता है। खेतीहर मजदूर ही केवल नही अपितु शिक्षित श्रमिकों की बेरोजगारी (Educated unemployment) एक भीषण संकट का रुप धारण कर खडी है। किसी समय निर्धारित किये हुए न्यूनतम वेतन आज समयबाह्य सिद्ध हुए है। स्वयंसेवी श्रमिकों के लिये आज भी सुरक्षा की व्यवस्था नही है। श्रमिकों का वास्तव वेतन (Real wages) दिनोंदिन घटता दिखायी देता है। श्रमिक संघों को पर्याप्त अधिकारों से आज भी वंचित रखा गया है। अर्थात समाज की आवश्यकता हैं कि भारत की परंपरा तथा मर्यादा की सीमाओं में श्रमाधिष्ठित दीर्घकालीन योजना बने। जिस के फलस्वरुप श्रमिक राष्ट्र का महत्वपूर्ण घटक बनकर सम्मान से स्वतंत्रता के फलों का आस्वाद ले सके तथा अतीत कालसेही केवल श्रमिकजगतकोही नही अपितु समस्त मानव समाज का कल्याणकारी नेतृत्व करनेका भारत का जो उत्तरदायित्व हमपर फिर आया है उसे वर्तमान संघटनोंके द्वारा अथवा आवश्यकता होनेपर नये अंतर्राष्ट्रीय श्रम संघटन द्वारा निभा सके इसीमेंही हमे अपेक्षा पूर्तिका समाधान प्राप्त हो सकेगा।

❋ ❋ ❋

प्राचीन और मध्ययुगीन भारत की--

औद्योगिक तथा मजदूर स्थिति

श्री. मु. ल. वैद्य,
अधिवक्ता
अध्यक्ष, भा. म. संघ
विदर्भ विभाग

१. **प्रास्ताविक**-भारत के बारे में यह एक गलतफहमी है कि भारत केवल कृषि-प्रधान देश है। उसमें बडे बडे उद्योगधन्धे नही थे। उसे बाष्प-शक्ति पर चलनेवाले उद्योगों की बिलकुल जानकारी नहीं थी। लेकिन यह कहना गलत है। कृषि उद्योगों के साथ साथ आर्यों ने विज्ञान के क्षेत्र में भी काफी तरक्की की थी, इसके प्रमाण **प्रा. मेक्समूलर** जैसे विश्वविख्यात विद्वान पश्चिमात्य पंडितों के ग्रन्थों से मिलते हैं। **मिसेस. विलर विलाक्स** नामक अमेरिकन महिला लिखती है-

" We have all heard and read about the ancient religion of India. It is the Land of great Vedas, the most remarkable works, containing not only religious ideas on a perfect life, but also facts which all the science has since proved true. Electrons, Airships, all seems to be known to the sires who found the Vedas. "

(हमने भारत के प्राचीन धर्म के बारे में बहुत सुना है। भारत वह पुण्यभूमि है जिसने वेदों का निर्माण किया। इन वेदों में केवल मानवी जीवन के सर्वांगीण विकास को आवश्यक आध्यात्मिक ज्ञानही नहीं है तो भौतिक प्रगति को आवश्यक वैज्ञानिक बातें भी हैं जिनकी सचाई आज विज्ञान ने सिद्ध कर दी है। जिन प्राचीन ऋषिओं ने वेदों का निर्माण किया उन्हे इंलेक्ट्रान्स, एअराशिप्स आदि की पूरी जानकारी थी।)

२. **भारत के उद्योग**–प्राचीन और मध्ययुगीन भारत के मजदूरों की स्थिति पर विचार करने के पूर्व उन दिनों में कौन कौन से प्रमुख उद्योग प्रचलित थे उसकी जानकारी आवश्यक है।

अ) **कृषि उद्योग**–प्राचीन काल से ही भारत में कृषि उद्योग बडी मात्रा में चलता था। कृषि मजदूरों के प्रयत्नों से कृषि उत्पादन संतोषजनक था। चावल, गेंहू, तिल, उडद, चना आदि का विपुल संग्रह सदाहि रहता था। कृषि के अवजार, हल आदि पर्याप्त संख्या में निर्माण किये जाते थे। दुग्धव्यवसाय (डेअरी) भी बडे प्रमाण पर था। ग्रामवासी दूध, दही शहर में ले जा कर बेचते थे।

ब) **कपडा उद्योग**- इस उद्योग में आर्योंने काफी प्रगति की थी। बारिक महीन और टिकाऊ कपडा पैदा होता था। साथही रेशमी और ऊनी वस्त्रों का उद्योग भी तरक्की पर था। इन कपडों की रंगाई भी बडी आकर्षक और दीर्घजीवी होती थी। **कुमारसम्भव में कालिदासने पार्वती** की रेशम की साडी का वर्णन इन शब्दों में किया है—

'वधू दुकूलं कलहंस लक्षणं ॥ ६७ ॥ सर्ग ५ (उसकी रेशमी साडी पर कलहंस के सुन्दर सुन्दर चित्र छपे थे।)

क) **यातायात की व्यवस्था**- इस उद्योग में भारत कभी पीछे नही था। जलयान, वायुयान, रथ, नौका आदिद्वारा देश–विदेश में भारत का व्यापार चलता था। समुद्र में दिन–रात विशाल नौकाएँ लाती, ले जाती थी। काफी मजदूर इस क्षेत्र में काम करते थे।

ड) **खदान उद्योग**–हीरा, सोना, चांदी, लोहा, तांबा आदि धातुओं की भारत में बडी, बडी खदाने थीं और इन में हजारों की संख्या में मजदूर काम करते थे। अथर्ववेदमें इन खदानों का उल्लेख है।

'निधिं विभुति वहुधा गुहा। वसुमणिं हिरण्यम्।'

(हीरा, रत्न, सोना, चांदी को धारण करनेवाली पृथ्वि ! हमें विपुल धन दे।)

इ) **गृहनिर्माण कार्य**–उन दिनों भारत में गृहनिर्माण कार्य बहुत विस्तारित और विशाल मात्रा में होता था। हजारों मजदूर, सैंकडो अभियांत्रिक इस कार्य में जुटे हुये थे। बडे बडे नगर थे और उनकी रचना बडी सुन्दर थी। आर्य तो यह समझते थे कि मानों उन्हें देवोंने ही बनाया हैं।

'यस्याः पुरो देवकृताः' अथर्ववेद

रामायण, महाभारत के मजदूरों ने भी इसी परंपरा को कायम रखकर अयोध्या, हस्तिनापुर, इन्द्रप्रस्थ, द्वारका, मथुरा, लंका जैसे सुन्दर नगर निर्माण किये थे। इस की कल्पना के लिए वाल्मिकी ने रामायण में अयोध्यानगर का जो वर्णन किया है वह इस प्रकार है—

'*अयोध्या नगरी तत्र आसीत् लोकविश्रुता। मनुना मानवेन्द्रेण या पुरी निर्मिता स्वयम् ॥६॥*
आयता दशच द्वेच योजनानि महापुरी। श्रीमती त्रीणि विस्तीर्णा सुविभक्त महापथा ॥ ७ ॥
राजमार्गेण महता सुविभक्तेन शोभिता। मुक्त पुष्पावकीर्णेन जलसिक्तेन नित्यशः ॥ ८ ॥
कपाट तोरणवतीं सुविभक्तान्तरापणाम्। सर्व यन्त्रायुधवतीमुषितां सर्व शिल्पिभिः ॥१०॥
सूत मागध संबाधां श्रीमतीमतुल प्रभाम्। उच्चाटल ध्वजवतीं शतघ्नी शत संकुलाम् ॥ ११ ॥
वधू नाटक संघैश्च संयुक्तां सर्वतः पुरीम्। उद्यानाम्र वणोपेतां महतीं साल मेखलाम् ॥ १२ ॥
दुर्ग गम्भीर परिखां दुर्गमण्यैर्दुरासदाम्। वाजिवारण संपूर्णा गोभिरुष्ट्रैः खरैस्तदा ॥ १३ ॥
सामन्त राजसंघैश्च बलिकर्मभिरावृताम्। नानादेशनिवासैश्च वणिग्भिरूप शोभिताम् ॥ १४ ॥
प्रासादैरत्न विकृतैः पर्वतैरिवशोभिताम्। कूटागारैश्च संपूर्णामिन्द्रस्येवामरावतीम् ॥ १५ ॥
चित्रां अष्टापदाकारां वर नारी गणायुताम्। सर्वरत्न समाकीर्णा विमानगृह शोभिताम् ॥ १६॥
विमानमिव सिद्धानां तपसाधिगतं दिवि। सुनिवेशित वेश्मान्तां नरोत्तम समावृताम् ॥ १७ ॥

—सर्ग बालकांड

(कौशल देश में शरयु नदी के किनारे एक जगद्विख्यात नगर था, जिसका नाम था अयोध्या। उस नगर की लम्बाई ६० मील और चौडाई १५ मील थी। उस के सुशोभित चौडे रास्तों पर प्रतिदिन जल डाला जाता था। बाद में उनपर सुगंधित ताजे फूल बिखराये जाते थे। मध्य राज्य मार्गों से उस की शोभा अधिक बढी थी। वह नगर अच्छे अच्छे बाजारों तथा सुंदर इमारतों से शोभायमान था। उस के चारों ओर परकोट थे। वह सब प्रकार के यंत्र और आयुधों से सज्ज थे। वहां श्रेष्ठ प्रति के कारीगर थे। वहां की ऊँची ऊँची ७ मंजिलोंसी प्रासादों, मंदिरों और राजमहालों पर ध्वज फहर रहे थे। उस नगर की रक्षा के लिये सेंकडो तोपे सुसज्ज थीं! वहाँ हर जगह २ स्त्रियों की नृत्यशालाएं थीं। कमानों, तोरणों से उस की शोभा वृद्धिंगत हुई थी। उस में बागबगीचे, आमराई विपुल मात्रा में थी। दुर्ग में अगाध खंदक होने से शत्रुओं को प्रवेश करना मुष्किल था। हाथी, घोडे, बैल, ऊंट, काफी संख्या में थे। वहां पर मांडलिक राजा लोक उपस्थित होकर अपना कर राजा दशरथ को चुकाते थे। वहां पर विदेशी व्यापारी व्यापार करने आते थे। स्त्रियों की क्रीडा के लिए अलग क्रीडास्थान थे। मधुर गन्ने के रस की मधुशालाएं वहां अनगिनत थीं। दुदुमी वीणा, मृदंग इन के नाद से वह नगर हमेशा निनादित रहता था। उत्तम पुरुषों के निवास से उस शहर की शोभा अधिक बढ गयी थी। मानो लगता था कि तपश्चर्या की पुण्याई से स्वर्ग में जाने के लिये सिद्ध पुरुषों को विमानही मिला है।

न्यूयार्क, वाशिंग्टन, लंदन, पेरिस, मास्को, टोकिओ इन आधुनिक शहरों की अपेक्षा अयोध्या शहर किंचितमात्र भी कम नहीं था। जिन महानुभावों को यह शहर देखने का भाग्य मिला, उन की आंखे तृप्त हो गयी। जिन मजदूरोंने वह सुन्दर शहर निर्माण किया वे धन्यवाद के लिये पात्र है।

'अद्य परिसमाप्तमीक्षणयुगलस्य द्रष्टव्यदर्शन फलम्। आलोकितः खलु रमणीयानामन्तः। दृष्ट आल्हादनीयानामवधिः। वीक्षिता मनोहराणां सीमान्तलेखा प्रत्यक्षीकृता प्रीतिजननानां परिसमाप्तिः। विलोकिता दर्शनीयानामवस्थानभूमि :' (बाण) कांदबरी

यहीं गौरवशाली परंपरा इन मजदूरों ने मध्ययुगीन भारत में भी कायम रखी। पाटलीपुत्र, उज्जैन, दिल्ली, बनारस, (काशी) विजयानगर, तक्षशीला, नालंदा, मदुरा, कांची इन नगरों के वर्णनों से यह बात स्पष्ट हो जाती है। ग्रीक वकील **मेगास्थेनिस** ने **पाटलीपुत्र** नगर की तारीफ की है, वैसीही तारीफ चीनी प्रवासी **युआन चँगने** नालंदा आंतरराष्ट्रीय विश्वविद्याल की की है। उसने लिखा हैं– " The whole establishment is surrounded by brickwalls. One gate opens into the great college from which are seperated eight other halls standing in the middle. Richly ordoned towers and fairly like turrets like the pointed hill tops are congregated together.

All the outside courts in which are the priests' chambers are of four stages. The stages have dragon projections and colour carves, pearl, red pillers carved and ornamented, richly adorned balustrades and roofs covered with tiles that reflects the light in the thousand shades."

अजिंठा, एलोरा की गुँफाए और खजुराहो के मन्दिर अभी भी अपनी भव्यता और सुन्दरता का परिचय देते हैं। सैंकडो अभियंताओं और हजारों मजदूरों के रात-दिन किये अथक परिश्रम का यह फल है। ताजमहल की निर्मिति के लिए २० हजार मजदूर १२ साल तक दिनरात मेहनत करते थे। नौ करोड सतरह लाख रुपया इस ताजमहल को बनाने में खर्च किया गया था।

फ) शस्त्र उद्योग–आर्य अस्त्र–शस्त्र में निपुण थे। आज के विस्फोटक बम और गैस के समान उन दिनों में भी विमानों द्वारा बमवर्षा होती थी। लडाई में विद्युतरथ, अग्निरथ, अनश्वरथ का उपयोग किया जाता था। उसका ऋग्वेद में उल्लेख है–

'प्र वो वायुं रथ युजं कृणुध्वम्' । ऋ ५-४१-६ '(रथ रथ में वायु को जोडो) वायु को तुम अपने रथ में जुडनेवाला बनाओ, अर्थात ऐसा प्रबन्ध करो कि जिससे वायु तुम्हारे रथ का संचालन करें।

२) **विद्युतरथ**-'स वेधाः विद्युत रथः सहसस्पुत्रो अग्निः ।
शोचिष्केशः पृथिव्यां पाजो अश्रेत्' ॥ ३।१४।१ ऋग्वेद

(वह क्रान्तदर्शी वेधाशिल्पि है। जो अतीव बलसम्पन्न होकर प्रकाशमय अग्नि की भाँति पालक बनकर विद्युत-रथवाला हो कर पृथ्वी में रहता है।)

३) **अनश्वरथ**-घोडे आदि से रहित रथ। 'अश्विनो रसनंरथम् अनश्वं वाजिनीवतोः। तेनाहं भूरि चाकन् ॥' ऋ. १।१२०।१०

(शक्तिशाली वीरों को इधर-उधर ले जानेवाला रथ अनश्व जिसमें मैं अधिक तेजस्वी हूँ।)

'अनश्वो जातो अन भी शुरुकथ्यो रथः त्रिचक्रः ।
परिवर्तते रजः ॥ महत्तद्वो देव्यस्य' । ऋ. ४।३६।१

(बिना घोडों का तीन चक्केवाला रथ अन्तरीक्ष में उडनेवाला है। हे ज्ञानिओं! वह प्रशंसा के योग्य है।)

४) **जलयान**-'यास्ते पूषन नावो अन्तः समुद्रे। हिरण्यथीरन्तरिक्षे चरन्ति ॥
ताभिर्यासि दूत्यां सूर्यस्य कामेन। कृतश्रवः इन्छमानः ॥' ऋ. ६।५८।३

(हे पूषन! जो तेरी लोहादि धातुओं से बनी नौकाएं समुद्र के भीतर से और अंतरिक्ष में चलती हैं। मानो तू उनके द्वारा इच्छापूर्वक यशको चाहता हुआ सूर्य के दूतत्व को प्राप्त कर रहा है।)

उस समय अस्त्र-शस्त्र हजारों की संख्यामें निर्माण होते थे। अस्त्र उसे कहते है जिसे मंत्रों के जरिये से दूर फैंका जाता है।

वे अग्नि, वायु, गैस, विद्युत तथा यांत्रिक साधनों से चलते हैं। शस्त्रोंकी गणना खतरनाक हाथियारों में होती है, जिस के प्रहारसे चोट पहुंचती है, और मृत्यु होती है। जैसे—

शस्त्रों के भी अनेक प्रकार थे। इन अस्त्रशस्त्रों का वर्णन धनुर्वेद, धनुष चन्द्रोदय धनुष्य-प्रदीप इन संस्कृत ग्रंथोंमें मिलता है। प्रत्येक ग्रंथ की श्लोक संख्या ६० हजार है।

इन विभिन्न औद्योगिक क्षेत्रों में काम करनेवाले मजदूरोंकी क्या समस्या थी और वे कैसे हल की गयी, इस का विवेचन याज्ञवल्क्यस्मृतिशुक्रनीति, रामायण, महाभारत, कौटिल्य का अर्थशास्त्र आदि संस्कृत ग्रंथों में मिलता है। प्रर्याप्त वेतन, छुट्टियां, छुटी का वेतन, भविष्यनिधि (प्राव्हिडंट फंड), निवृत्तिवेतन (पेन्शन), फेमिली अलाउन्स, बोनस, मुनाफे में हिस्सा (प्राफिट शेअरिंग), समयपर पदोन्नति (प्रमोशन) पैदावार बढाने का मजदूरों का प्रयास, मालिकों की अपने आप को विश्वस्त (ट्रस्टी) समझकर मजदूरों के प्रति सद्भावना का बर्ताव ये सब मोटे रूप में उस का दृश्य फल था।

१) वेतन निश्चत करना:- पर्याप्त वेतन निर्धारित किये बगैर कोई मालिक अपने मजदूरोंसे काम नहीं ले सकता था। यदि ऐसा वह करें, तो वह बडे जुर्म को पात्र होता था। ऐसे मालिक को अपने मुनाफे में से १/१० रकम उस मजदूर को जुर्माना कर के देनी पडती थी।

" दाप्यस्तु दशम भागं वाणिज्य, पशु सस्यतः।

अनिश्चित्य भृतिं यस्तु कारयेत स महीक्षिता ॥ " याज्ञवल्क्यमृति, श्लोक १९७

(यदि कोई मालिक काम करनेपर भी अपने मजदूर को पूरा वेतन नही देता, तो उसे वेतन मिलने तक मालिक का सामान अपने कब्जे में रखने का पूरा अधिकार है।)

" गृहीत वेतनः कर्म त्याजन द्विगुणम् आवहेत्

अगृहीते समं दाप्यो भृत्यै रक्ष्य उपस्करः ॥ १९६ ॥-या. स्मृति

साथही साथ स्मृतिकारोंने मजदूरों पर भी काफी जिम्मेदारी डाली थी। यदि कोई मजदूर समय के अन्दर अपना काम पूरा नही करता तो उसे अपने मालिक को जुर्माना देना पडता था। जुर्माने की रकम वेतन से दो गुना थी।

वेतन के प्रकार :- आज के समान उस समय वेतन के तीन प्रकार थे। श्रेष्ठ वेतन (लिविंग वेजेस) साधारण वेतन (फेअर वेजेस) और न्यूनतम वेतन (मिनिमम वेजेस)। जिस वेतनसे मजदूर केवल अपना पेट भर सकता है, उसे न्यूनतम वेतन कहा गया है। जिस वेतन से आवश्यकताओं की पूर्ति होती थी, उसे साधारण वेतन कहा गया है। इससे अधिक जो वेतन मिलता था उसे श्रेष्ठ वेतन कहा है।

" अवश्य पोष्य भरणा भृतिर्मध्या प्रकीर्तिता।

परिपोष्या भृतिःश्रेष्ठा समान्नाच्छादनार्थिका ॥ "

२) समयपर पूरा वेतन देना - मजदूरों का बिना कटौती पूरा वेतन देना इस बातपर बडा ध्यान दिया जाता था। नियमित रूप से वेतन के पुस्तक (रजिस्टर) रखना इसकी जिम्मेदारी मालिकों पर थी। मजदूरों को समयसमय पर वेतन तक्ता (चार्ट) दिया जाता था।

" न कुर्यात् भृति लोपं तु तथा भृति विलम्बनम् ॥ ' शुक्रनीति

जवानों का वेतनः-जवानों को सैनिकी शिक्षा के समय आधा वेतन देना और शिक्षा पूरी होने के बाद पूरा वेतन देना चाहिये। लडाई के समय उनके वेतन में २५% वृद्धि करनी चाहिये।

" सैनिकाः शिक्षिता ये ये तेषु पूर्णा भृतिः स्मृता।" शुक्रनीति

३) छुट्टी और छुट्टी का वेतनः–मजदूरों को सालाना १५ दिन की सवेतन छुट्टी मिलती थी। उसी प्रकार हर उत्सव को सवेतन छुट्टी मिलती थी।

" सेवां विना नृपः पक्षं दद्यात भृत्याय वासरे ॥
भृत्यानां गृहकृतार्थे दिवाया मं समुत्सृजेत।
निशिया मत्रयं नित्यं दिनभृत्येऽर्धयमिकम् ॥
तेभ्यः कार्यं कारयति ह्युत्सवाधार्विना नृपः।
अध्यावदयं तूत्सवेऽपि हित्वा श्राद्ध दिनं सदा ॥ " शुक्रनीति

४) बीमारी की छुट्टी और उसका वेतनः—मजदूरों की बीमारी के दिनों में ३ महिने तक ३/४ सवेतन छुट्टी लेने का अधिकार है। एक हप्ते की बीमारी की छुट्टी के लिए पूरा वेतन मिलना चाहिये।

" पाद हीनां भृतिं तु आर्ते दद्यात त्रैमासि कीं ततः
पंचवत्सर भृत्ये तु न्यूनाधिक्यं यथा तथा ॥"– शुक्रनीति

५) नोकरी का अधिकार–:नोकरी करते समय यदि पिता की मृत्यु होगी तो उस के पुत्र को नोकरी देनी चाहिये। उसी प्रकार यदि कोई मजदूर नोकरी करने के लिये पात्र नहीं है तो उसका अपना प्रतिनिधि (nominee) अपने जगह पर मुकर्रर करने का अधिकार है।

" स्वामी कार्ये विनष्टो यस्तत्पुत्रो तद् भृतिं वहेत्।
यावद् बालोऽन्यथा पुत्रगुणान् दृष्ट्वा भृति वहेत्।
शश्वत सदोषितस्यापि प्राह्यः प्रतिनिधिः ततः।
सुमहत गुणीनं तु आर्ते भृत्यर्धं कल्पयेत सदा।"— शुक्रनीति

६] भविष्यनिधी, निवृत्तिवेतन, फेमिली अलाउन्स, बोनस:—

भविष्यनिधी के लिये कम से कम १/६ वेतन और ज्यादासे ज्यादा १/४ वेतन मजदूर के वेतनसे कटौती कर लेना और उस में मालिक ने अपनी ओर से कुछ अंश मिलाकर पूरी भविष्यनिधीकी रकम मजदूरोंको देना। मजदूरको उसके वेतनकी आधी रकम उसके

जिन्दगी तक पेन्शन के रूप में देना। उसके मृत्युके बाद विधवा पत्नी और लडकीको निवृत्तिवेतन (पेन्शन) की आधी रकम पारिवारिक चरितार्थ के लिये देनी चाहिये। लडका बडा (मेजर) होनेपर यह अलाउन्स बंद होगा। हरसाल मजदूरको १/८ वेतन बोनस करके देना चाहिये।

" चत्वारिंशत् समानीता सेवया येन वै नृपः।
ततः सेवां विना तस्मै भृत्यर्थे कल्पयेत सदा ॥
यावज्जीवं तु तत्पुत्रेऽक्षमे बाले तदर्धकम्।
भार्यायां वा सुशीलायां कन्यायां वा स्वश्रेयसे ॥
अष्टमांशं परितोष्य दद्यात भृत्याय वत्सरे।
कार्याष्टमांशं वा दद्यात कार्ये द्रागधिकं कृतम् ॥ "—शुक्रनीति

७) **मुनाफेमें हिस्सा (प्रॉफिट शेअरिंग) :—**

मजदूरोंने अधिक मुनाफा दिया तो मालिकोंके वेतनके अलावा उन्हे अपने मुनाफेमें से कुछ हिस्सा देना चाहिये।

" आधिकं देयं कृतेऽअधिके "—या. स्मृति

८) **औद्योगिक झगडेका कारण और निवारण :—**

समय पर पूरा वेतन देना, मजदूरोंसे सम्मानपूर्वक बर्ताव करना, इससे मालिकों और मजदूरोंमें झगडा होने का कोई कारण नहीं होता। कम वेतन और दुर्व्यवहार ये झगडोंके मुख्य कारण हैं। प्राचीन कालमें पंच और पंचायते दोनों पक्षोंकी ओरसे पैली सुनकर इन झगडोंके तय करते थे।

" भृतिदानेन संतुष्टाः मानेन परिवर्धिताः।
सांत्विता मृदुवाचा ये त्याज्यंत्याधिपं हिते।
ये भृत्याहीन भृतिकाः शत्रवस्ते स्वयं कृताः।
परस्य साधुकास्तेतु छिद्रकोष प्रजाहराः ॥
वाक्यारुपयात् न्यूनवृत्त्य—स्वामी प्रबल दंडतः।
भृत्यं प्रशिक्षयेत नित्यं शत्रुत्वं तु अपमानतः ॥ "—शुक्रनीति

९) **आदर्श मालिक–मजदूर सम्बन्धः**—शुक्रनीति में आदर्श मालिक–मजदूर सम्बन्धों पर काफी जोर दिया है। बल्कि मजदूर नीति का यही लक्ष है। मालिक–मजदूर परस्परों के हितसम्बन्धों का रक्षण करने के लिये आत्यन्तिक स्वार्थत्याग करने में पीछे नहीं रहते थे। उन के सम्बन्ध स्वामी रामचन्द्र और उनके सेवक वानर इनके सम्बन्धों के समान थे।

"भृत्य : स एव सुश्लोको नापत्तौ स्वामिनं त्यजेत ।
स्वामी स एव विज्ञेयो भृत्यार्थे जीवितं त्यजेत ॥
न राम सदृशो राजा पृथिव्यां नीतिमान भूत् ।
सुभृत्यतातु यन्नीत्या वानरैरपि स्वीकृता ॥ "--शुक्रनीति

१०) **राष्ट्रप्रेमः**— शुक्रनीति में इस पर भी जोर दिया है कि हर मजदूर राष्ट्रप्रेमी होना चाहिये । यदि कोई परकीय शत्रु अपने राष्ट्रपर आक्रमण करता है या कोई राष्ट्र विघातक कृत्य करता है तो मजदूरों ने डट कर उस का मुकाबला करना चाहिये । वह उनका मातृभूमि के प्रति एक पवित्र कर्तव्य है । आक्रमण तथा राष्ट्रीय आपत्ति के समाप्त होने तक उन्हें अपनी माँगे स्थगित रखनी चाहिये । यदि वे ऐसा नही करते तो वह उनकी बडी भारी गलती होगी जिसे इतिहास कभी क्षमा नही करेगा । उत्पादन बढाकर राष्ट्र को समृद्ध करना, राष्ट्र का संरक्षण करना और अपने न्याय्य अधिकारों के लिये लडना इस त्रिसुत्री पर कार्य करना यही प्राचीन भारत की मजदूर नीति का एकमेव लक्ष्य था । भारतीय मजदूर संघ भी यही महान लक्ष्य हासिल करने के लिये कार्य कर रहा है ।

"आपि राष्ट्रविनाशाय चोराणामेक चित्तता ।
शक्या भवेन्न किं शत्रुनाशा नृपभृत्ययोः ॥"—शुक्रनीति

* * *

FREE TRADE UNION MOVEMENT AND ITS VALUE

Shri B. K. MUKHERJI

Free trade union movement alone is capable to offer a positive plan for fulfilment of human aspiration for happiness which can be achieved in a peaceful world. What is needed for the full development of human faculties is food, clothing and a proper house, but unless the society is democratically governed they cannot be adequately available to every one. A free trade union is the spear-head of democracy and ensures equitable distribution of the fruits of workers' toil. Trade union organisation is the only institution which aspires to raise the standard of living of all people as workers are aware that poverty anywhere constitutes a danger to prosperity everywhere. To achieve this objective a trade union cannot remain confined to the national boundaries as peace and democracy have to be sustained throughout the world. But international activity of trade unions in India is conspicuous by its absence and this is one of the reasons why the movement has so far failed to influence the Government to base its decisions on social justice. India's contribution in the

international forums, like ILO and ICFTU, to banish want and poverty conducive to the establishment of a lasting peace in the world, has been too miserable. Trade unions in India are generally ignorant even of the power and jurisdiction of such an governmental institution known as International Labour Organisation ILO, and therefore Indian Workers are not really represented in this body. Government send any political leader to represent free trade unions.

The International Labour Organisation (ILO) is of very special importance to the free world as the only international organisation to deal with these problems which are most real to the majority of world population such as right to freedom and dignity, wages, security and employment. The participating governments in the peace conference at Versailles in 1919 after the world war I, provided in part XIII of the treaty the creation of this Labour Organisation, a tripartite body, for standardization of labour condition in the world. At Philadelphia in its 26th Session in 1944 the ILO declared its aims and purposes that labour is not a commodity and the war against want must be carried on with vigor by continuous and concerted international effort jointly by representatives of workers and employees with those of Governments. Further, this Conference reiterated the statement enshrined in the preamble of the Constitution that lasting peace can be established only if it is based upon social justice, hardship and privation can produce unrest to imperil the peace and harmony in the world. Improvement of labour condition is therefore urgently required. The Conference recognised the solemn

obligation of ILO to further programmes to achieve full employment and the raising of the standard of living and the effective recognisation of the right of collective bargaining. The Constitution again stated that failure of any nation to adopt human conditions of labour is an obstacle in the way of other nations which desire to improve the conditions in their country. The peace treaty at Varsailles was not signed by labour traders but by governments who were moved by the desire to secure permanent peace in the world and therefore agreed to the objectives set forth in the preamble of the constitution of the ILO. The ILO occupies a very high and effective position among the specialised agencies of the United Nations Organisations as it approaches its task by means of Industrial conventions, recommendations, technical assistance, expert studies, discussion and training of national officials concerned with labour and industrial matters, investigation and adjudication of specific complaints alleging violation of established stands. The methods of operation and eloborate rules enforcing implementation of decisions have added to the effectiveness of the ILO in transferring the international environment. Though, governments and employees are generally reluctant to improve labour standard there are about 250 International conventions relating to labour standard covering all trades. Whether these international conventions are ratified or not by competent national authorities most of the countries have adopted the safety codes and other social programmes. For adoption of International conventions and Recommendations a two-third majority is required in the Conference and each government has to place same,

within 18 months before the national authority competant to ratify the same. The Governing Body of the ILO shall refer, any complaint of non-compliance, to the Commission of Enquiry and then to the International Court of Justice, as an appeal for a finding.

In June, every year, ILO conference meets in addition to periodical regional conferences. The national delegation to these conferences consists of two government members and one representative each of employers and workers and each delegate can be accompanied by two advisors for every item on the agenda for the meeting. Advisors can speak but cannot vote. Agenda for the Conference is decided by the Governing Body which consists of forty members elected by the Conference in the proportion of each national delegation. Though half of the total delegates in the conference and members in the governing body represents government it is really a tripartite organisation as all the three parties enjoy equal right and can vote as they like. The ILO offers help and hope to millions of people particularly in underdeveloped countries in Asia, Africa and South America. It has set up ten industrial committees to function under it dealing with the particular problems concerning the industry. All these industrial committees have endorsed among other conclusions, a 40 hour-week but except for the driving time in the road transport industry left the rest for national collective bargaining. In these industrial committees equal representations of workers, governments and employers are allowed and the national delegations therefore consists of six delegates but one advisor to every delegates to these industrial committees

are borne by the ILO, but expenses of the advisors are to be met by each national delegations. Govts. have to pay for the delegates and advosors attending ILO Conferences.

Apart from the ILO, a governmental labour organisation, there are at present three non-governmental International Labour Orgnisations. They are IFCTU, WFTU and ICFTU. Under article 12 of the ILO constituion ICFTU, though the youngest of these three organisations, enjoys a special position in the ILO in the shape of its advosory capacity. Since the trade unions in India are denied, by the India Government, a representation in the ILO or any of the industrial committees for the last few years it seems appropriate for these organisations to seek the help of these international labour organisations to raise questions of violation by the government in the ILO. Free labour organisations in this country must therefore choose one of these International Organisations for the purpose and ICFTU seems to be equiped with all the qualities required for this choice.

Happily for the free trade union movement in the world the International Fedration of Christian Trade Unions have early this month, renounced in its congress held in Lenxemburg, not only the word "Chritian" in the title but also references in the constitution of social principles of christianity. This transformation has very much advanced the cause of free labour movement in the world as formal unity of these two fedrations can be achieved in the near future. Though ICFTU was formed

only in the year 1949 its influence over wider areas in the world is very much considerable. It was formed with 261 representatives from 59 national trade union centres in 53 countries claiming a membership of 48 millions. But within these few years (upto the end of 1967) its membeshih rose to 63 millions with affiliates in more than 100 countries. Unlike the world Fedration of Trade unions, dominated by communist countries, ICFTU has to depend for funds on affiliation fees from its affiiates. It received about Rs. 45, 00, 000/- in 1967 as fees in addition to Rupees 2, 25, 00, 000/- collected curing the same year for the International Solidarity Fund established recently to assist members in distress. Because of its advosory status with the UNO too ICFTU maintains a permanent representative, like all member states, in the UNO headquarter. ICFTU derives its strength from the 19 International Trade Secretariates covering all types of wage earners in the free world They are industrial federations of national trade unions and some of them are very old having been organised in the last century such as the International Transport Federation established in 1896. ITF covers transport workers in 70 countries with a membership of 7 millions in 230 affiiliated organisations. ITF also maintains regional offices like ICFTU in different countries at a considerable expenditure. Apart from these activities ITF offers monetary assistance to its members in need as it sent financial relief, more than once, to AIRF during strike action. Occupational affinity–has enabled these organisations to develop a very high degree of solidarity and co-operation minimising political disagreements and friction. Like ICFTU these International Trade Secretariates depend on there members

or funds and as they are autonomous bodies ICFTU dose not spend any money for their activities unlike trade unions in India these organisations and ICFTU talk less of communist menace but always take effective steps to check communist influence in the world.

The World Federotion of Trade unions is vertually a state organ of the communist countries having its sole aim to promote the interest of the communist party around the world and not to improve living standard of workers needed for lasting peace in the world. Though it is financed by the communist states WFTU has so far failed to impress non-communist trade unions to march with them. The role of trade unions in communist countries is restricted only to intensification of production and not to remove grievances or to coll a strike to remove them. Nothing can have less appeal than the above aspects of communist doctrine in free countries. This is the major cause of its weakness and for this reason trade unions are not inclined to affiliate with it and apply for affiliation with ICFTU inspite of its strict rules and difficulty in affiliation. To combat the communist menace through its propoganda machine, the W. F. T. U., free countries need fully developed and financially strong trade union specially in India. This is the task B. M. S. has undertaken to perform and it depends upon the members to help its early completion.

❋ ❋ ❋

GOVERNMENT EMPLOYEES NATIONAL FORUM

Shri W. S. Mitkari, Nagpur

When some of us decided to achievely participate in the activities of the Unions and Associations in the Central Govt. Services a few years ago it was a general impression that the entire Trade Union Movement of Central Government employees was controlled and dominated by Communist leadership. It was also said that the Communists had their well-nit organisations in all the Central Govt. Departments. These Organisations conducted their activity and carried on their programmes and agitations under the auspices of Joint Councils or Coordinating Committees giving a general impression that the Central staff in Railways, Defence and other departments were organised under one and the same banner and that they had a homogenious trade union organisation.

But ultimately it became clear that there were independent organisations in Railways, in Defence and that they simply Joined Confederation of Central Govt. Employees and Workers on common issues. It could be further seen that there was a multiplenty of unions in Railways and

that only those organisations out of these, that were akin to the leadership in Confederation, joined the Confederation on common issues, so that a very large section of employees in Defence and Railways were not represented. It was also revealed that even the Confederation of Central Govt. Employees which was said to be representing the entire Central Staff excluding Railway and Defence employees, actually represented only a section of Central Staff and that a number of departments were never in the Confederation.

Consequently, our apprehension that it would not be possible to enter the Central Govt Employees' Organisations and to control their activities because of the strength and comprehensiveness of the organisation came to an end. It was an additional experience that the Confederation of Central Govt. Employees was not a recognised body, but simply a rallying ground for the leaders of the Unions and Associations and that the Central Govt. employees' activity in the country moved round the pivot of the P & T Federation which was the only well-nit onganisation. The practicability of very easily forming Unions and Associations in the departments where there were no organisations, of controlling the activities of the Unions which were not in the Confederation, of actively participating in the functioning of Unions within the Confederation became sufficiently evident. Even in the National Federation of the P&T Employees, a large number of independent and nationalist employees were already there in the set up as office bearers though the leadership at the top came from the Communist Camp.

After participation in the Unions and Associations for two or three years, the picture that has emerged out

is that the Nationalist Employees controlling the Labour Employment and Rehabilitation Employees' Association, the Archaelogical Staff Association and the All India Savings Bank Control Organisation Employees' Union within the Confederation and the Attached and Subordinate Offices' Employees' Association outside the Confederation. Besides, there are Unions and Associations such as Central Excise ministerial Staff Association, Food Employees' Union, All India Audit and Accounts Association which are controlled by independent non-communist leaders. The N. F. P. T. E. and its affiliates and other organisations in the Confederation are controlled by Communist or Communist dominated leadership.

In the Communist dominated Organisatons also only the P&T Federation is the well-nit organisation where as the other organisations are extremely weak. It has been out experience that even the Income Tax Federation has some organisation at bigger places, but a very major bulk of Income Tax employees are unorganised and eagerly awaiting initiative from Nationalist Leaders. Many Unions are paper organisations or merely demonstrating Units without any regular and scientific working. Communists or Communist dominated Leaders wherever they were active or were in office were doing so in the absence of any other dynamic force. In the P & T Fedration, i. e. in all its affiliates role of the large number of office bearers who are nationalists uses to be simply passive and not objective. In Conferances, Nationalist Representatives opposed their counter-parts from other places not knowing that they were also Nationalists. In some Circles, when the

Nationalist worked objectively, some of the affiliates controlled by them. These observances and experiences led us to the conclusion that for over-all control of Central Govt. Employees' movement an objective, purposeful and planned working was necessary and adequate for the time being.

Though, there was enough certainty of marching towards the goal by a planned and objective approach the nationalist elements at different places and in different departments faced difficulties of isolation and opposition by the Communist and there fellow-travelers and of means of contact, of knowledge of issues and working. The smaller groups in the initial stage suffered from inferiority complex, small number and consequential unattractiveness. Everybo y felt the urgency of a common rallying ground for all nationalist workers and employees which could also ensure necessary guidance and support. Objective participation in the existing Unions and Associations from a rallving ground of non-Trade Union type could be planned aiming at replacing the communist control by nationalist control. The process could be successfully accelereted by a model working in nationalist Unions and Associations and by the availability of guidance, literature and organisational support.

A net work of the Nationalist Central Employees' Forum all over the Country would also be in a position to provide with country-wide links to the organiser in every departmeut and create an atmosphere of confidence. It can and the same time help nationalist to emerge out as a sizeable force without in any way disturbing the

present set up of Unions thus avoiding the chaos which otherwise may presumably become inevitable. The Trade Union utility or strength of the nationalist Central Govt. Employees' Forum need not be under-estimated simply of its peculiar Constitution and non-Trade Union form. The posibility and practicability of ultimately evolving a very comprehensive and all circumscribing structure in a final form cannot also be ruled out.

● ✻ ●

प्रसिद्धि व प्रकाशन

—श्री.बापूराव भिशीकर
संपादक-दै. तरुण भारत, पूना.

एक दो बात प्रारम्भ से ही कह देना चाहता हूं। पहली बात यह कि ट्रेड युनियन एक्टिविटी से प्रत्यक्ष मेरा सम्बन्ध नहीं है। जैसी घटनायें घटती हैं मनमें आये उनकेप्रति विचारों को समाज के सामने रखना यही मेरा काम है। निरीक्षक के नाते ट्रेड यूनियनिजम के विषय में बताऊंगा। संसार के लोग क्या सोचते हैं-वह भी बताऊंगा। मेरे सामने भाषा की कठिनाई भी है। हिन्दी में मैं बोल नहीं पाता हूं। फिर भी हिन्दी में ही बोलूंगा। गल्तियों को क्षमा करेंगे।

दूसरी बात जब कार्यालय में ट्रेड यूनियन की बात चलती है तब तो यह मानना होगा कि ट्रेड यूनियन का महत्व है। समाचारपत्र कार्यालयों में यह सब मानते हैं कि औद्योगिक विकास के कारण ट्रेड यूनियनिज्म को स्वीकार करना पडेगा। संगठन बने इसके प्रति किसी समाचारपत्र का आक्षेप नहीं है। अपनी स्थिति का सुधार कामगार संगठित होकर करें यह भी इस्टेब्लिश्ड है। हमारे देश में ट्रेड यूनियन मूवमेंन्ट चलती है, उसकी इमेज क्या है, उसकी डिसिप्लिन कैसी है, पोलिटिकल पार्टी का अभ्यास क्या है – यह सारी बातें वृत्तपत्र में आती हैं। ट्रेड यूनियन मूवमेंन्ट की भद्दी शक्ल भी हमारे सामने आती है, जिसका प्रभाव समाचारपत्रों के मन पर पड़ा है। कुछ ट्रेड यूनियन्स और पोलिटिकल पार्टीज़ साथ साथ चल रही हैं। राजनीतिक उद्देश्य की पूर्ति के लिए ट्रेड यूनियन्स को एक्सप्लायट किया जाता है-यह बात हर एकके मन में हर एक आन्दोलन का विचार करते समय आती है। उसी एनालिसिस को सामने रखनी पड़ती है। जो संगठित होकर इस क्षेत्र में सामने आये, जिन्होंने कुछ नाम कमाये वह सब प्रायः कम्युनिष्ट पार्टी के लोग थे। समाज के विभिन्न अंगों को संगठित करते हुवे कम्युनिष्ट क्रान्ति की ओर

इन सब को ले जाते हैं। यदि इसी उद्दिष्ट से उन्होंने किया तो इसमें इन्टरनेशनल पॉलिटिक्स आना स्वाभाविक है। एस. एम. जोशी, फर्नान्डिस आदि सभी राजनीतिक नेता हैं। राजनीतिक कनविनियन्स के लिये मजदूरों को भड़काया करते हैं। जो मजदूरों में धारणायें निर्माण होनी चाहिये निर्माण नहीं हो पाती हैं। केन्द्रीय कर्मचारियों की हड़ताल के सम्बन्ध में गृहमंत्री ने स्वयं कहा कि 'स्ट्राइक वाज पोलिटिकली मोटिवेटेड'। ट्रेड यूनियनिज्म में भारतीय मजदूर संघने एक नयी इमेज बनाने का प्रयत्न किया है। भारतीय मजदूर संघ भारतीय जनसंघ की विंग मानी जाती है यह बात कहां तक सच है या नहीं यह आप सोंचे। भारतीय जनसंघ की प्रिज्यूडिसेज मजदूर संघ के साथ लगती हैं इसी लाइट में एनालिसिस होती है। पोलिटिकल पार्टी के प्रति की धारणायें उसकी श्रम संस्था के बारे में भी होती हैं। यह पद्धति कब बदलेगी यह बात आप पर निर्भर है।

ट्रेड यूनियन्स द्वारा जो डिमान्ड्स की जाती हैं कभी कभी वह भी उपहास का विषय बनती हैं। विशिष्ट समय पर विशिष्ट माँगें लोगों को भड़काने के लिए रखी जाती हैं। माँगें रीजनेबल हैं यह इम्प्रेशन कैसे क्रिएट हो यह सोचना होगा। नीड बेस्ड मिनिमम वेज की बात पढ़ी। सभी समाचारपत्रों को ऐसा लगता है कि नीड बेस्ड मिनिमम वेज देने की क्षमता सरकार में नहीं है। अन्य बातों को ख्याल मे लाया जाय तो नीड बेस्ड मिनिमम वेज केन्द्रीय कर्मचारियों को दिया तो ठीक नहीं होगा। यह मांग वास्तविक है, इसे समाचारपत्र नहीं मानते हैं। और इस पर झगडा खडा हो सकता है यह बात अखबार के लोगों के मन में नहीं आ सकी है।

छोटे छोटे कारखाने होते हैं। किसी बात पर स्ट्राइक होती है। डिमान्डस रखते समय ऐसा जान पडता है कि यह कामगारों को कुछ गति देने के लिए या उस पर जनता की सहानुभूति होगी कि नहीं इसे जानने के लिए रखी गयी हैं। मैं आपके सामने यह बात स्पष्ट कहना चाहता हूं कि यदि ट्रेड यूनियन ऐक्टिविटी का समाज पर क्या प्रभाव पडता है इसका बिना विचार किये हुये कुछ किया गया तो ठीक नहीं होगा। गवर्मेन्ट इम्पालाइज के स्ट्राइक के बारे में ऐसे कई पत्र आये कि 'दे डू नाट डिजर्व एनी कन्सेशन'। समाज के प्रति उनकी दृष्टि समाधान कारक नहीं है। समाज के प्रति उनका क्या बर्ताव है यह भी ध्यान रखना आवश्यक है। देहाती लोगों से इनका सम्पर्क आता है, काम नहीं होता है। करप्शन आता है। पैसा मांगते हैं। येही जब यूनियन बनाकर पैसा मांगते हैं तो लगता है कि इन्हें किसी प्रकार की मांग करने का कोई अधिकार नहीं है। लोगों की इन्हीं कारणों से इनके प्रति सहानुभूति नहीं है। 'यदि पगार की डिमान्ड में टेन्शन की मात्रा बढ़ेगी तो सरकार समाप्त हो जावेगी' ऐसा श्री. नाइक ने कहा है।

कारखानदार बताते हैं कि लोगों को ज्यादा दाम देना पड़ता है। प्राइस और वेज का रिलेशन ही ऐसा रखा जाता है। इस पर श्रमिकों को जिम्मेवार बनाने की भावना बनती है। क्लास की मांग का विचार रखते समय समाज की प्रतिक्रिया क्या है इस पर विचार रखना जरूरी है। श्रमिकों के लिए समाज की बेकिंग आवश्यक है। जिस प्रमाण में श्रमिकों की डिमांड के लिए समाज में बेकिंग या विरोध होता है उसका रिफलेक्शन समाचारपत्रों में आता है। यह दैनन्दिन जीवन को भी प्रभावित करता है। बम्बई में बसेसकी हड़ताल के रिफलेक्शनस् अखबार में जगह मिलती है। हर बरसात में फर्नान्डिस सफाई कामगारों की मांग रखते है। लोगों को यह ज्ञान पडता है कि यह ब्लैक मेलिंग है। यह बात सबके सामने आती है। यह बात कहने वाले लोग भी वायुमन्डल में रहते है कि इस ब्लैक मेलिंग के सामने शासन को झुकना नहीं चाहिये। सार्वजनिक जीवन और श्रमिक आन्दोलन का सुसम्वाद कैसे हो इस पर यदि विचार हो तो नयी सहायता अवश्यक होगी।

तीसरी बात यह कि जब ट्रेड युनियन ऐक्टिविटी में मालिक और मजदूर में विवाद होता है, आरोप लगाते है और सफाई दी जाती है—यह हो हमें आपत्ति नहीं। हम मालिकों तथा कामगारों दोनों का ही निवेदन पेश करेंगे। किन्तु रंज लगता है जब कि ट्रेड यूनियन का स्टेटमेन्ट रिपलसिव होता है। पूना में किर्लोस्कर में स्ट्राइक हुयी कारण उचित हो सकता है। कामगारों का समाचार डिसेन्सी का बिना विचार किये था। कामगारों का समाचार किस भाषा में आना चाहिये इस पर भी विचार करना चाहिये। यदि गाली भर कर आप कोई विचार लाना चाहेगें तो हम पूरा पढ कर उसका सारांश सही रूप में रखने की कोशिष करेंगे, किन्तु ऐसा सब अखबार के लोग नहीं करते हैं। सभ्यता की मर्यादा रख कर काम करना चाहिये। यह भी झलक पत्रों में आना चाहिये। पत्रो में शब्द सौन्दर्य भी रहे। भारतीय मजदूर संघ और कम्युनिस्ट की भाषा में अन्तर दिखना चाहिये। इतना ही नहीं इट शुड बी इन रिस्पान्सिबिल लैंग्वेज।

कारखानदार कुछ पत्रों के अन्नदाता हैं, पैसा लगाते हैं। ओन भी करते हैं पर दूसरे ऐसे भी हैं जो कैपटिलिस्ट के हाथ में तो नहीं हैं पर व्यवहार में एडवर्टाइजिंग रेव्यन्यू मिलता है। यह व्यवहार की बात है। ऐक्टिविटी के प्रकाश में हर्ज नहीं पर किस प्रकार रखना यह अखबार के दृष्टिकोन पर निर्भर करना है। क्यों कि कहीं एडवर्टाइजमेन्ट बन्द न हो जाय इस पर जनरल मैनेजर ध्यान रखता है। जनरल मैनेजर की विरोध स्थिति में किसी भी सम्पादक की कितनी ही सहानुभूति आप के साथ क्यों न हो वह नहीं कर सकेगा। सम्पादक को मैनेजमेन्ट की पॉलिसी विशेष कर के मजदूर क्षेत्र में माननी ही पड़ती है। आर्थिक स्थिती में, राजनीतिक स्थिति में, तथा फॉरेन पालिसी में वह पूर्णतया स्वतंत्र

है। श्रमिक क्षेत्र के मामले को सोच कर लिखना होता है यह एक विपरीत स्थिति हैं। यदि सोच कर काम किया तो ट्रेड यूनियन मूवमेन्ट को काफी गति मिल सकती है।

एक नारा चलता है 'वन इन्डस्ट्री वन यूनियन'। बहुत क्षेत्र में बेकिंग मिल रही है। एक मर्यादित क्षेत्र में विभिन्न यूनियनें हैं, जिन में बड़ी स्पर्धा है। वुई फेल टु अन्डर स्टैन्ड दि यूटिलिटी ऑफ सो मेनी यूनियन्स ! हमें इस मामले में बडा संदेह होता है। मजदूर चल रही यूनियन को चलाने के बजाय दूसरी क्यों बनाते हैं ? यह कन्फयूजन है– यह भी प्रसिद्धि में बाधक है। यह स्पष्ट करना भी हितकर होगा। छोटी छोटी यूनियन्स में डिमान्ड्स के प्रति स्पर्धा चिन्ताजनक है। कामगारों में स्वार्थ जगाने का भी विचार चल रहा है। कामगार का स्वार्थ सामने रख कर यूनियनें बदलती रहती हैं। इमिजिएट कुछ दिला देने वालों के पीछे मजदूर जाता है। यह मनोभूमिका ठीक नहीं है। मजदूर नेता मजदूरों की भूमिका दर्शन के आधार पर बनावें अन्यथा हितकर न होगा। फर्नेन्डीज ने रिट्रास्पेक्शन किया था। वह यह कि हमने कर्मचारियों में राष्ट्रीय भावना नहीं जगायी, स्वार्थ की लहर फैलायी है। उनका विचार महत्व का विचार लगता है।

यह तो स्पष्ट है कि 'ट्रेड यूनियन मूवमेन्ट हैज कम टु स्टे' स्थायी बन गयी है। रिक्तता न बने, स्टागोनिज्म न बने, क्युऑस न बने यह ध्यान देने की बात है। क्युऑस न बने यह विश्वास जगाने की जरूरत है। लड़ाकूपन भी शिष्ट हो। सेल्फिश मोटिव की मिलिटेन्सी देश का भला नहीं कर सकती है। कई अखबार मालिकोंके हांथ में न होकर कम्युनिस्टों के हांथ में हैं। उनकी भी अपनी नीति है। वे अपनी प्रसिद्धि उसी दृष्टि से करते हैं। अखबारों में भी पार्टीवाइज विभाजन है। कलकत्ता में लेफटिस्ट के अखबार हैं। उनकी नीति कामगारों में विघटन करती है। इससे भी सावधान रहने की आवश्यकता है।

अगर हम चाहते है कि भारतीय मजदूर संघ की एक भिन्न इमेज अखबारों में बने तो हमें बहुत कोशिष करनी होगी। यह बडा प्रयास का काम है। गन्दे प्रवाह से अपने को अलग होने के लिए मुश्किल काम है। इसके लिए हमें निम्नांकित बातों का ध्यान रखना होगा।

१) शक्ति के अनुरूप प्रसिद्धि मिलेगी। दत्तोपन्त जी ठेंगडी के कर्तव्य की शक्ति भारतीय मजदूर संघ की शक्ति है। उसी के अनुसार प्रभाव है। शेष लोंगों की प्रसिद्धि पूर्व से है। दे आर नोन पीपल इन न्यूज पेपर वर्ल्ड। जो अननोन है, शक्ति भी कम है, और उनका स्थान भी समचार पत्रों में नहीं आता है। ५०/५० साल से काम है–प्रसिद्धि है। शक्ति ऐसी होनी चाहिये जिससे अखबार की दुनिया इगनोर न कर सके। सार्वजनिक रुप से काम करने वाले लोगों का राष्ट्रजीवन पर प्रभाव पडता है।

२) कामगार क्षेत्र में पोलिटिकल पार्टीज की तरह रोज कोई न कोई घटना नहीं रहती हैं। मोका आने पर प्रसिद्धि मिलती है। ताकद बढने पर उपेक्षा नहीं होती है। भारतीय मजदूर संघ किस प्रकार अन्य श्रमिक संगठनों से भिन्न है यह बात आज लोग जानने लगे हैं। किसी समस्या के प्रति भारतीय मजदूर संघ का दृष्टिकोण क्या है ? यह लोग जानना चाहते हैं। आर्टीकल के अन्दर के विचार को स्थान मिलता है। समस्त परिस्थितियों का सही सही विश्लेषण करते हुए जो विचार राष्ट्र के लिए पोषक सिद्ध हो सकते हैं उसका अखबारों की दुनिया में बहुत बडा स्थान रहता है। इस क्षेत्र में जो अनिष्ट घटनायें घटती हैं या पता लगता है उसे इक्सपोज करनेवाली बात को भी वृत्तपत्रों में स्थान मिलता है। बंगाल में इलक्ट्रिसिटी बोर्ड की हडताल हुयी उस हडताल में विशाल पैमाने पर सॅबोटेज का काम हुआ। बडे बडे पावर प्लान्टस को गिराया गया। कलकत्ता को अव्यवस्थित करने का पूरा प्रयास किया गया। कलकत्ता और अन्य नर्व सेन्टर कब्जे में हैं या नहीं यह न्यूज लेटर सबने प्रकाशित किया। देशद्रोही तत्व सामने लाने में अखबार सहायक होंगे।

अखबारों का बहुत ज्यादा विचार करना भी अच्छा नहीं है। अखबार में स्टेटमेन्ट न्यूज, रिपोर्टस, सफलतायें आदि लोग देते हैं। हमारे लोग अखबारों के प्रति इन्डेफरेन्ट रखते है। प्रमुख अखबारों से सम्पर्क रखना जरुरी है। इन्फार्मल रिलेशन्स बनाने चाहिये। सिटी रिपोर्टर्स, इडीटर्स से सम्पर्क हो तो न्यूज आयेगी। न्यूज हर अखबार के पास भेजना चाहिये। यह कॉमन पॅब्लिसिटी पॉलिसी बनानी चाहिये। पब्लिक रिलेशन्स की दृष्टि से सम्बन्ध चाहिये।

साप्ताहिक समीक्षा छपती है। उसका उपयोग हम अपनी दृष्टि से कैसे कर सकते है। अचीवमेन्टस रखे जा सकते है बिना साइड लिए ही कार्यकर्ता का फोटो और काम दोनों अखबार के पास भेज दें। श्रमिक क्षेत्र का कन्ट्रीब्यूशन अभी पर्याप्त नहीं है।

हमारी ट्रेड यूनियन मूवमेन्ट राष्ट्रीय जागृति के भाव से किया जाना चाहिये। इमेज बदलने के लिए कम्युनिष्टों को इक्सपोज करना चाहिये तथा मजदूरों के कारण आर्थिक प्रगति में बाधा, नहीं पोषक भावना आवे ऐसा प्रयास करना चाहिये।

राची के दंगे के समय अलग मुस्लिम कॉलोनी की मांग मुस्लिम मजदूरों की ओर से आयी। नेशलल इन्टेग्रिटी होना चाहिये। कास्ट का प्रभाव इसमें नहीं होना चाहिये। इससे क्षति होगी।

घृणा के आधार पर चले आन्दोलन के आधार पर समाज में तरक्की होती है। जैलसी नहीं। स्नेहपूर्ण समाज रचना का मार्ग ट्रेड यूनियन मूवमेन्ट है। ट्रेडयू नियन के लोग अपने को प्रिविलेज-क्लास नहीं माने। सारे समाज से समरस हों तो नया इमेज बनेगा।

☆ ★ ☆

विधिमन्डलों द्वारा कामगार क्षेत्र का कार्य

—श्री. बबन कुलकर्णी

विधान सभा और विधान परिषद् तथा केन्द्र में राज्य और लोकसभा काम करती हैं जो कि वृत्तपत्रों में आप देखते हैं। कामगारों की समस्याओं के हल करने में इन संस्थाओं की क्या उपयोगिता है, यही बताने के लिए मैं यहां खड़ा हूं। शासन की राय, चाल या नीति का विवरण लेने को प्रत्येक सदस्य को अधिकार है। हम अपनी कठिनाइयों की जानकारी किस प्रकार दें इसकी जानकारी आप को हो यही बता रहा हूं।

शासनद्वारा कीए जाने वाले सारे व्यवहारों पर विधिमन्डलों के सदस्यों द्वारा अंकुश रखा जा सकता है। उसी प्रकार शासन के द्वारा उद्योग तथा कामगार विभाग का जो कार्य चलता है उसके ऊपर भी अंकुश रखा जा सकता है।

राज्यों में उद्योग सुचारू रूप से चले और मालिक व मजदूरों का सम्बन्ध बिगड़ कर औद्योगिक अशान्तता पैदा न हो यह जिम्मेदारी राज्य शासन की है। इस लिए जगह जगह पर निर्माण होनेवाले औद्योगिक विवाद (इन्डस्ट्रियल डिसप्यूट्स) हल करने के लिए राज्य सरकार द्वारा यंत्रणा निर्माण की जाती है। राज्य का **कामगार आयुक्त** तथा उसके साथ काम करने वाले सारे दफ्तरों का कार्य तथा उद्योग विनिमय केन्द्रों का 'इम्पलायमेन्ट एक्स्चेन्ञेज का' कार्य राज्योंद्वारा किए जाते हैं। ऐसे सब व्यवहारों से से सम्बन्धित कोई भी प्रश्न विधि मन्डलों में उठाया जा सकता है।

मालिक मजदूर सम्बन्ध कैसे हो, उद्योग सुचारू रूपसे बिना अनरेस्ट से चले यह राज्यों की जिम्मेवारी है। ले ऑफ होने पर कामगार बेकार होता है, उसे अेवर्ट करने का क्या यत्न किया गया है? यह सब विधायकों द्वारा प्रश्न पूछे जा सकते हैं। अभी अभी १६ सितम्बर की केन्द्रीय कर्मचारियों की हडताल हुयी। बाद में पता चला कि समय उपयुक्त नहीं चुना गया था। लोकसभा चालू रहने के समय करने से अधिक सुगमता होती। सत्रद्वारा सरकार पर भी दबाव पडता है। शासन यंत्र को चालू कराने में सत्रोंद्वारा बहुत लाभ होता है।

कभी बार अनुभव आता है कि हडताल के बाद अशान्ति, गोलीबार, उपोषण, निदर्शन आदि घटनायें विधि मन्डल सत्र चालू न रहने से शासन उसकी ओर उदासीनता की दृष्टि से देखता है। वही घटनायें विधिमन्डल सत्र चालू रहने के समय यदि होती है तो सार्वजनिक महत्व की त्वर्य घटना ' मैटर ऑफ अर्जेन्ट पब्लिक इंपॉर्न्टस ' इस रूप में शासन का ध्यानाकर्षण उसकी ओर करने की दृष्टि से विधायक बहुत सी बातें कर सकता है।

१९६३ में म्युसिपिल कारपोरेशन कामगारों की हड़ताल हुयी। बम्बयी की जनता को कष्ट हुआ। सत्र प्रारम्भ हुआ। श्री. मोहनराव गवण्डी ने इस विषय को पेश किया। जनता की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए इसे जल्दी ही १ या २ दिनों में हल किया गया। ऐसे सभी विषय विधायकों की जानकारी में देना आवश्यक है। वृत्तपत्र में भी दूसरे दिन प्रकाशित होने का लाभ होता है। ई. एस. आई. राज्यों द्वारा चलाया जाता है। बम्बई में केमिस्टस ने हड़ताल कर दी, क्यों कि वेतन भुगतान देर से होता था। प्रश्न द्वारा पेमन्टस् अप टू डेट कराये गए। इतना ही नहीं मरीज मरने के बाद तथा बच्चा पैदा होने के बाद कुटुम्ब को एलाउन्स मिलना चाहिए, यह भी मांग पूरी हुअी।

राज्योंद्वारा आरोग्य बीमा योजना का कार्य चलाया जाता है। राज्य बीमा योजना सम्बन्धी प्रश्नों को आरोग्य मंत्री के साथ उठाने के लिए विधि मन्डलों का उपयोग हो सकता है।

कामगार कल्याण विभाग (लेबर वेलफेयर डिपार्टमेन्ट) का कार्य राज्योंद्वारा चलता है। सालमें एकबार कामगार कल्याण आयुक्त द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट पर बहस होती है। उस समय इससे सम्बधित चीजों को उठाया जा सकता है।

सत्ताधारी दल अभी तक अपने दल के लोगों से सब कल्याणकारी काम कराता था किन्तु हमने इसमें कुछ अन्तर अवश्य लाया है। दबाव डालने का काम हम कर सकते है।

कामगारों के घरों की समस्या हल करना (इन्डस्ट्रियल हाउसिंग) यह भी राज्यों की जिम्मेवारी रहती है। गृहनिर्माण विभाग की समस्यायें भी विधिमन्डलोंद्वारा उठायी जा सकती हैं। श्रमिकों का वेतन यदि ५०० रु. से बढ गया तो क्वार्टर में वे रह सकते नहीं। यह आधार लेकर बम्बई में इव्हॅक्युअेशन नोटिसेज शुरू हुए। हमने इस पर प्रश्न उठा कर ५०० रु. की जो सीमा थी उसे बढ़ा कर ७५० रु. तक कराया। स्टेट अन्डरटेकिंग्स या स्टेट ओनड् कारपोरेशन के कर्मचारियों की समस्याओं से सम्बन्धित प्रश्न भी विधान मन्डलों में उठाये जा सकते हैं।

कामगार मालिक के विवाद में न्यायदान का कार्य करनेवाली न्यायपालिका का कार्य (इन्डस्ट्रियल कोर्टस) भी राज्य शासन की जिम्मेदारी है। उसके संचालन सम्बन्धी प्रश्न भी विधि मन्डलोंद्वारा उठाये जा सकते हैं। राज्योंद्वारा चलाये जानेवाले उद्योगों के सम्बंधी प्रश्न, जैसे राज्य परिवहन, राज्य विद्युत मन्डल तथा शासकीय कर्मचारियों के प्रश्न। इन प्रश्नों को विधि मन्डलोंद्वारा उठाया जा सकता है। सरकार स्वयं तो बोनस नहीं देती थी। सरकार का यह दावा था कि मालिकों को ४ प्रतिशत बोनस देना चाहिये। विद्युत परिषदों में हमने बोनस का प्रश्न उठाया और विद्युत बोर्ड के कर्मचारियों को बोनस दिलाया। सरकार का काम है कि वह बेकारों को काम दे।

हर एक राज्य की बेकारी निवारण की कुछ योजना रहती है। इन योजना के अन्तर्गत बीमार पडे हुवे उद्योगों को पुनः शुरु करने का प्रयास होता है। अमलनेर की मिलों को चालू कराया है। नगर पालिकाओं को अनुदान राज्य सरकार देती है। उस सम्बन्धी प्रश्न भी यहा उठाए जा सकते हैं।

विविध मन्डलों में कामगारों के खास करके मजदूर के द्वारा संघटित किए जाने वाले कामगारों के प्रश्न उठाने में हमारे विधायक हमेशा रस लेते हैं। प्रश्न अपने ही लोग उठावे इसका महत्व है। पहले प्रस्ताव का महत्व होता है। संस्थाओं को उसका लाभ मिलता है। क्योंकि विधि मन्डल में अन्यान्य राजनीतिक पक्षों के विधायक होते हैं। प्रश्न उठाने में होड सी लगी हुयी रहती है। इस होड में हम आगे रहे तथा आपके प्रश्न भी हल होने में मदद हो इसलिए कुछ बातों की जानकारी आपको होना आवश्यक है।

यह प्रमुख बातें इस प्रकार हैं।

१. पत्र : पत्र दो प्रकार से लिखे जा सकते हैं।

अ) **स्वयं व्दारा :** इस प्रकार के पत्रों का प्रभाव कम होता है।

ब) **विधायक व्दारा :** इस प्रकार के लिखे पत्रों का प्रभाव ज्यादा होता है और उत्तर जल्दी मिलता है।

२. **प्रश्न** : यह तीन प्रकार के होते हैं।

अ) **अतारांकित** : इस प्रकार के प्रश्नों पर चर्चा नहीं होती हैं केवल जानकारी मिलती है।

ब) **तारांकित** : इस प्रश्न पर बहस की जाती है। प्रतिदिन विधायक ३ प्रश्न पूंछ सकता है। लोकसभा में १० दिन तथा विधान मंडल में ४५ दिन पूर्व प्रश्न भेजना आवश्यक होता है।

क) **अल्पावधि** : अत्यन्त आवश्यक प्रश्न सात दिन की सुचना पर पूछे जाते हैं, जिसे अल्पावधि सूचना के प्रश्न कहते हैं। इनका उत्तर २ या ३ दिन में मिलता है।

३. **चर्चा** : प्रश्नों के उत्तरों पर अन्तरभूत विषयपर आधा घन्टा चर्चा के लिए मिलता है।

४. **ध्यानाकर्ष प्रस्ताव** : ध्यानाकर्षण में मंत्री को १ दिन की सुचना पर उत्तर देना पडता है।

५. **अल्पकालीन चर्चा** : दो या तीन घन्टे बहस होती है। उत्तर प्राप्त किया जाता। है जैसे राज्यों में बढती औद्योगिक अशान्ति, विद्युत वितरण मंडल, राज्य कर्मचारियों से सम्बन्धित समस्या पर चर्चा की जा सकती है।

६. **अनियत दिन प्रस्ताव** :

७. **समिति नियुक्ती का प्रस्ताव** : महिला कर्मचारी, नर्स, शिक्षिका, प्लानिंग, आदि के अन्दर काम करने वालों के सम्बन्ध में भी प्रश्न उठाया जा सकता है। समिति नियुक्ति की मांग करके इसकी जांच कराये जाने सम्बन्धी मांग रखने का प्रश्न लेकर प्रस्ताव किया जा सकता है। असुरक्षित कर्मचारियों के सम्बन्ध में, मिनिमम वेजेस एक्ट के सम्बन्ध में हम समिति गठित कर के सम्बन्ध में प्रस्ताव ला सकते हैं।

८. **सभा स्थगत प्रस्ताव** :

९. **अविश्वास निदर्शक प्रस्ताव** :

१०. **हक्क भंग प्रस्ताव** :

११. **कपात सुचना** :

१२. **अर्थसंकल्पीय अधिवेशन का महत्व** : बजट अधिवेशन बडा ही महत्वपूर्ण होता है।

अर्थसंकल्पीय मामलों की जानकारी यदि अपने विधायकों को हो, दिसम्बर में या जनवरी में ऐसे प्रश्न यदि अपने लोगों को मिलते हैं तो अनेक मामलों में हम यशस्वी सिद्ध हो सकते हैं।

★

मजदूर आन्दोलन

श्री. रमण शहा

राष्ट्रका अेक अंग अिस नातेसे मजदूर जीवन सुखी और समृद्ध हो यह लक्ष। व्यक्तीगत और सामुहिक न्याय्य मांगोंको हांसील करना। दो प्रकारसे हो सकता। समझोतेसे, संघर्षसे। इंटक जैसे हम समन्वयवादी नहीं और कम्युनिस्टोंके आयटक जैसे हम संघर्षवादी भी नहीं। कामगारके हितमें समन्वयकी क्षमता रखते हैं। स्वार्थी, समाजहित राष्ट्रहित विरोधी–मालिकोंके खिलाफ संघर्ष करनेमें हम संघर्षवादी कम्युनिस्टोंसेभी अधिक क्षमता रखते हैं।

संघर्ष याने केवल हडताळ नहीं। बेमुदत हडताळ यह संघर्षका आखरी स्वरुप है। सभा–द्वारसभा–निदर्शन–कालाफीत निदर्शन–मोर्चा–अनशन–सामुहिक अनशन–नियमानुसार काम–हत्यार रखकर बैठा हडताळ, लाक्षणिक हडताळ बेमुदत हडताळ यह सब आन्दोलनोंके तरीके हैं।

हडताळ के पहले सोचना चाहिये की कौनसी मांगे–व्यक्तीगत या सामुहिक, एक दुसरेके विरोधमें नही हैं। हडताळ करनेकी ताकद न हो तो ताकद जमाने या ध्यान आकृष्ट करनेके लिये भूक हडताळ। हडताळ वापस कैसा लेनेका अिसका आरंभमेंही विचार। कारण मजदूर पक्ष अपने देशमें कमजोर हैं। आकस्मित हडताळ–घेराव यह अपवादात्मक हो सकते। '–फुत्कार कर–दंश मत कर–'। अिस न्यायसे हडताळ होकर जो प्राप्त होनेवाला है वह हडतालके वातावरणसे यदी प्राप्त हुवा तो बहुतही अच्छा।

समुद्रमंथनसे प्रथम विष प्राप्त, बादमें अमृत। अुस मुताबिक हडताळ कभी कभी बुराअीओंको दूर करके उत्पादनके लिये अच्छा वायुमण्डल निर्माण करनेके लिये भी आवश्यक रहता है।

मालिक चाहे तब हडताळ नही, हम चाहे तब हडताळ। कच्चा मालकी कमी, माल को मांग नहीं–माल का अधिक संग्रह ऐसे समय हडताळ नहीं। एक दुसरेसे संपर्कमे है। कार्यकर्ता सक्रीय है। कामगारोंकी पुरी सम्मती है। आवश्यक नोटीस दी गयी है। पगार हाथ में आ चुका है। समझोतेके सब रास्ते अपनाये हैं। प्रमुख खाताके (Key Departments) १००% कामगार तय्यार हैं, ऐसे समय हडताळ ठीक रहेगा।

हडताळमें हरदिन एकत्रित आना, नारे लगाना (जहाँतक हो सके व्यक्तीगत नारें न लगे, असका स्तर अूचा रहे) सभायें लेना–मोर्चा निकालना। पत्रक बाटना। वर्तमान पत्रमें वृत्त आना ऐसा प्रयत्न रहें।

कामपर जानेवालेको जिस भाषामें वे समझे अुस भाषामें समझाकर कामपर न जानेके लिये समझाना।

हिंसाका अवलंब न करना। प्रति पक्षके हिंसाको रोकना। हिंसाका मर्यादातिक्रमणसे नुकसान।

पोलिस डिपार्टमेंट को उचित जानकारी देना। प्रतिपक्षके गुंडागिरीके कारण मारपीट। परिणाम स्वरुप गिरफ्तारीयाँ। जमानत देकर रिहाँ करनेकी व्यवस्था। कोर्ट में केस चलानेकी भी व्यवस्था हो।

हडताळके समय भी बातचीत जहांतक हो सके चालू रखना, खिचातानीमें टूटनेकी सम्भव, आतेही समझोता करना ठीक। वह समझोता प्राप्त परिस्थितीमें बहुतही अच्छा है यह समझानेकी क्षमता हो। नही तो जो मिलता था वह भी गुमानेकी पाली आ सकती है। पगारका नुकसान–कभीं कामगारोंकी बडतर्फीयाँ, अल्पसे अधिक। हडताल टूट जाय इससे पहले कोई बहानेसे वह वापस लेना ठीक। उस समय भले एक भी मांग मान्य नहीं की जाय, भविष्यमें मालिक हरताळकी नोटीस आतेही विचार करना प्रारंभ करेगा। आन्दोलन न करके लाभ। ताकद रखकर हम हडताल वापस लेंगे तभी यह संभव।

आन्दोलनमें कार्यकर्ता विशेशतः नेताओंके भाषण खास महत्व रखते हैं। अवसर पर भाषणके लिये वक्तृत्वकला अवगत कराने की आवश्यकता है। जन्मतः प्राप्त हो ठीकही है। परीश्रमसे हांशील कर सकते है। आत्यंतिक इच्छा, ध्येयनिष्ठा–वही जीवननिष्ठा–उसके लिये भाषण–शास्त्र कला इससे परिपूर्ण न होते भी परीणाम करता है। निष्ठावान व्यक्ती प्रलोभनसे, दबावसे वक्तृत्व शक्तीका विक्रय नही करता। प्रारंभमें भय–वह सफलतामें बाधक नही बल्की पोषक है। भयपर विजय प्राप्त करनेके लिये प्रतिपाद्य विषयका ज्ञान, विषयसंबंधी अपने मतपर दृढविश्वास–खुदका चारित्र संपन्न व्यवहार–वगैरे बातोंका काफी उपयोग होता है।

साथ साथ भयके अभावात्मक भावका सतत अभिनय, यशस्वी वक्तृत्वका मनश्चित्र। द्वारसभा में प्रमुख विषय–विरोधके बावजूत भी भाषण जारी रखना।

★

यूनियन व महासंघ का संघटन तथा उनकी गतिविधि

श्री. रामनरेश सिंहजी

कार्यालय : नित्य व समय पर खुले, योग्य कार्यकर्ता उपस्थित रहकर मार्गदर्शन करें। कार्यालय स्वच्छ व आकर्षक रहे। यूनियन का नामपट व सम्बंध, महासंघ का उसमें अवश्य उल्लेख हो। कानूनी व सैद्धान्तिक (मा. म. संघ की) पुस्तकें रहें। यूनियन व महासंघ के रजिस्टर, फाइलें तथा अन्य सभी कागजात व्यवस्थित रखी हो।

यूनियन के रजिस्टर व अन्य कागजात—

रजिस्टर—१) सूचना पंजी, २) कार्यवाही पंजी, ३) सदस्यता पंजी, ४) रोकड वही, ५) खाता वही।

फाइलें--१) सदस्यता आवेदन पत्र, २) व्यय पत्र (Vouchers), ३) रजिस्टर, ४) क्षमायुक्त, ५) अन्य श्रम विभाग, ६) पत्रक (महासंघ से आये हुये), ७) पर्चे, ८) विवाद, ९) समाचार की कटिंग, १०) **सदस्यता रसीद बुक।**

महासंघ के रजिस्टर व अन्य कागजात

रजिस्टर —१) सूचना पंजी, २) कार्यवाही पंजी–अ) प्रतिनिधि सभा, ब) कार्यसमिति, ३) सम्बंधता पंजी, ४) प्रतिनिधि पंजी, ५) यूनियनों की कार्य समितियाँ, ६) रोकड वही, ७) खाता वही, ८) यूनियनोंके पते, ९) अन्य यूनियनों व महासंघोंसे पत्र व्यवहार।

फायलें—१) मान्यता सम्बन्धी (श्रमायुक्त), २) सम्बद्धता आवेदन पत्र, ३) प्रत्येक विभागकी अलग २ फाइलें (पत्र व्यवहार की), ४) व्यय पत्र (Vouchers), ५) प्रान्तके पत्रक, ६) केन्द्रसे आये हुये पत्रक।

अन्य —१) सम्बद्धता शुल्ककी रसीदें, २) अन्य सहायता व निधिसंग्रहकी रसीदें

यूनियन का रजिस्ट्रेशन विधि

सुचना देकर आम मजदूरों की सभा बुलाना। यूनियन का नाम निश्चित करना। यूनियनके विधान बनाने के लिये समिति बनाना। विधान पारित करना। सदस्यता आवेदन पत्र व रसीद छपाकर सदस्य बनने का आवाहन करना। बने हुये सदस्योंकी सभा बुलाकर ७ सदस्योंको यूनियन के रजिस्ट्रेशन हेतु आवेदन करने के लिये चुनना। उसी सभामें कार्यसमितिका चुनाव करना।

अुक्त रुपये शुल्क के साथ यूनियनके विधान की प्रतिलिपि, उक्तकार्यवाही की प्रतिलिपि, कार्य समितिकी नामावली और विधानकी धाराओंकी संख्याका उल्लेख, आय व्यय का लेखा जोखा, रसीद का एक पन्ना, सदस्यता आवेदन पत्र का एक पन्ना ७ हस्ताक्षर-कर्ताओंके आवेदन पत्रके साथ रजिस्टार के यहां जमा कर देना चाहिये। वे जाँच करके यूनियनको रजिस्टर कर देंगे।

महासंघकी मान्यता विधि (उत्तर प्रदेश)

दो या दोंसे अधिक रजिस्टर्ड ट्रेड यूनियनोंके प्रतिनिधियोंकी आम सभामें महासंघके निर्माण का निश्चय करना। विधान पारित करना। कार्यसमितिका चुनाव करना।

श्रमायुक्तके पास आवेदन पत्रके साथ मान्यताके लिये निम्नलिखित कागजात प्रस्तुत करना चाहिये—

१) विधान की प्रतिलिपि,

२) प्रथम सभामें भाग लेनेवाले प्रतिनिधियोंकी नामावली तथा सम्बंधित यूनियनोंकी सूची।

३) कार्यसमितिकी सूची।

४) सम्बद्ध यूनियनोंकी सूची।

५) प्रथम कार्यवाही की प्रतिलिपि।

यूनियन व महासंघकी गतिविधि

समस्याओंका निराकरण। समस्याओंको उठाना। संगठन–सदस्यता, द्वार सभायें, कार्यसमितिकी बैठक, आम सदस्योंकी बैठक, ट्रिप का आयोजन, विवादको हल करने के लिये-आपसी वार्ता अथवा कानूनी कार्यवाही। आन्दोलन, प्रदर्शन व हड़ताल, कार्यकर्ताओंको ट्रेड युनियनकी सही दिशा देने व जानकारी देनेके लिये शिक्षावर्गका आयोजन। मजदूरोंके लिये कल्याणकारी कार्योंकी रचना, प्रचार–सभा व पर्चे तथा अखबार आदिका अवलम्बन। युनियन कोषके लिये सदस्यताके अतिरिक्त धनसंग्रह।

संपर्क–अन्य ट्रेड युनियन नेताओंसे, श्रमाधिकारिओंसे, व्यवस्थापक वर्गसे। मजदूर कॉलोनी, प्रेस से।

युनियनमें कार्यकर्ता वर्ग (Working group) के निर्माण का प्रयास।

स्वार्थ पूर्तीके लिये युनियन नहीं अपितु सैद्धान्तिक भूमिका देकर, राष्ट्रभाव जागृति करते हुये मजदूर संघ वृत्ति उत्पन्न करना अपना आखिरी उद्देश्य है यह सामने रखना।

अन्य युनियनोंके कार्य की जानकारी रखकर तुलनात्मक विवेचन। महत्वपूर्ण उद्योगोंमें युनियन खडी करनेका प्रयास। प्रतिवर्ष एकबार धनसंग्रहके लिये पूर्ण कोशिश। आय व्यय का विधिवत निरीक्षण, कोषको युनियन अथवा महासंघके नामसे बैंकमें अवश्य जमा करें।

❋

संगठन तंत्र

मा. मोरोपन्त पिंगले

भारतीय मजदूर संघ का जो काम चला है, उसके विभिन्न पहलुओं का ज्ञान मुझे नहीं है। ठेंगडी जी से परिचय के कारण कुछ पता लगता रहता है। इससे एक बात तो स्पष्ट है कि कार्य की प्रगति हो रही है और श्रमिक संगठन के नाते भारतीय मजदूर संघ इस देश में महत्व प्राप्त करता जा रहा है। आपको इस काम में यदि मैं सहयोग दे सका तो अच्छा होगा। इस क्षेत्र में अपने कार्यकर्ता मन लगा कर कार्य कर रहे हैं- यह आनन्द की बात है- स्वाभाविक भी है। मुझे जब संगठन के विषय पर कहने के लिए कहा गया तो मुझे भी आनंद हुआ। संगठन का विषय संघके कार्यकर्ता के लिए तो वैसे भी आनन्द का विषय है। देशमें कुछ बिना संगठन के भी लोग सफल हुये दिखायी देते हैं। कभी कभी लगता है कि संगठन की कोई जरूरत नहीं। व्यक्तित्व खड़ा हो जाय बस पर्याप्त है। समस्या का सभी दूर वातावरण बन जाता है। व्यक्ति के नाम के सहारे भी काम होता है, पर यह सच नहीं है। हां यह जरूरी है पर पर्याप्त नहीं। एक व्यक्ति के चारों तरफ तमाम बातें खड़ी हो जाती हैं—यह अच्छी बात नहीं है और अगर अच्छी बात हो तो भी स्थान स्थान पर अपने लोग हैं, परन्तु केवल इससे काम नहीं बनेगा। समय बीतने पर उस व्यक्ति का स्थान और नाम समाप्त हो जाता है। उस समय पुनः समस्या खडी हो जायगी। किसी विशेष समस्या को लेकर या व्यक्ति विशेष के पीछे काम करने का तरीका टिकाऊ नहीं है। एक देशव्यापी सुदृढ़ संगठन खडा करना किसी भी संस्था के लिये बहुत आवश्यक है। देशव्यापी संघटन खडा करने की आ श्यकता कब होती है इसी विषय पर आज मैं कहूंगा। अन्य बातों पर तो आप विचार कर ही रहे हैं। हर क्षेत्र में जो विचार चल रहे हैं उनके विषय में भी सोचना पडेगा। राष्ट्रवाद के बारेमें कोई नहीं सोचता क्योंकि यह चल पडा है। समाजवाद के बारे में भी कोई सोचने को तैयार नहीं है। व्यक्ति के पास की सम्मत्ति किसी न किसी के पास की छीनी गयी सम्मत्ति है। कुवां कहीं बनता है तो निश्चित है कि वहां की मिट्टी कहीं उठ कर गयी है और वहां पहाड बना है। कुछ सिद्धान्त प्रस्थापित हो गये हैं। संस्थाओं को भी प्रस्थापित सिद्धान्तों को हाथ लगा कर देखना चाहिये कि क्या वह ठीक है। इस क्षेत्र में भी परिचित लोग हैं। वे पर्याप्त कुशल हैं, चिन्ता करने की बात नहीं है। देशव्यापी संगठन खड़ा हो यह जरूरी

है, तभी भारतीय मजदूर संघ की सफलता है। यह सरल नहीं है पर यह बात यदि समझमें आ गयी तो सारा काम बन जायगा।

देशव्यापी संगठन खड़ा हो– कैसे खड़ा हो? इसके लिए तत्वज्ञान चाहिये। कार्यक्रम के बारे में कोई रुटीन चाहिये तभी संगठन हो सकेगा। रोज का झगड़ा जरूरी है। यह रुटीन नाम की जो चीज है इससे दुनिया में किसी को फुर्सत नहीं। घर पर भी छुट्टी नहीं। धन्धा भी नहीं चल सकता है। रुटीन भी रोज नया नहीं हो सकता, उसे नया नाम देना होगा। दुकानदार ग्राहक का नित्य सौं बार स्वागत करता है। इसी से दुकानदार का काम बढ़ता जाता है। यही रुटीन पीढी दर पीढी चलता रहता है। बहुत बडा काम करने वाले को भी इस रुटीन से फुरसत नहीं। अन्तरिक्ष यात्री यूरी गागरिन का ही एक उदाहरण है। उसने पहली बार इस दुनियासे दूर जाकर अन्तरिक्ष की यात्रा की। लौट कर आया। मास्कों में उसका भव्य स्वागत हुआ। स्वागत के बाद वह घर गया। घर पर भी उसे उसी स्वागत की धुन सवार थी। किन्तु पत्नी ने घर की बातें कहनी शुरू की। बच्चे की किताबों का झोला सिलाने को कहा। बाकी घर के सब काम शुरू हो गये। महान कार्य तो जीवन में एक बार शेष जीवन तो उसी रुटीन में बीतता है। तंग करने वाली बात है। जुलूस, सभामें तो आनन्द आता हैं, रुटीन में नहीं।

एक आदमी ने एक राक्षस नोकर रखा था। वह सारा काम ५ मिनट में कर डालता था। मालिक उसे काम न बताये तो राक्षस उसे ही खा जाय। जो भी काम बताया २ मिनट में करके फिर खाने को तैयार! मालिक ने फिर उसे कुत्ते की दुम सीधी करने को कहा। वह दुम सीधी करने में लग गया। दुम बार बार सीधी करता वह काहे को सीधी हो! क्यों कि वह ठहरी कुत्ते की दुम। मालिक भी अब अपने को खाये जाने के भय से मुक्ति पाकर बीच बीच में काम बता देता था। जब मालिक के पास काम न रहे तो फिर वही दुम सीधी करने का काम। बीच का समय कैसे कटे? इसकी बडी आवश्यता होती है। रोज करने वाले रुटीन के कारण ही संगठन खडा होता है। कभी कभी के कामों से नहीं। बिना रुटीन के इस दुनिया में कोई काम नहीं हो सकता है। कार्यक्रमों का सहारा लिए बिना साधारण कार्यकर्ता बडे बडे काम नहीं खडे कर सकते हैं। रुटीन कार्यक्रमों की आवश्यकता है। उसके प्रति रुचि उत्पन्न करनी होगी। वास्तव में कार्यक्रमों से ही संगठन खडा होगा। कार्य की दृष्टि से अन्य कार्यक्रम रखे जाते हैं। कार्यक्रमों का एक उद्देश्य है, कार्यकर्ताओं का परस्पर निकट सम्बन्ध आये। कार्यकर्ता का बाहर के लोगोंसे सम्बन्ध आये। फिर कार्यक्रम का उद्देश्य भी समझना चाहिये। शक्ति बहुत होने पर भी कार्यक्रम के बिना प्रगट नहीं होती है।

एक मानिक पहलवान थे। बहुत डरपोक थे। खासकर अंधेरे से तथा अन्धेरी रात से। गांव के पटेलने बुलाया और कहा कि पत्र पडोस के गांव में पहुंचा आओ। पटेल ने

तारीफ से कहा। मानिक पहलवान ने सुना, लेकिन अन्धेरे का ख्याल आया। ना कहने की गुंजाइश नहीं, बात पटेल ने कही थी। बाहर आये। खीसे में एक पैसा नहीं था। धडकन के साथ चले। रास्ते में घबराये। सकरे रास्ते के मध्य में तीन चोर मिले। मानिक पहलवान घबराये। चोर भी मानिक पहलवान का नाम सुन घबराये। चोरों के मन में मानिक पहलवान को ठीक करने की बात आयी। खीसे में पैसे तो थे नहीं, केवल बेइज्जती करना था। चोरों ने पहलवान से कपडे उतारने की बात कही। पहलवान ने कपडे उतार दिये। जरा उत्साह वाला चोर था। पूरी बेइज्जती करने के लिये चोरों ने पहलवान से कहा कि पहलवान लंगोटा उतारों। पहलवान ने शर्म के मारे लंगोटा नहीं उतारा। चोरों ने लंगोटा उतारने के लिए लंगोट को हाथ लगाया। लंगोट में हाथ लगते ही मानिक के अन्दरका पहलवान जागा। फिर क्या था। मार पडी, चोर भाग खडे हुये।

अन्दर की शक्ति को जगाने के लिए हरबार लंगोट में हाथ लगाना पड़ेगा ? क्या तभी उठेंगे ? ठेंगड़ी जी क्या सब के लंगोट में हाथ डालेंगे ? योजना या कार्यक्रम के बिना कोई कार्यकर्ता काम नहीं करेगा क्या ? कार्यक्रम का उद्देश्य तो है पर आदत कार्यकर्ता स्वयं नहीं लगायेगा ? शिक्षा मिले, महत्व ध्यान में आवे। बिना कार्यक्रम तो कुछ हो ही नहीं सकता है। एक यूनियन का कार्यकर्ता स्वयं कार्यक्रम रखे। कार्यक्रम के उद्देश्य भी सफल हों और कार्यकर्ता की योग्यता भी बढे। बिना इसके साथ काम नहीं कर सकते ? बिना इसके किसी तत्वज्ञान के सहारे भी सारे जीवन काम नहीं हो सकता है। कार्यकर्ताओं में आपस में व्यक्तिगत प्रेम नहीं है तो संस्था के प्रेम से तत्वज्ञान के सहारे जीवन भर काम नहीं कर सकेंगे। देशप्रेम में प्रेरणा है, पर व्यक्तिगत सम्बन्ध सहवास में है। हम साथी केवल संस्था के कार्यक्रमों में ही नहीं-जीवन साथी बने। व्यक्तिगत सम्बन्ध के बिना एक दूसरे के साथ विश्वास और प्रेम का सम्बन्ध नहीं बनेगा। जीवन का कोई पहलू एक दूसरे से छिपा न रहे तो एक दूसरे के प्रति पूरा विश्वास जागेगा। केवल देशप्रेम अधिक दिन तक साथ देने वाला नहीं है, व्यक्तिगत विश्वास जरुरी है। कार्यक्रमों का यही उद्देश्य है। संगठन के लिये बहुत जरुरी है। देशव्यापी संगठन खड़ा करना है। प्रतिकूलता रहने पर भी उद्देश्य को पूरा करना है। अनुकूल परिस्थिति में तो लोग साथ देते हैं पर प्रतिकूल परिस्थिति म कोई भी साथ नहीं देता है-जब कि दोनों ही परिस्थियों में देना चाहिये। जीत में वाह वाह हो और विपरीत परिस्थितियों में जब हमारी ऊपर सारी दुनिया टूट रही तो यह आवश्यक है कि हमारे व्यक्तिगत सम्बन्ध निर्माण हो। व्यक्तिगत सम्बन्ध में दरार उत्पन्न नहीं होनी चाहिये। इसके अभाव में कोई भी संगटण नहीं चल सकेगा। कार्यकर्ताओं के आसपास का सम्बन्ध तथा व्यक्तिगत सम्बन्ध अच्छा होना चाहिये। व्यक्तिगत सम्बन्ध एक प्रमुख आधार हैं, उसे सुदृढ बनाना चाहिये। इस पर विशाल संगठन खड़ा कर सकेंगे।

❊ ❊

A Note on Co–operation

Shri **M. H. Godbole,**
Director.
Urban Co–op. Bank Ltd. Sangli.

The modern concept of a Co-operative Society, is a From of Business Organization. Just as Individual, (we in Bharat have a joint and undivided Hindu family) a partnership of two or more individuals but upto twenty only a Joint Stock Company private or public limited or unlimited. Then came to be recognized a Co–operative Society also.

The basic idea is of self–dependence, thrift and mutual help. In Great Briton, it were the factory workers the Rochdale poineers. They started the British Consumers movement. Which has continuous and progressive history of about a hundred and fifty years. The labour organization in Briton is of mixed type of Trade Unions and Coop. Society. In Germany the rural credit co-operative and in Italy the Urban section got prominance and developed.

In Bharat, the then British Rulers thought it advisable to usher in the Co–operative Credit Societies of Rural

cultivators about seventy five years back. It was a paliative to the poverty stricken agrarian unrest. The Central Govt. passed a law for formation and giving legal protection to Co-operative Societies in the year 1904. Later on the law was revised in 1912; still later the making of co-operative laws were delegated to then provincial Governments now the State Governments. The Bombay State; now the Maharashtra and Gujarat States have been always abreast in keeping the Co-operative law progressive to suit the need of the growing types of Co-operative Societies.

A Co-operative Society essentially a democratic organization. Here, we have one vote to every member, irrespective of the shares he holds or the capital he has invested. It is unlike a Joint Stock Company. In co-operatives, profit earning is not the dominant motive. But as a business proposition we must run them in profit. It has moral side, it is to elevate the poorer sections into well to do. It helps to remove poverty.

In Bharat, we started with the village co-operative credit with unlimited liabilty. So we laid stres on rural credit only. But with the growth of the village societies, it was thought fit to start Urban Societies or Banks, where deposits could be collected, and those funds could be supplied to the village Societies. To improve the working of the Societies with regard to the records the accounts, the execution of documents, the proceedings, minutes of the committee of Management the annual meeting; federal societies came into existence as Supervising Unions. Later on Central co-op. Banks were established with main function of supplyiug funds to the village

credit societies. For the propogation of Co-operative-ideology; for giving co-operative education, co-operative Instititutes were formed at the State level. The State Co-operative or Apex Banks began to grow and they have become the heart of the co-operative Organizations. The agriculturist had great difficulty of Marketting his produce. He was exploited by commercial interests. Hence naturally great need was felt of Marketting Societies. In the Urban Sector we had the salary earners co-op societies and Urban Banks, which were growing in strength. Thus a co-operative sector was taking shape in the over-all economy of the nation.

After we won our independence albit of a trunketted Bharat, Co-operation got great importance. Under the auspacies of the Reserve Bank; Rural Credit Survey was carried. The Report of the same is a great landmark in the Co-op. History. It had to be sadly observed, that in spite of over forty years of the co-operatives, co-operation had miserbly failed. But it was further observed that **but co-operation must succeed**.

A nationwide plan of covering the entire village of Bharat with viable co-operatives was recommended. The Reserve Bank under, a statutory responsibility of providing credit to the nation's prime business of agrculture must have some strong agency to reach the village farmer. A three tier system was evolved. A primary Society at the village base with one Central Co-operative Bank as a federal body at the District level, as the second step; and one State Co-operative Bank at the Apex or third rung in the ladder. To make the institutions strong and viable,

with sufficient borrowing power state-partnership and participation in the share capital of the Co-op. was introduced. During this long period we are now nearing completion of this basic three tier organism. And Reserve Bank Agricultural Credit can flow to the individual agricultural producer. The credit given was to be recovered through marketting or processing. Thus along with crop loan system, linking of credit with marketting or processing was tried to be effected. It is yet in a weak stage.

Although the co-operative structure must be one intigrated whole, the study of Urban Credit lagged behind. Consequently, there has yet to be a smooth and happy fussion of the two streams.

For the sake of understanding let us try to analyse. One broad line of demarkation would be the credit or resource Societies and others. Such as the consumer or processing or Marketting and so on, in the second category. In logical dycotomy system.

Next would be the Rural or agricultural societies, and the Urban or non agricultural ones such as Urban Banks, consumer and industrial societies.

We have another way of looking. Co-operatives of producers and those of consumers, and third class of distributive or marketting; as we have the three stages of production, distribution and consumption of wealth and services.

In present stage of co-operation in Bharat we have a stronger producer's wing as contra-distinguished from the

very weak consumers wing. Every human being. every one of us is a consumer. But the class of producers though much smaller is getting better organized. We have in the country the producer's or seller's market. We as consumers are more or less at their mercy.

We very broadly say that there is a private sector and a public sector in the nation's economy. Similiarly we generalize as capitalist society of free economy and a Communistic Society of Socialistic Regimentation. But we must realize and strengthen the Co--operative economy. The third and middle way, a golden mean.

For co-operative education, and propoganda publicity we have 1) The District Co-op. Boards, 2) The Divisional Board, 3) The state Co-op. Union and 4) The national Co-op. Union.

For credit or resource, we have 1) the village primary, 2) the district Central co-op. Banks and 3) Apex Co-op. Bank at thc Stae level. The State co-op. Banks have now formed a federation at the National level. The Urban Co-op. Banks are the primaries in Urban area. It is proposed to have National Federation of Urban Banks.

For consumers we have, 1) the Primary societies. Under the threat posed by Mao's China, 2) the whole-sale consumer co-operatives centrally sponsered were organized. The whole salers are now extended to cover district areas. We have, 3) State level federations in some states and 4) a National federations of consumers. But by and large the consumer co-op. are a very weak structure.

Similarly for marketting of agricultural produce there are societies at Tahasil level and then a Dist. Sale